ही यह वाद्य भी तत से पृथक एक उप-विभागीय आवश्यकता को प्रकट करेगा और इन वाद्यों को तरंग श्रेणी में ले जाने के लिए प्रेरित भी करेगा ।

तरंग रूप की कल्पना सुषिर वाद्यों में करने की संभावना संभवतया नहीं है । क्योंकि फूत्कार का प्रयोग श्रृंखला बद्ध वाद्य रूपों में किया जाना संभव नहीं है । फिर भी लोक वाद्यों में सुषिरात्मक उन बांसुरियों का उल्लेख मात्र देना आवश्यक है जो त्रिपुरा-मणिपुर एवं उड़ीसा की कुछ जन-जातियों में प्रचलित हैं । एक एक बांसुरी पर केवल एक एक स्वर होता है और तीन बांसुरियां विभिन्न स्वरों की होती हैं और उन्हें तीन भिन्न वादक क्रमागत अथवा अलंकारों के रूप में बजाते हैं । इस वाद्य का प्रयोग सामूहिक लोक - नृत्य के साथ किया जाता है जिसमें बीसों व्यक्ति भाग लेते हैं और हर एक के पास ऐसी एक एक बांसुरी होती है । इन बांसुरियों के अतिरिक्त ऐसा अन्य वाद्य अभी तक जानकारी में नहीं आया । इन बांसुरियों के प्रयोग को भी 'तरंग' श्रेणी में लेना, संभवतया विचारणीय है ।

श्री मण्डल वाद्य की व्याख्या के पूर्व वाद्य के तरंग-रूपों पर लिखा जाना आवश्यक था क्योंकि संभवतया यह एक ही वाद्य है जो न केवल राजस्थान में अपितु संपूर्ण भारत में 'तरंग' नामक संगीत वाद्य के रूप में प्राप्य है ।

मैंने श्री मण्डल का प्रयोग जोधपुर नगर में विवाहों एवं जुलूसों के अवसर पर निकाले जाने वाले बेंडों के साथ देखा । उसका स्वरूप एवं वादन विधान देखकर वर्षों तक यही महसूस होता रहा कि जिस प्रकार हमारे भारतीय बेंडों में पश्चिमीय ब्रास वाद्य, क्लेरियोनेट, विभिन्न प्रकार के ड्रम एवं बेग-पाइप्स प्रवेश कर गये हैं, उसी प्रकार यह वाद्य भी अनुकरण के आधार पर स्वीकार कर लिया गया होगा । कभी यह अंदाज नहीं हुआ कि यह लोक-वाद्यों के रूप में लिया जा सकता है ।

लेकिन धीरे धीरे उसके रूप को समझने का प्रयत्न करते हुए यह प्रेरणा निश्चय रूप से हुई कि राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में इसका प्रयोग देखा जाय । राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र [विशेषकर चितौड़ एवं सादड़ी के निकटवर्तीय गांवों में] में इसका प्रयोग मिला । लेकिन इस क्षेत्र में इस वाद्य का प्रयोग स्वतंत्र रूप से अथवा ढोल आदि के साथ ही मिला । इधर श्री मण्डल का प्रचुर प्रयोग शेखावाटी एवं अलवर के क्षेत्र में किया जाता है । विवाहों एवं अन्य मांगलिक अवसरों के जुलुसों में यह वाद्य निश्चय ही प्रयोग में लिया जा रहा है ।

फिर यह देखने का प्रयास किया कि वस्तुतः इस वाद्य का निर्माण कहां किया जाता है अथवा वाद्य - वादक कहां से स्वरों पर निर्मित घण्टों या झालरों को प्राप्त करते हैं । पता लगा कि बीकानेर क्षेत्र के चुरू नगर के निकट छापर नामक गांव में कांसी की झालरों को

ढाला जाता है। छापर में कांसी के कार्य की काफी प्राचीन परम्परा भी प्राप्त हुई। वाद्य की वर्तमान स्थिति व इसे बनाने वालों की जानकारी से पूर्णतया आश्वस्त तो होना पड़ा कि यह वाद्य निपट रूप से भारतीय संगीत परम्परा का ही एक उदाहरण है।

परन्तु, दूसरी समस्या यह रही कि बोलचाल की भाषा में इसे अब 'घण्टी बाजे' के नाम से अभिहित किया जाता है जो विभिन्न घण्टियों [झालरों] के बद्ध होने के कारण स्वीकृत हो गया है। कुछ ही गांवों में मैंने इसका नाम 'सरमंडल' अथवा 'सिरी मंडल' सुना। वाद्य को नामांकित करने के पूर्व यह देख लेना भी आवश्यक बन गया कि वाद्य के वर्णनात्मक नाम को स्वीकार किया जाय अथवा उसके वास्तविक नाम का स्थिरीकरण किया जाये।

भारतीय संगीत ग्रंथों में श्री मंडल नामक स्वरात्मक वाद्य का उल्लेख प्राप्त नहीं होता। लेकिन राजस्थान के मध्ययुगीन साहित्य में जहां जहां संगीत वाद्यों के वर्णन हैं, उन्हें गहराई से देखने पर श्री मंडल का नाम मिलना प्रारंभ हुआ। इस वाद्य का नाम मुख्यतया मांगलिक अथवा आनंदोत्सव के वर्णनों के साथ ही यदा कदा प्राप्त होता रहा। इसी प्रकार जहां जहां 'छत्तीस वाद्यों या वादित्र' के नाम देने का प्रश्न आया—वहां भी श्री मंडल नाम का उपयोग किया गया है।

सभा श्रृंगार, वर्णनसार अथवा सभा कुतूहल नामों से अभिहित वर्णन ग्रन्थों में वाद्यों की सूचियां प्राप्त होती हैं। श्री अगरचंद नाहटा द्वारा संपादित 'सभा श्रृंगार' नामक ग्रन्थ में १७ वीं एवं १८ वीं शती के कुछ ग्रन्थों में निम्नलिखित नाम आये हैं:

भेरी, भंभा, भूंगळ, नफेरी, नीसांण, दमामा, दड़बड़ी, ताळ, धूसाल, **श्री मंडल**, तिवल, ढोल, करनाळ, कांसी, सरणाई, बांसरी, वीणा, चंग, मृदंग, त्रिबल, झूलरी, दुंदुभी, बरघू, सारंगी, रणसिंधौ, जयघंटा, राई, गड़बड़ी, नाद, केदारी, होक, पूंगी, झांझ, तंदूरो, पखाज, एवं नरसिंघौ।

इस प्रकार की अनेक सूचियों में श्री मण्डल नाम का प्रयोग मिल जाता है। दूसरी ओर काव्य वर्णन में आनन्दोत्सव के अवसर पर श्री मंडल के वादन का हवाला भी आ जाता है। केसोदास गाडण कृत 'गज गुण रूपक' का निर्माण काल संवत् १६६१ है। इस रचना में श्रीमंडल का वर्णन इस प्रकार हुआ है:

धुंकार हुई भ्रिद मांदल। वीण रबाव ताळ श्री मंडळ।
गीत संगीत समत सुर गाए। आगळि पात्र अखाड़ी थाए॥[1]

---

१. गज गुण रूपक : राजस्थान पुरातत्व मन्दिर द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ १६२।

श्री करणीदान विरचित सूरज प्रकाश का रचना काल संवत् १७८७ है जिसमें पुनः श्री मंडल का उल्लेख प्राप्य है:

"देवतूं के मन भूलते डोलते हैं। म्रदंगू के परन, धौलकूं के टिकौर। सुरबीणू के झणहण, तंबुरूं के घोर। तालू की झमक, झझरूं के झणकार। कांम के घुघर जैसे जंत्र के तार। मिनाकू का परवेज, **श्री मंडल का सवाद**। रंग की बरखा, अलगोजूं के नाद। अैसी भांति अनेक उछब सै गावतें हैं।"[1]

किन्तु इन वर्णनों से श्री मंडल के नाम की स्थापना के अतिरिक्त अन्य किसी सांगीतिक तत्व अथवा उसके स्वरूप के विषय में जानकारी नहीं होती। केवल इतना ही संकेत लिया जा सकता है कि स्वरोत्पत्ति करने वाले वाद्यों के साथ श्री मंडल का नाम प्रयोग हुआ है। यह श्री मंडल निश्चय ही सामान्य घंटा अथवा झालर नहीं है क्योंकि उसका उपयोग अन्य वर्णित वाद्यों के साथ होना संभव नहीं है।

ऐसी स्थिति में केवल एक स्थान पर ही श्री मंडल का ऐसा प्रयोग प्राप्त होता है, जहां उसके गठन का आधार मिलता है। यह वर्णन मिलता है कुसललाभ विरचित। 'माधवानल-कामकन्दला चउपई' में। यह ग्रन्थ संवत् १६७७ का लिखा हुआ है। और कवि ने जैसलमेर के कुंवर हरिराज के 'कौतूहल' के लिए शृंगार रस में रचा था। एक नाटक का वर्णन करते हुए, निम्नलिखित चौपई में श्री मंडल का उल्लेख हुआ है:

मांडिउ नाटक मन नह रंगि, बाजई तंति ताल मृदंग।

बारह वीण रबाप, विसाल, सर मंडल सोलह कंसाल ॥७८॥ [2]

चौपई के अन्तिम चरण में सोलह कंसालों के सर मंडल को पहिचाना जा सकता है। इस चरण के यों दो प्रकार से अर्थ निकाले जा सकते हैं। एक तो 'सर मंडल' एक स्वतंत्र वाद्य है और 'सोलह कंसाल' नाम का अन्य वाद्य है। चौपई के तृतीय चरण में जिस प्रकार 'बारह वीण' का उल्लेख है—वह एक वाद्य का नाम तो है नहीं अपितु विभिन्न प्रकार की वीणाओं का ही वर्णन माना जा सकता है। बारह की संख्या के अनुसार ही यदि कंसाल की सोलह संख्या मान लें तो कंसाल के सोलह भेद किसी प्रकार संभव नहीं है। कंसाल का सामान्य अर्थ है कांसी का बना हुआ चपटा एवं गोलाकार घंटा। इसमें भेद क्या हों? अतः हम सर मंडल को ही सोलह कंसालों का वाद्य न मानें तो इन्हीं कंसालों से निर्मित अन्य वाद्य की कल्पना करनी होगी। दूसरा सहज अर्थ सरमंडल का वर्तमान स्वरूप ही है। इसके साथ

---

१. सूरज प्रकास, भाग २ : राजस्थान पुरातत्व मन्दिर द्वारा प्रकाशित। पृष्ठ १८९।

२. माधवानल-कामकन्दला प्रबंध : गायकवाड़ ओरियंटल सिरीज। पृष्ठ ३९७।

संभवतया यह बताना भी आवश्यक होगा कि कभी कभी 'छत्तीस-वादित्रों' की सूची में 'कंसाल' नामक स्वतंत्र वाद्य का उल्लेख भी हुआ है। यदि इसे एक ही कांसे के घेरे का मान लें तो घंटा, भालर एवं विभिन्न आकार प्रकार की थालियों या कटोरों से पृथक करना मुश्किल होगा। 'कंसाल' नाम से अभिहित किया जाने वाला आज कोई वाद्य राजस्थान में प्रचलित भी नहीं है। संभव है कि कंसाल एवं श्री मंडल एक ही वाद्य के दो नाम हों।

श्री मंडल की इस विवेचना का मुख्य कारण यही है कि यदि राजस्थान इस वाद्य की ऐतिहासिकता को स्थापित कर सकता है तो बहुत संभव है कि यही एक ऐसा वाद्य निकले जो 'तरंग' रूप में अथवा उसके सांगीतिक तत्वों की स्थापना करने में संभव हो।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि राजस्थान में प्राप्य आठ अथवा बारह घेरदार कंसालों से श्री मण्डल का निर्माण होता है और ये कंसाले पृथक पृथक स्वरों की ध्वनि पर निर्मित रहते हैं। स्वराकृत होने के कारण कंसालों को छोटा बड़ा होना पड़ता हैं। इन कंसालों को विशिष्ट स्वर-क्रम से एक लौह फ्रेम पर बांध दिया जाता है। प्रत्येक कंसाल में तीन-तीन छेद होते हैं जो ऊपर एवं पार्श्व में रहते हैं। इन छेदों में से पतली रस्सी के द्वारा कंसालों को फ्रेम के साथ बांध दिया जाता है। फ्रेम काफी ऊंची होती है और इसका वादन खड़े खड़े ही किया जाता हैं। डेढ़ फुट के लगभग दो लंबी [खैराद पर निर्मित मोगरीयुक्त] लकड़ियों को दोनों हाथ में रखा जाता है और उनके द्वारा आघात कर के धुन प्राप्त की जाती है। मुझे जो दो श्री मंडल प्राप्त हुए, उनमें क्रमशः आठ एवं बारह कंसाल हैं। दोनों पर स्वर क्रम इस प्रकार स्थापित था :

१. प्रथम श्रीमंडल—आठ कंसाल—चार चार के क्रम में वर्टिकल रूप से बंधे हुए: [वाद्य के सामने खड़े होने पर]

   १. दाईं ओर नीचे से ऊपर : **सा रे ग म।**

   २. दाईं ओर ऊपर से नीचे : **प ध नि सा।**

२. द्वितीय श्रीमंडल में बारह कंसाल हैं। ये सभी कंसाल लौह की मोटी चद्दर से स्वरानुक्रम से निर्मित किये गये हैं। आठ कंसाल तो तीन तीन के क्रम से सीधे खड़े हुए बांधे गये हैं एवं तीन तीन की संख्या में कुछ छोटे आकार के कंसाल मुख्य ढांचे के बायें ओर दायें और टांगे गये हैं। संपूर्ण श्री मंडल पर निम्नलिखित स्वर प्राप्त होते हैं:

सा, रे, ग, ग॒, म, प, ध, नि, नि॒, सां, सां, रें।

इन्हें बांधने का जो तरीका प्राप्त हुआ—उसके अनुसार वाद्य के सामने खड़े होने पर यह क्रम बनता है :

१. मुख्य ढांचे पर दाईं ओर नीचे से ऊपर

सा, रे, ग ।

२. मुख्य ढाचे पर बाईं ओर ऊपर से नीचे

प, ध, नि ।

३. ढांचे के दाईं ओर संलग्न फ्रेम पर ऊपर से नीचे

सां, नि, रें ।

४. ढांचे के बाईं ओर संलग्न फ्रेम पर ऊपर से नीचे

सां, नि, ग ।

पुनः संकेत देना आवश्यक है कि प्रथम श्री मंडल कांसे की ढलाई द्वारा निर्मित है एवं दूसरा लोहे की मोटी चद्दरों का है । इस समय प्रथम श्री मंडल राजस्थान संगीत नाटक अकादमी, जोधपुर एवं द्वितीय केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली के पास है ।

इस वाद्य की व्याख्या के पश्चात एक प्रश्न निश्चय ही उत्पन्न होता है और वह प्रश्न है: क्या 'तरंग' नाम से अभिहित किये जाने वाले वाद्य भारतीय संगीत में 'मंडल' नाम से जाने जाते थे ? मंडल का शाब्दिक अर्थ एक 'समूहवाची' भाव का भी बोध प्रदान करता है। विभिन्न गांवों का समूह भौगोलिक रूप से मंडल कहा गया है, इसी प्रकार सौर-मंडल जैसे भी अनेक शब्दों के अर्थ में यही बोध निहित है । भारतीय वाद्यों में सुर-मंडल की कल्पना द्वारा भी तंत्री-समूह का ही नामकरण किया गया है । भारतीय संगीत शास्त्रों एवं लोक वाद्यों के नामों की सूचियों द्वारा संभवतया यह स्थापित किया जा सके कि 'मंडल' शब्द में 'तरंग' नामांकित वाद्यों का ही भाव सन्निहित था । यदि यह अर्थ बोध स्वीकृत हो सके तो इस श्रेणी के वाद्य भी भारतीय लोक संगीत की ऐतिहासिक परम्परा में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकेंगे । आज वस्तु स्थिति यह है कि मंडलाकृत वाद्यों का सर्वाधिक प्रचार दक्षिण-पूर्वी एशिया में ही है । ऐसे वाद्य भारत अथवा अन्य देशों में बहुत ही कम प्राप्त होते हैं । इसी क्रम में यह भी सोचा जा सकता है कि 'तरंग' प्रकार से बने हुए वाद्यों के नामकरण में हम 'मंडल' शब्द का ही परम्परानुकूल प्रयोग भी प्रारंभ कर सकें, तो क्या उचित नहीं होगा ?

हालरिया — एक टिप्पणी

कोमल कोठारी

लोकगीतों में यदि सहज से सहजतम किन्हीं धुनों को सुना जा सकता है तो वे हालरियों अथवा लोरियों में प्राप्य हैं। वस्तुतः हालरियों का गीतात्मक अंश अथवा उनकी धुनें संगीत की दृष्टि से कतई महत्वपूर्ण नहीं लगतीं किन्तु जो भी उनकी सहज गेय शैली है, वह अपनी गुन-गुनाहट एवं निरन्तर पुनरावर्तन के कारण अद्भुत प्रभाव उत्पन्न करती हैं। हालरियों का संगीत अबोध शिशु को निश्चित एवं निर्विघ्न नींद में सुला देने के लिए उपयोग में लिया जाता है और यह प्रयोग ही उसके प्रभाव का दृढ़ प्रमाण है।

लोक संगीत का सांगीतिक अध्ययन करते समय यह तथ्य अत्यंत मुखरित होकर सामने आता है कि अनेक गीत बहुत कम स्वरों के प्रयोग के द्वारा ही अपनी प्रभावशाली धुन का सृजन कर लेते हैं। भारत के शास्त्रीय संगीत में कम से कम पांच स्वरों की स्थिति अथवा स्वर - संवाद की स्थापना के अभाव में किसी धुन या बंदिश की कल्पना संभव नहीं मानी गई है। किन्तु लोक गीतों की संपूर्ण निधि को आत्मसात करने पर हम देखते हैं कि धुन के प्रति इस नियम की चिंता प्राप्त नहीं होती। एक से लेकर चार स्वरों में ही चलने वाली अनेकानेक धुनें प्राप्त हो जाती हैं। वस्तुतः चिंता की बात यह जरूर है कि एक स्वरात्मक धुन क्या हो सकती है अथवा कैसे संभव हैं। इसका उत्तर हमें दो निश्चित तथ्यों में मिलता है। प्रथम, एक स्वरीय प्रयोग हमें मिलता है : बालकों के पठन-पाठन की रटने की प्रवृत्ति में। हमारे देश में 'पोशाल' एक शिक्षण-संस्था रही है जिसमें अक्षर-ज्ञान हेतु वर्णमाला को रटाया जाता था ताकि वर्णों के ध्वनिचित्र मानस पर अंकित हो सकें। इस कार्य के लिए मध्ययुगीन राजस्थान में 'सिद्धो वरणां' एवं 'बारखड़ी' का प्रयोग होता था। इसे रटने की सामूहिक प्रवृत्ति में जिस गेयता का क्रम मिलता है, वह मुख्यतया एक स्वरात्मक है। अर्थात् सामान्य

वार्तालाप के वाक्यों की ध्वनि से अधिक उच्चरित एवं लयपूर्ण शैली में बोलने की प्रक्रिया मिलती है। द्वितीय: एक स्वरीय गुनगुनाहट का धुनात्मक प्रयोग हालरियों अथवा लोरियों में मिलता है। इन्हीं दो प्रमुख गेय प्रवृत्तियों के अतिरिक्त ऐसे ही अन्य तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना भी आवश्यक है ताकि लोकसंगीत के स्वर प्रयोग की वैविध्यता को अचेतन-मानस प्रक्रिया में खोजा जा सके। किन्तु इसी जगह यह कहना भी अत्यंत आवश्यक है कि हालरिये अथवा लोरियें मात्र एक स्वरात्मक ही नहीं होतीं। उनके विकसित सांगीतिक रूप भी प्राप्त होते हैं।

'हालरिया' एक राजस्थानी शब्द है और इसका लोरियों के पर्यायवाची शब्द रूप में प्रयोग मिलता है। किन्तु ठीक इसी शब्द द्वारा अन्य गीत-प्रकार भी मिलते हैं और यह आवश्यक है कि इन दो भिन्न प्रकार के हालरियों को अपने प्रथकत्व में समझा जाये। राजस्थान के लोक गीतों के कुछ अवसर-विशेष हैं जिनका संबंध शिशु-जन्म के साथ जुड़ा हुआ है। यह अवसर चाहे गर्भ रहने के सातवें माह में आता हो, चाहे जन्म पर आता हो अथवा जन्म के पश्चात सूरज पूजने के समय आता हो — इन सभी अवसरों पर विशिष्ट गीत गाये जाते हैं। इन गीतों में जच्चा संबंधी विषय भी रहता है और बाल-क्रीड़ाओं पर आधारित अन्य गीत भी होते हैं। यह गीत भी 'हालरिये' के नाम से जाने जाते हैं। किन्तु हम जिन विशिष्ट गीतों को प्रस्तुत कर रहे हैं, वे शुद्ध रूप में लोरियां हैं अर्थात् इनका प्रयोग बालक या बालिका को गोद में लेकर बिस्तर पर लिटाकर अथवा झूले में झुलाते हुए सुलाने के लिए गाये जाते हैं। सामान्यतया जिस गीत में हालरिया हूलरिया शब्द आ जाये, उसका सीधा अर्थ यह नहीं मान लेना चाहिये कि वह लोरी ही है। इन दो प्रकार के गीतों को पृथक कर देने के बाद हमें अनुभव होने लगेगा कि हालरियों की सख्या अत्यंत सीमित है। संभव है कि छोटे छोटे क्षेत्रों में विभक्त संपूर्ण राजस्थान में अधिक हालरिये प्राप्त हो सकें।

यह एक सत्य है कि विश्व के सभी देशों में हालरियों को गुनगुनाते या गाते हुए बालक को सुलाया जाता है और विस्मय का तथ्य यह है कि सभी हालरियों की व्यंजना एक ही है। अर्थात् उनकी भावात्मकता कुछ ही व्यंजनाओं में सीमित है। प्रत्येक हालरिया विभिन्न शब्दों में व्यक्त करता है कि 'तुम सो जाओ। तुम्हारी मां यहीं है। तुम निर्विघ्न हो और सब सुखी हैं।' इन मुख्य भावों के साथ साथ निर्विघ्नता की सहज घटनाएं और सुखी जीवन की परि-कल्पनाओं से हालरिये अनुरंजित रहते हैं।

शिशु को सुलाने के प्रयत्न में मां या अन्य परिवार की महिला उसके गालों पर अथवा पीठ पर हल्के हल्के थपथपाते हुए हालरिये की सहज वाणी में गुनगुनाना शुरू करती है। एक

एक बात को खूब धीमे धीमे और पुनरावृत्ति के साथ कहती जाती है। हालरिये में बराबर आता है कि तू सोजा। सो जाने की प्रार्थना करते हुए अनेक रूपों की कल्पनाएं सामने आ जाती हैं। हे बालक ! सोते सोते खेल। तू सोजा मैं गीत गाऊं। तुझे बूआ पालने में झुला रही है — तूं सोजा। हे कन्हैया सोजा ! भोले बालक तुझे हालरिया गाकर सुला रही हूं। हे छोटे से भाई सोजा ! हालर-हूलर की ध्वनि के बीच ही सोजा। और ऐसी ही मीठी मीठी बातों के साथ हालरिया बालक के सुलाने का गीत बन जाता है।

लेकिन बालक को सुलाने का यह हालरिया बाल गीत की श्रेणी में नहीं आता। क्योंकि बालक को सुलाने वाली ही गीत की रचयिता अथवा गायिका है। वह स्वयं बालक नहीं है। उसकी कल्पना निश्चित ही बालक के लिए है — इसलिए वह सहज से सहज कल्पना के द्वारा अपने भावों को व्यक्त करने का प्रयत्न करती है। शिशु की अवस्था के अनुकूल अथवा उसको समझ में आने वाले कार्यों या चीजों के सहारे ही सो जाने की बात को व्यक्त किया जा सकता है। इतना ही क्यों यह भी संभव है कि हालरिये में व्यक्त तथ्य सीधे बालक की मानसिक रुझान के अनुसार ही न हो और वह गाने वाली महिला की ही मन: स्थिति का द्योतक हो। अधिक सत्य यही लगता है कि हालरिया वस्तुत: बालक के प्रति मां की अनुरक्ति की अभिव्यक्ति है। क्योंकि जिस अवस्था के बालक को हालरिया सुनाकर सुलाने का प्रयत्न किया जाता है, वह संभवतया भाषा के सहजतम ज्ञान की सीमा तक भी नहीं पहुंचा होता है। ऐसे बालक को सुलाने में निश्छल हृदय, स्नेहपूर्ण मुखाकृति और उसके विश्वास को अर्जित कर लेने की बात ही प्रमुख होती है। हल्की थपकियों में ही स्नेहाभिव्यंजना नींद के असीम सुख में बालक को सुला देती है। कुछ अधिक अवस्था होने पर बालक कुछ शब्दों की सार्थकता भी ग्रहण करने लगता है और तब उसे लोभ-लालच की व्यंजनाओं के साथ हालरिया सुनाकर सुला दिया जाता है।

प्रत्येक परिवार का यदि कोई सबसे प्रिय सदस्य है तो वह छोटे से छोटा शिशु है। यह शिशु केवल दो ही भावों को समझता है—एक है स्नेह एवं दूसरा है भय। स्नेह के साथ जुड़ी हुई हैं बालक की प्रिय वस्तुएं। मीठा दूध, शक्कर के साथ नारियल, पतासे, लाड्डू एवं अन्य पकवानों को खिलाने के लालच में बालक को भरमाने का प्रयत्न चलता है। संभवतया ऐसी कोई मिठाई नहीं बचती कि जिसे हालरिये के साथ बालक को खिलाने का विश्वास नहीं दिला दिया जाता। प्रस्तुत हालरियों में खीर, दूध-पतासा, खांड-खोपरा, खाजा, सूंठ के लड्डू, घी और बाटी, सीरा, बदाम, पेठा, घेवर, मावा, जलेबी, लापसी, ठौर, नुकती और पेड़े खिलाने की बात तो आ ही गई है।

खिलाने-पिलाने के लालच के साथ अच्छे अच्छे आभूषण और सुन्दर वस्त्रों को पहिना देने का लोभ भी बालक के सामने रख दिया जाता है। झवरक झूठणे, [कान की बाली] रमकते-झमकते घुंघरू, पनड़ी, मोतियों की लड़ाक - लूंबें, कानों में हीरे मोती के कर्णफूल, चमकती-दमकती टोपी और छोटे से गौरे पांवों में झांझरियों की रुन-झुन से सजाने की सुलभ कामना करते हुए सो जाने के लिए आग्रह किया जाता है। यदि शिशु गीत की गुनगुनाहट में सो गया तो उसे रत्न-जड़ित दड़ी, मोर और मोरणी के सुन्दर खिलौने से खेलने का अवसर मिलेगा। अपने पिता के जैसी धोती, कुड़ता और अन्य वस्त्र भी उसे दिला दिये जायेंगे।

अनायास लालच और लोभ की वस्तुओं के साथ मां का हृदय बालक के भावी जीवन की कामनाओं में भी आशीर्वाद देने लगती है अथवा उसके शुभ की चिन्ताओं को व्यक्त करने लगती है। मेरा बालक सौ वर्ष जीये; मेरा बालक सुख और आनन्द से खेले; इस बालक का पिता दिल्ली का राजा बन जाये; मां दिल्ली की रानी बन जाये; ऐसा ही भाग्यवान बालक पड़ोसिन और सहेली के भाग्य में भी बड़ा हो; माता का भाग्य है; बालक के मामा गांव के ठाकर बन जायें और ठकराई करने लगें; बालक खूब पढ़ने लगे; सुन्दर पत्नी आ जाये इसके; बालक मां के दूध को चमकाये आदि आदि परिकल्पनाओं में हालरिये का रूप विकसित होता रहता है।

हालरिये अपने गठनात्मक रूप में विभिन्न संबंधियों के प्रति अपनी अपनी धारणाओं को भी आग्रहपूर्वक अभिव्यक्त करते हैं। अधिकांश हालरियों में बूआ का चित्रण एक अत्यंत स्नेहमयी महिला के रूप में हुआ है। बूआजी हालरिया गा रही हैं, बूआजी मोती की गेंद ला रही हैं, हे बूआ! तुम वापस आओ—बालक तुम से प्रसन्न है; बूआ तेरे लिए घुंघरू लाई हैं, इत्यादि अभिव्यक्तियों से स्पष्ट है कि बालक और बूआ के बीच वात्सल्यपूर्ण संबंध तो निश्चय ही है। एक हालरिये में तो बालक के महिला संबंधिओं का चित्रण है। उसमें बूआ के लिए लाल चूड़े, मां के लिए अमर चूड़े, काकी के सौभाग्यशाली होने, मासी के अमर सुहाग और भाभी के सुन्दर चूड़े की कामना व्यक्त की गई है। लेकिन इसी हालरिये में मासी के प्रति यह सहानुभूति प्रदर्शित नहीं है। यहां मासी के पेट दुखने की बात कही गई है। अन्यत्र भी हालरिये द्वारा सुलाने के समय मासी के पीहर दौड़कर चले जाने की बात आई है। यह विस्मय की ही बात है कि ये हालरिये मासी के प्रति असहानुभूतिपूर्ण क्यों है? यों सामान्य कहावतों एवं कथाओं में तो बूआजी को काफी कोसा गया है अथवा उनके प्रति किसी स्नेह को व्यक्त नहीं किया गया है। किन्तु हालरियों ने तो निश्चय ही बूआजी को खूब सराहा हैं। उधर पड़ोसिन के प्रति भी हालरिये चुप नहीं हैं। उनके लिए कहा गया कि तुम क्यों

ईर्ष्या करती हो ? ए पड़ोसिन ! तुम्हारी ईर्ष्या को समझना मुश्किल है। लेकिन इस धारणा के साथ ही साथ यदि कोई मेरे बालक को सुला देवे, हालरिये की गुनगुनाहट और झूले के हल्के हिलोरे में बालक के सो जाने का गीत गाये तो मां कहने लगती है—मैं तो उसे घी में घुली हुई बाटी खिलाऊंगी, आरामदेह गद्दी पर बैठाऊंगी और नये धान का बना मीठा जाजरिया खिलाऊंगी। किसी भी मां का यह आशीर्वाद लेना हो—वह बालक को सुला भर दे !

इन्ही स्नेहपूर्ण उक्तियों के साथ बालक की सहजतम क्रीड़ाए भी लोक-मानस की अनुभूति को छूए बिना नहीं रह सकतीं। हालरिये गाया करते हैं कि हे चिड़ियों ! नन्हे बालक के सामने नाचो, बालक तुम्हारा बार बार उठना ठीक नहीं, तुम पोल में नाचो और गोदी में खूब खेलो। पुनः एक हालरिया तो क्रीड़ाओं के चित्रण पर ही मिल गया है। 'हे बालक ! तू यदि मिट्टी का घरोंदा बनाये तो इनाम दू; नाचे तो नारियल देऊं; पैंयां पैंयां चले तो घोड़ा दिलाऊं, तुतलाते बोले तो मीठे बोर देऊं ओर मीठी वाणी बोले तो खूब ही बोर देऊं ! बालक की यह निश्छल क्रीड़ाएं सहज से सहतम अभिव्यक्तियों द्वारा हालरियों की रचना में मिलती ही जाती हैं।

लेकिन उपरोक्त सभी बातें तो स्नेह की व्यंजना के साथ हैं। लालच, लोभ, सुन्दर वस्तुएं, सुन्दर आभूषण, वस्त्र और परिवार के प्यार भरे संबंधों की ही चर्चा करते हैं। किन्तु हर बार बालक एक ही भाव से अनुरंजित नहीं होता—कभी कभी भय की बात भी जरूरी है। राजस्थान में बालक को भय बताने की दृष्टि से कभी हौवा, कभी बावा, कभी घोघड़ मिन्ना और कभी बागड़ का नाम लेकर डराया जाता है। इन भय-प्रद शब्दों के निरंतर नाटकीय प्रयोग से बालक भी डरने लगता है। लेकिन लोरियों में भय का यह रूप नहीं मिला। यहां प्रतियोगिता-जन्य एक भाव अवश्य मिलता है। बहुत से बालकों को दूध पिलाना मां के लिए एक समस्या होती है। तब चोटी बढ़ने की बात, दूसरे बालक द्वारा दूध पी जाने की बात कही जाती है। उसी स्पर्द्धा सें बालक भरमाया जा सकता है। हालरियों में वैसी ही साधारण स्पर्द्धा का भाव मिल जाता है। हें काले कुत्ते ! भागजा। नन्हा बालक सो रहा है। यह उक्ति ही बालक के विश्वास के लिए पर्याप्त वन जाती है।

लेकिन मां का हृदय कुछ अन्य 'भय' की कल्पना भी हालरियों में कर लेती है। यह 'भय' लोक विश्वासों पर आधारित होता है। हे बालक ! तुम बाहर कभी मत जाना। बाहर गये तो मालिन तुम्हें सुन्दर फूल माला पहिना देगी। तुम सुन्दर दिखने लगोगे। तुम्हें नजर लग जायेगी। इसलिए कभी बाहर मत जाना। इसी तरह सोनारिन तुम्हें नवसर हार पहिना देगी। नजर से डरते रहना। नजर से बचाने के लिए बालक के सामने 'लूण' भी

किये जाने की बात हालरिये में आ गई है। नन्हे बालक के हाथ में काले डोरे को बांधने की इच्छा के पीछे भी इसी भय की पृष्ठभूमि है। इसके लिए हालरिये की कल्पना है कि—हे बेमाता ! तुम आना और मेरे बालक के भाग्य में सुख ही सुख के अंक लिख जाना।

इन्हीं आशा-आकांक्षाओं के बीच में हालरिया अपनी कहानी को समाप्त करता है। यह हालरिया जो पहिले कुछ जोर से गाया जाता है, वही धीरे धीरे बालक की मुंदती पलक के साथ धीमा हो जाता है और फिर बहुत ही धीमे धीमे कंठ में ही पुनः विलुप्त हो जाता है।

प्रस्तुत हालरियों में केवल एक हालरिया बालिका से संबंधी है जिसमें 'सूजा अे बाई सूजा म्हारी लाडकी' का वर्णन है। उसे सीख दी गई है कि तू कैसी कैसी महिलाओं के समान मत होना। बालिकाओं को सुलाने के हालरिये अभी एकत्रित किये जाने हैं और संभव हैं कि उनमें कुछ और तथ्य भी उभर कर सामने आयें।

हालरियों के छोटे-बड़े रूप के साथ यही बात ध्यान में रखी जाती है कि पंक्तियों का निरन्तर पुनरावर्तन किया जा सकता है और अन्ततः गुनगुनाहट ही वह तथ्य है जो बालक को सुलाने में समर्थ है।

हालरियौ हूलरियौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर हासी रौ
पेट दूखै थारी मासी रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर हूवा रौ
लाल चूड़ौ थारी भूवा रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर आई रौ
अमर चूड़ौ थारी बाई रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर आकी रौ
भाग फळै थारी काकी रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर साजी रौ
सुहाग बधै थारी माजी रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर आभा रौ

नैन्हा—नन्हे।

ब्याव मंडै थारै बाभा रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर धापी रौ
लाल चूड़ौ थारी बाभी रौ
सूजा रे नैन्हा भाई
हालर हूलर हाटां में
दही बिलोऊं माटा में
सूजा रे नैन्हा भाई
सूजा रे नैन्हा भाई अेक घड़ी
थारै मंगावूं मोत्यां री दड़ी
सूजा रे नैन्हा भाई ।

◈ **हालर हूलर नैन्हा गीगा नै गाऊं**
दूध-पतासा म्हारी बाई नै पाऊं
धुर जाई रे कुत्ता
बांणिया रै घर जाई रै कुत्ता
बांणियौ बूढ़ौ डोकरौ
गीगा नै देई खांड खोपरौ
सूजा रे म्हारा लाडल वीर
थन्नै पाऊं दूध नै खीर
सूजा रे म्हारा लाडल वीर ।

◈ **हूलरै नैन्हा बाळकिया**
थन्नै हींडौ देवै जिणनै जीमाऊं बाकळिया

ब्याव—विवाह। **थारै**—तुम्हारे। **बाभा**—भाई। **बाभी**—भावज। **हाटां**—दूकानों। **गीगा**—शिशु। **धुर**—दुत्कार। **डोकरौ**—वृद्ध। **देई**—देना। **खांड**—शक्कर। **खोपरौ**—नारियल। **वीर**—भाई। **हींडौ**—झुलाना। **जीमाऊं**—खिलाऊं। **बाकळिया**—व्यंजन विशेष।

हूलरै नैन्हा गीगलिया
थन्नै हींडा देवै जिणनै बैठाऊं रेसमी रिलकिया
हूलरै म्हारा हालरिया
थन्नै हींडा देवै जिणनै जीमाऊं जाजरिया
हूलरै वीरा घोड़ी
थारी मासी पीवर दौड़ी ।

◈ **लोरी रे लोरी**
गाय ब्याई गोरी
दूध भरी कटोरी
कटोरी में चावळ
म्हारौ नैन्हौ रैवै सावळ
सूजा रे नैन्हा लाडल वीर
थारी बाई खवाड़ै मीठी खीर ।

◈ **नैन्हा रे नैन्हा थूं सूतौ सूतौ रम**
थारी मां करै रसोई
रसोई में खाजा
थारौ बाप दिल्ली रौ राजा
नैन्हा रे नैन्हा थूं सूतौ सूतौ रम
मटकी में पांणी
थारी मां दिल्ली री रांणी
नैन्हा रे नैन्हा थूं सूतौ सूतौ रम ।

◈ **थूं सूजा रे भोळा बाळ**
कांन जी नै हालरियौ

गीगलिया—बालक । **रिलकिया**—गद्दा । **जाजरिया**–कच्चे गेहुवों का हलुवा । **पीवर**—पीहर । **सावळ**—स्वस्थ । **खवाड़ै**—खिलाये । **रम**—खेल । **भोळा**—भोले ।

थूं रैंजा रे नैन्हा बाळ
कांन जी नै हालरियौ
थूं रम रे नैन्हा बाळ
कांन जी नै हालरियौ
थूं ढबजा रे भोळा बाळ
कांनजी नै हालरियौ
सूजा रे नैन्हा सू... ...

◈ **सूजा रे नैन्हा हालरिया**
भूवाजी लडावै हालरिया
उडजा अे सुगनी सुगन चिड़ी
भूवाजी लाया मोत्यां री दड़ी
धुर रे काळा कूकरिया
भूवाजी लाया थारै घूघरिया
थूं आजै भूवा पाछी
नैन्हौ है थां सूं राजी ।

◈ **नैन्हा रे नैन्हा बारै मती जाई**
ओडणिया री कोर कतर लेसी कोई
लड़ाक लूंबां तोड़ लेसी कोई
बाभाजी रौ लाडलौ मरोड़ लेसी कोई
नैन्हा रे नैन्हा अंठौ भात कदै मती खाई
कूड़ी बात कदै मत कैई

ढबजा—रुकजा। **भूवाजी**—बूआजी। **कूकरिया**—पिल्ला। **लडावं**—प्रेम-पूर्वक खिलाना। **धुर**—दुत्कार। **घूघरिया**—घुंघरू। **पाछी**—वापिस। **थांसूं**—तुम से। **बारै**—बाहर। **मती**—नहीं। **जाई**—जाना। **ओडणिया**—वस्त्र विशेष। **कोर**—किनार। **कतर लेसी**—काट लेगा। **बाभाजी**—पिताजी। **लाडलौ**—दुलारा। **अंठौ**—झूठा। **कूड़ी**—झूठी। **केई**—कहना।

पर घर रात कदी मत रैई
सायबजी रौ लाडलौ मरोड़ लेसी कोई ।

◈ भाई रे भाई

बारै मती जाई
झबरक झूंठणा
तोड़ लेला सांम्हली लुगाई
भाई रे घड़ादूं घूघरिया
धुर रे काळा कूकरिया
घूघरियां री धमसोळ पड़ै
लाल पाड़ौसण रीसां बळै
म्हारौ वीरौ लाडकौ
पीवै दूध रौ बाटकौ
म्हारौ वीरौ फूठरौ
लाडू खावै सूंठ रौ
क्यूं अे बाई रीसां बळै
म्हारा वीरा जैड़ौ थूं ई जिण अे ।

◈ आडण टोपी जगां-मगां

नैन्हौ चालै पगां पगां
कटोरौ, कटोरा में पतासा
मां जोवै, नैन्हौ करै तमासा

रैई—रहना । **मती**—नहीं । **झबरक झूंठणा**—आभूषण विशेष । **लुगाई**—औरत । **घूघरिया**—घुंघरू । **धुर**—दुत्कार । **कूकरिया**—पिल्ला । **धमसोळ**—झंकार । **रीसां**—क्रुद्ध । **बळै**—जलना । **वीरौ**—भाई । **बाटकौ**—कटोरा । **फूठरौ**—सुन्दर । **सूंठ**—सोंठ । **थूं ई**—तू भी । **जिण**—उत्पन्न कर । **आडण-टोपी**—रेशमीन कपड़े की बनी टोपी । **जगां-मगां**—जगमगाहट हुई ।

बापजी सा रै पोतौ पोतौ
नैन्ह बोलै तोतौ तोतौ
बाड़ा में म्हांरै तोड घणा
नैन्हा रै करां कोड घणा
गायां भैंस्यां खात करै
म्हारो नैन्हो मीठी बात करै
आ रे नैन्हा आ
घी अर बाटी खा
अैड़ौ म्हारौ नैन्हौ
मां देवै थारौ म्यांनौ ।

◈ **नैन्हा गीगा थड़ो करै तौ थगलौ देऊं**
नाचै तौ नाळेरौ देऊं
नैन्हा गीगा पगलिया भरै तौ घोड़ो लाऊं
मांगा साथै नांनेरै ले जाऊं
नैना गीगा बोली बोलै तौ बोर देऊं
मीठौ बोलै तो फेर देऊं
नैन्हा गीगा थारै कांनां में मोती
थनै पैराऊं धोती
नैन्हौ गीगौ दूध-पतासा पीवै
गीगौ म्हारौ सौ बरस जीवै
आ अे म्हारी वेमाता
नैन्हा री जो अे साता ।

बापजी सा— श्वसुर । **तोड**— ऊंट । **कोड**— लाड-दुलार । **घणा**—बहुत । **खात**—खाद । **म्यांनौ** — मायना । **गीगा** — शिशु । **थड़ो** — पैरों पर खड़े होना । **थगलौ** — पुरस्कार विशेष । **बोर**— बेर । **वेमाता**— विधात्रि । **जो**— देख । **साता**— कुशल-क्षेम ।

◈ रै रै गीगा अेक घड़ी
थन्नै जीमाऊं सीरौ नै पूड़ी
रै रै गीगा दोय घड़ी
थन्नै जीमाऊं खाजा नै पूड़ी
रै रै गीगा तीन घड़ी
थन्नै जीमाऊं लाडू नै पूड़ी
रै रै गीगा च्यार घड़ी
थन्नै जीमाऊं मालूपा नै पूड़ी
रै रै गीगा पांच घड़ी
थन्नै जीमाऊं जळेबी नै पूड़ी
रै रै गीगा छव घड़ी
थन्नै जीमाऊं लापसी नै पूड़ी
रै रै गीगा सात घड़ी
थन्नै जीमाऊं नुगती नै पूड़ी
रै रै गीगा आठ घड़ी
थन्नै जीमाऊं पेड़ा नै पूड़ी
रै रै गीगा नव घड़ी
थन्नै जीमाऊं ठौर नै पूड़ी
रै रै गीगा दस घड़ी
थन्नै जीमाऊं मावौ नै पूड़ी
रै रै गीगा इग्यारै घड़ी
थन्नै जीमाऊं घेवर नै पूड़ी
रै रै गीगा बारै घड़ी
थन्नै जीमाऊं पेठा नै पूड़ी

रै रै—रह रह। सीरौ— हलुवा। मालूपा—मालपूआ।

रै रै गीगा सँग घड़ी
अबै गीगा रात पड़ी ।

• रै रै नैन्हा रोवतौ
लाडू खाई के कोफतौ
तिल्ली सांय पनड़ी
नैन्हा नै पनाऊं बनड़ी
नैन्हा रै हाथ में डोरी
नैन्हा री मायड़ सोरी
नैन्हा रै हाथ में कूंची
नैन्हा री भावज ऊंची
मय्यौ पीसूं पीसणौ
नैन्हौ कीधौ रूसणौ
नैन्हौ म्हारौ लाडकौ
दूध पाऊं भर वाटकौ ।

• नैन्हा रो घणेरौ लाड
नैनकिया नै हालरियौ
नैन्हौ मावड़ रो भाग
नैनकिया नै हालरियौ
नैन्हा माळियां री गळी मत जाई रे
नैनकिया नै हालरियौ
मालणियां पैरावैला फुलमाळ
नैनकिया नै हालरियौ

सँग—सभी । **रै रै**—रह रह । **खाई**—खायेगा । **के**—या । **पनाऊं**—विवाह करूं । **बनड़ी**—दुल्हिन । **मायड़**—मां । **सोरी**—खुशहाल । **मय्यौ**—महीन । **कीधौ**—किया । **वाटकौ**—कटोरा । **घणेरौ**—अत्यधिक । **लाड**—प्यार ।

मालणियां री जात कुजात
नैंनकिया नैं हालरियौ
नैंनकिया नैं लेवैला बिलमाय
नैंनकिया नैं हालरियौ
नैंनकिया नैं लेवैला लाड लडाय
नैंनकिया नैं हालरियौ
नैंन्हा सोनारां री गळी मत जाई रे
नैंनकिया नैं हालरियौ
सोनारचां पैंरावैला नवसर हार
नैंनकिया नैं हालरियौ
सोनारचां री जात कुजात
नैंनकिया नैं हालरियौ
नैंनकिया नैं लेवैला बिलमाय
नैंनकिया नैं हालरियौ
सोनारचां लेवैला लाड लडाय
नैंनकिया नैं हालरियौ
म्हारौ नैंन्हौ रंवै दिन परभात
नैंनकिया नैं हालरियौ ।

आवौ चिड़ियां चांचौ
म्हारा नैंन्हा रै आगै नाचौ
आवौ अै चिड़ियां चूण करौ
म्हारा नैंन्हा रै आगै लूण करौ
लूण में रळघा कांकरिया

जाई—जाना । चांचौ—चोंच चलाना । चूण—चून । लूण—नमक । रळघा—मिले । कांकरिया—कंकर ।

म्हारै नैन्हा रा गांमा ठाकरिया
ठाकरिया ठकराई करै
कोटड़िया बड़ाई करै
सोढ़ां रै सगाई करै
म्हारौ नैन्हौ भणाई करै।

- **हालरिया रा दादोसा गिया बजार**
  हालरिया रै बाजा लाया दोय नै च्यार
  हालरिया री दादी गई रे मंदीर
  हालरिया रै लाई ढेलड़ी नै मोर
  हालरिया रा नांना गिया नवासेर
  हालरिया रै लाडू लाया अेक सेर
  हालरिया रा मांमा गिया बागां में
  हालरियौ सैलां करै तांगा में
  हालरिया रा काका लाया काकड़ी
  हालरिया री काकी व्हैगी बाखड़ी
  हालरिया री मांमी रै कोड घणा
  हालरियौ मोलावै तोड घणा।

- **इत्ता कांम म्हारौ नैन्हौ करै**
  सीरा रौ सीरावण करै
  दूधां रौ दोपारौ करै
  विदांमां रौ ब्याळू करै
  करै तौ घणौ ई करै
  इत्ता कांम म्हारौ नैन्हौ करै

सोढ़ा— राजपूतों की एक जाति विशेष। **भणाई**—पढ़ाई। **हालरिया**— शिशु। **बाजा**— खिलौने। **नवासेर**—ब्यावर। **कोड**—दुलार। **तोड**— ऊंट। **सीरा**— हलुवा। **सीरावण**— नाश्ता। **दोपारौ**—दोपहर का खाना। **ब्याळू**—शाम का खाना।

कानां में मोतीड़ा पैरे
पगलियां में झांझरिया पैरे
इत्ता कांम म्हारो नैन्हो करे
वाभोसा री पोळियां रमै
भूवासा री गोदियां रमै
इत्ता कांम म्हारो नैन्हो करे
बेनड़ली नै घणो रमावै
मावड़ रो दूध चमकावै
इत्ता कांम म्हारो नैन्हो करे ।

◇ बा अे बा, मोडी रांड
कुचेरा री कुत्ती रांड
नागौर री नागी रांड
सूजा अे बाई सूजा म्हारी लाडकी
इत्ता लखणां सूं वच म्हारी बाई
आखी ऊमर सुख पावैला म्हारी बाई
सूजा अे बाई सूजा म्हारी लाडकी
सूजा म्हारी चिड़कली
दूध पाऊं भर मिरकली
सूजा अे बाई सूजा म्हारी लाडकी
घोड़ी घड़ाऊं थारै स्याळकी
वीरो घड़ावै थारै वाळकी
सूजा अे बाई सूजा म्हारी लाडकी ।

वाभोसा—पिता । भूवासा—बूआ । रमावै—खिलाना । मायड़—मां । कुचेरा—एक गांव का नाम । आखी—सारी । मिरकली—एक माप विशेष । स्याळकी—एक लकड़ी विशेष । वाळकी—आभूषण विशेष ।

* थारौ नाव कांई रे—बाळकियौ , गीगलियौ
सिध गियौ रे — नांनेरै
कांई लायौ रे — टोपलियौ, जुगलियौ, खोपरियौ
रोयौ कीकर —– व्यांह, व्यांह, व्यांह ।

थारौ — तेरा । **कांई** — क्या । **गीगलियौ** — बच्चा । **सिध गियौ** —कहां गया । **नांनेरै** —ननिहाल । **जुगलियौ**—वस्त्र विशेष । **खोपरियौ**—नारियल । **कीकर**—कैसे ।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रन्थों का
राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

संस्कृत - प्राकृत

प्रकाशन का नाम	सम्पादक	मूल्य : रुपये
दशकण्ठवधम्	श्री गंगाधर द्विवेदी	४-००
श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्र	श्री गोपालनारायण बहुरा	३-७५
रत्नपरीक्षादि सप्त ग्रन्थ - संग्रह	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	६-२५
स्वयम्भूछंद	प्रो. एच. डी. वेलणकर	७-७५
वृत्तजातिसमुच्चय	,, ,, ,,	५-२५
कविदर्पण	,, ,, ,,	६-००
वृत्तमुक्तावली	स्व. पं. श्री मथुरानाथ भट्ट	३-७५
कर्णामृतप्रपा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	२-२५
पदार्थरत्नमंजूषा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य प्रस्तावना — श्रीदलसुख मालवणिया	३-७५
त्रिपुराभारती लघुस्तव	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	३-२५
प्राकृतानन्द	,, ,, ,, ,,	४-२५
इंद्रप्रस्थ प्रबन्ध	डॉ. दशरथ शर्मा	२-२५
एकाक्षर नाम कोश संग्रह	पन्यासप्रवर मुनि रमणीकविजय	९-००
वासवदत्ता कथा	जे. एम. शुक्ल	४-५०
वृत्तमौक्तिक	म. विनयसागर	१८-२५
चांद्रव्याकरण	प. बेचरदास दोशी	७-००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित-सं. । विज्ञा. । डी । ५५६ । ६७ । बी–१५७५३बी.

आज की आवश्यकता

राजस्थान के मुख्य मन्त्री
श्री मोहनलाल सुखाड़िया का उद्‌बोधन

उत्पादन

हमें उत्पादन में अधिक से अधिक वृद्धि के कार्य को एक राष्ट्रीय कर्तव्य मानकर खेतों, कारखानों व खदानों में कार्य करना है जिससे कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को मजबूत बना सकें और हमें अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं के लिए बाहरी सहायता पर निर्भर नहीं रहना पडे। देश के हर नागरिक को, चाहे वह किसी भी कार्य में लगा हो, यह मानकर कार्य करना चाहिये कि वह देश की शक्ति और समृद्धि बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है।

परिवार नियोजन

परिवार नियोजन का उद्देश्य परिवार, समाज व देश के कल्याण के लिए परिवार को सीमित करना है। हमें उतने ही बच्चे पैदा करने चाहिये जिनका भरण-पोषण माता-पिता भली-भांति कर सकें, उन्हें अच्छी शिक्षा दे सकें और अच्छे वस्त्र तथा स्वास्थ्यप्रद भोजन उपलब्ध कर सकें। यदि हमने ऐसा किया तो हम हर परिवार को समाज की एक समृद्ध और सुखी इकाई बना सकेंगे।

अल्प बचत

हमारे साधनों में अल्प बचत का विशेष महत्व है। यह न केवल पारिवारिक जीवन में बचत की आदत डालती है। बल्कि इससे योजना की क्रियान्विति हेतु आवश्यक धन राशि भी प्राप्त होती है। इस वर्ष अल्प बचत योजना के अन्तर्गत हमें अधिक से अधिक धनराशि एकत्रित करनी होगी। इस लक्ष्य की पूर्ति होने से राज्य को विकास कार्यों के लिए उपयुक्त धन प्राप्त होगा और हम विकास के क्रम को जारी रख सकेंगे।

ज. स. निदेशालय द्वारा प्रसारित—डी. १४। ६६। ८८२—६६२ बी

राजस्थान स्टेट लोटरीज प्रथम ड्रा

एक लाख रुपये के इनाम के विजेता

श्री श्योचन्द्रराम यादव , पेशा : काश्तकारी

निवासी : नाथी का वास, मलिकपुर पंचायत, तहसील : सांभर, जिला जयपुर

आप भी

इतने ही भाग्यशाली हो सकते हैं !

राजस्थान स्टेट लोटरी का

दूसरा ड्रा ६ - ४ - १९६९

दूसरे ड्रा का टिकिट खरीदिये

कुल इनाम १५३

पहला इनाम— १ लाख रुपये और एक एम्बेसेडर कार अथवा २५, ००० रुपये ।
दूसरा इनाम— ५०, ००० रुपये ।
तीसरा इनाम— २५, ००० रुपये ।
चौथा इनाम— २, ००० रुपये [पचास]
पांचवा इनाम— १, ००० रुपये [एक सौ]

कुल ४ लाख रुपये के १५३ इनाम

एजेन्टों को भी कमीशन में इजाफा

* पहले ५००० तक १५ प्रतिशत
५००० से २०, ००० तक १६ प्रतिशत
२०, ००० से ५०, ००० तक १८ प्रतिशत
५०, ००० से ऊपर २० प्रतिशत

१ लाख से ऊपर १ प्रतिशत विशेष बोनस

आज ही एजेन्ट बनिये !

जिले की ट्रेजरी व तहसील की सब-ट्रेजरी में टिकिट मिलते हैं ।

निदेशक, अल्प बचत एवं स्टेट लोटरीज विभाग, सी– ३०, भगवानदास रोड , जयपुर ।

शोध-पत्रिका

सम्पादक : डॉ. देवीलाल पालीवाल

यह त्रैमासिक पत्रिका सन् १९४७ से निरन्तर साहित्यिक ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक क्षेत्र में अनुसंधान का महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। अद्यावधि इस में अनेक महत्वपूर्ण शोध-निबंध, ताम्र-पत्र, प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थ तथा अन्य प्रकार की मूल्यवान् शोध-सामग्री प्रकाशित हुई है।

एक प्रति : तीन रुपये
वार्षिक : दस रुपये

सम्पर्क :

साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ,
उदयपुर [राजस्थान]

लोक साहित्य

सम्पादक : डॉ. रामप्रसाद दाधीच

लोक साहित्य के वैज्ञानिक अध्ययन और शोध की हिन्दी में महत्वपूर्ण पत्रिका

वार्षिक शुल्क ८ रुपये
अध्यापकों एवं छात्रों के लिए ६ रुपये

सम्पर्क :

लोक साहित्य केन्द्र, सरदारपुरा
१ ए, जोधपुर [राजस्थान]

हिन्दी नवलेखन की सशक्त मासिकी

लहर

सम्पादक : प्रकाश जैन, मनमोहिनी

नियमित हिन्दी पाठकों के समक्ष कहानियों, कविताओं के अतिरिक्त समसामयिक घटनाओं–समस्याओं पर विचारयुक्त सामग्री प्रस्तुत करती रही है जिसके विशेषांक स्थायी महत्व के रहे हैं

एक प्रति : एक रुपया
वार्षिक : दस रुपया

सम्पर्क :

महात्मा गांधी मार्ग,
पो. बॉ. ८२, अजमेर

अभिनव विचारों का साहित्यिक मासिक

वातायन

साहित्यिक मासिक

प्रति माह :
सृजन के सभी पक्ष आप पढ़ेंगे.
समसामयिक साहित्यिक समस्याओं पर गंभीर चिन्तन प्रधान निबन्ध.
साहित्येतर समस्याओं पर लेख.
पुस्तकों की सम्यक समालोचना.
एवं अन्य स्थायी स्तम्भ.

एक प्रति : एक रुपया पचीस पैसे
वार्षिक : बारह रुपये

सम्पर्क :

५, डागा बिल्डिंग
बीकानेर [राजस्थान]



लोक संस्कृति

अनुक्रम

वर्ष ८ अंक ८

लोक संस्कृति

कथा, गीत, गाथा, कहावत, मुहावरा, धर्म, देवी-देवता, त्योहार, नाट्य, चित्र, मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

संपादक : कोमल कोठारी, विजयदान देथा

चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

लोक नृत्य : २६ जनवरी

२६ जनवरी का राजनैतिक महत्व तो उसके गणतंत्र दिवस के रूप में मनाये जाने का है किन्तु साथ ही भारत के महान नेता श्री जवाहरलाल नेहरू का एक प्रिय विषय भी इस त्योहार के साथ जुड़ गया है। यह विषय है : लोक नृत्य। हमारे देश की राजधानी में प्रतिवर्ष २६ जनवरी को प्रत्येक भाग से लोक नृत्यकारों को राज्य सरकारों के मार्फत आमंत्रित किया जाता है और बृहत लोक-सांस्कृतिक महोत्सव मनाया जाता है।

इस विशिष्ट कार्यक्रम ने लोक-नृत्यों के प्रति एक चेतना का सृजन किया है और धीरे धीरे समाज का इस सांस्कृतिक उपलब्धि को देखने का रवैया भी बदल रहा है। सामान्यतया हम अपने परिवार, समाज अथवा गांव में जिन उत्सव-त्योहारों पर नृत्यों की अवतारणा को देखते हैं, अनायास ही अपनी सौन्दर्यानुभूति और हर्ष की उत्फुल्ल अभिव्यजना बन कर ही रह जाते हैं। उनके माध्यम से एक कलात्मक गरिमा अथवा चेतना का जो अध्याय प्रारंभ किया जा सकता है, उसके प्रति हम मौन रह जाते हैं। मनोरंजन के विभिन्न एवं नवीन साधनों के साथ लोक नृत्यों के सामूहिक अवसर भी कम होते जा रहे हैं। लोक नृत्यों की ठीक ऐसी ही सामाजिक स्थिति में २६ जनवरी का लोक नृत्य-महोत्सव एक ऐसी परंपरा का निर्माण अवश्य कर सका है, जहां हम उन्हें न केवल राष्ट्रीय महानता और उसकी श्रेष्ठता को स्वीकारते हैं अपितु साथ ही उसकी प्रभविष्णुता, उसकी वैविध्यता एवं उसके रंगमंचीय मनोहर रूप से भी परिचित होने लगते हैं। २६ जनवरी का दिन धीरे धीरे भारत की सांस्कृतिक वैविध्यता के सौन्दर्य का पर्व भी बनता जा रहा है।

किन्तु लोक-नृत्य की इस राष्ट्रीय अभिव्यक्ति के साथ यह तथ्य भी महत्वपूर्ण बनता जा रहा है कि अन्ततः हम लोक नृत्य की संज्ञा में किन विशिष्ट तथ्यों को अंगीकार करना चाहते हैं। अर्थात् लोक नृत्य हम किसे मान कर चलें ?

नृत्य की अभिव्यंजना का साधन मनुष्य के अवयव हैं। अवयव अपनी भंगिमाओं, संचालन एवं मुद्राओं आदि के द्वारा भावों को अभिव्यक्त कर सकते हैं। किन्तु भाव-प्रेषण की इस विधा में अवयव संचालन के साथ यदि विशिष्ट 'भावात्मक भाषा' का निर्माण हो जाता है तो उस नृत्य शैली को शास्त्रीय अथवा अर्ध शास्त्रीय मान लेना पड़ता है। लोक नृत्यों की सबसे महत्वपूर्ण नकारात्मक पहिचान यही है कि उसमें विभिन्न अवयवों के संचालन, उसकी भंगिमाओं अथवा मुद्राओं में अर्थ का वैशिष्ट्य समाहित नहीं होता। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि लोक नृत्य भाव-हीन होते है। इन नृत्यों में भी भावात्मकता है किन्तु उस भावात्मक स्थिति का कारण अवयवों के सिद्ध-अर्थ नहीं हैं अपितु वह स्थिति [सामाजिक, धार्मिक अथवा अनुष्ठानिक] है जिसकी प्रेरणा से नृत्य की सामूहिक व्यंजना आवश्यक बन जाती है।

समझने की बात यह है कि लोक नृत्य किसी भी भाव को नाटकीय रूप से अभिव्यक्त करने का प्रयास नहीं करते। नाटकीय भाव-प्रेषण की नृत्यात्मक व्यंजना हमें शास्त्रीय नृत्य शैलियों में सुनिश्चित रूप से प्राप्त होती है। इन शैलियों के सृजनात्मक इतिहास की पृष्ठभूमि

में भी हमें नृत्य की विकसित होती हुई विशिष्ट भाषा के दर्शन होते हैं ।

इस बात को दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि लोक-नृत्यों का प्रयोजन मात्र सौन्दर्यानुभूति अथवा अपने भावावेगों को किसी शैली-विशेष में व्यक्त करना नहीं है । लोक नृत्यों का मूल समाज की धार्मिक, अनुष्ठानिक अथवा आर्थिक परिस्थितियों से जुड़ी हुई अनेक वस्तु-स्थितियों के बीच में छिपा रहता है ।

लोक नृत्य की इसी सीमा के कारण यह एक कठिन समस्या उत्पन्न होती है कि उसे किस प्रकार रंगमंचीय व्यवस्था के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया जाय । रंगमंच, उसकी लंबाई-चौड़ाई, प्रकाश की व्यवस्था, विशिष्ट वेश भूषा, विशिष्ट संगीत, विशिष्ट लय व ताल में प्रतिबंधित नृत्य-प्रक्रियाएं—उन सब उत्साहपूर्ण उल्लास के क्षणों को भुला देती हैं जो गांव के खुले मैदान या जंगल के आत्ममुक्त वातावरण में प्राप्य हैं । अनुशासन-विहीन सा दिखाई देने वाला सामूहिक या एकाकी लोक नृत्य वस्तुत: भाव-विभोर अभिव्यक्ति मात्र दिखाई देता है ।

२६ जनवरी के नृत्यों में धीरे धीरे लोक-नृत्यों की भाव विभोर स्थिति का ह्रास होता जा रहा है । कारण यह है कि विभिन्न राज्यों से भेजे जाने वाले नृत्यकारों के दलों को 'प्रशिक्षित' अथवा 'निर्देशित' करने का क्रम चल पड़ा है । जहां 'प्रशिक्षण' नहीं है तो वहां नृत्यों के चुनाव में शिथिलता बरती जा रही है । अथवा एक ही प्रकार के नृत्य को विभिन्न जातियों के विशेषणों के साथ प्रस्तुत करके सन्तोष कर लिया जाता है ।

अन्य राज्यों की स्थिति के विषय में अधिक जानकारी नहीं है लेकिन राजस्थान के लोक-नृत्यों के विषय में निश्चय ही कहा जा सकता है कि अभी नृत्यों के विषय में प्रारंभिक जानकारी भी संग्रहीत नहीं की जा सकी है । सही है कि कुछ नृत्यों के नाम जान लिए गये हैं, उनके अंग की नकल करना सीख गये हैं किन्तु एक नृत्य के शुद्ध नृत्य पक्ष पर जो जानकारी एकत्रित करली जानी चाहिए—वह अब भी अधूरी है । इसी अधकचरी हालत में संगीत विद्यालयों, नृत्य-विद्यालयों, सामान्य शैक्षणिक संस्थाओं में लोक-नृत्यों को लेकर चिन्ताजनक स्थिति बनती जा रही है । यह भुला दिया जा रहा है कि लोक नृत्य वस्तुत: किसी लोक-गीत का भोंडा भाव-प्रदर्शन करने का प्रयास नहीं करता । गत कुछ वर्षों में जितने भी राजस्थानी लोक नृत्यों के कार्यक्रम देखे उनमें लोक नृत्य तो नहीं था अपितु किसी छटे हुए लोक गीत के आधार पर नवीन नृत्य-संयोजना अवश्य थी । यह संयोजना कोई गलत प्रयास नहीं है, लेकिन समझने की बात यही है कि यह लोक नृत्य नहीं है, इसलिए उसमें वह प्राण भी नहीं है जो लोक नृत्य को प्रभविष्णु बना सकते हैं ।

हम राजस्थान के लोक नृत्यों को दो मुख्य विभागों में विभक्त कर सकते हैं । प्रथम : वे लोक नृत्य जो पेशेवर लोक नृत्यकारों द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं । जैसे सरगरों का कच्छी घोड़ी का नृत्य अथवा कामड़ जाति का तेराताली नृत्य । दूसरा : वे लोक-नृत्य जो सामान्य जन-समाज द्वारा [पुरूषों अथवा स्त्रियों अथवा दोनों मिलकर] सामूहिक रूप से अथवा एकाकी रूप से प्रस्तुत किये जाते हैं । जैसे गींदड़, गैर, घूमर नृत्य आदि । इन दोनों प्रकार के नृत्यों के मूल्यांकन के लिए दो भिन्न मापदंड स्थापित किये जाने पड़ेंगे, तभी हम लोक नृत्यों की सही पहिचान तक पहुंच पायेंगे । लोक-नृत्य के नाम पर शहरों एवं रंगमंच पर हम जो कुछ देख रहे हैं, उसके प्रति हमें सशंकित रहते हुए, वास्तविक लोक नृत्य की तलाश के लिए शीघ्र ही प्रयत्न प्रारंभ करने चाहिएं ।



मरने पर भी !

रामद्वारे के एक महन्तजी ने एक बनिये से छल करके दस हजार रुपये झाड़ लिए। बनिये ने बहुत हाथाजोड़ी की, पर महन्त ने तो वापिस एक लाल-छदाम भी उसे नहीं दिखाई। तब बनिये ने कहा — महन्तजी, इस भगवा वेष की थोड़ी बहुत तो लाज रखो। मेरी खरी कमाई के रुपये हैं, आपको पचेंगे नहीं।

महन्तजी ने कहा— बावले, तू तो रुपयों के पचने की बात करता है, हमें तो संखिया भी हजम हो जाता है। ये रुपये तो अब राम के चरणार्पित हो गये। तेरी भक्ति में जोर हो तो वापिस निकलवा सकता है। हम तो राम की माया के रखवाले हैं।

बनिये ने कहा— महन्तजी, जात का बनिया हूं। मरने पर भी ये रुपये नहीं छोड़ूंगा, यह निश्चय समझना।

महन्तजी बोले— तू बनिया है तो मेरे भी महन्त का वेष है। ये रुपये तो तेरे सारे घरवाले मर जांय तो भी वापिस हाथ नहीं आने के।

उस दिन से ही बनिये ने तो इस बात की गांठ बांध ली। पर फिर कभी मुंह से बात नहीं निकाली। रोज रामद्वारे जाता। महन्तजी की पूरी सेवा-बन्दगी करता। उनकी पूरी हाजरी भरता। महन्तजी भी पिछली सारी बातें भूल कर उस बनिये से बेहद खुश हो गये। बनिये ने बात मन में दबाये रखी पर महन्तजी सचमुच ही उस दिन वाली बात आई-गई कर गये।

बनिया काफी बूढ़ा था। दो कम सत्तर वर्ष की उमर थी। अधिकतर बीमार ही रहता। पर कैसी ही बीमारी हो वह रामद्वारे की हाजरी तो बजाता ही। भक्ति का चस्का उसे लगा पर लगा। महन्तजी भी मान गये कि ऐसा भक्त तो उन्होंने अपने जीवन में कभी नहीं देखा।

एक बार उस बनिये को बड़े जोर का बुखार चढ़ा तो भी वह रामद्वारे तो आया ही। आना उसके हाथ में था पर वापिस जाना उसके वश में नहीं रहा। उसे पूरी तरह भरोसा हो गया कि यह उसका आखिरी चक्कर है। अब बचना असम्भव है। महन्तजी भी लख गये। बोले— भाई, अब थोड़ा तो

राम का नाम लो। वही साथ चलेगा। जन्म लेता है उसे तो एक न एक दिन मरना ही पड़ता है, इस में कोई अनहोनी बात नहीं। यह तो कुदरत की माया है।

बनिये ने कहा— महन्तजी, मरना तो है ही। मैं मरने की चिंता नहीं करता। पर मुझे रात को सपना आया कि मेरा आधा सांस कपाल में और आधा सांस गले में अटका रहेगा। इससे मेरी मुक्ति नहीं होगी। आप महर-बानी करके एक चंदन की बड़ी कील मेरे कपाल में और एक तीखी कील मेरे गले मे जोर से ठोक दें, वर्ना मेरी गति नहीं होगी। मैंने सारी उम्र आपकी सेवा बन्दगी की, अब इस आखिरी घड़ी में आप मुझे अपने हाथों उबार लीजिए।

महन्तजी ने भी सोचा कि इसमें क्या दोष लगता है! यदि बिचारे की मुक्ति होती हो तो चंदन की दो ठपकियां जड़ने में मुझे क्या जोर आता है। उन्होंने रामद्वारे के चन्दन की दो तीखी कीलें घड़ कर उसके मरने के बाद एक तो मुंह में और एक सिर में जोर से मार दीं।

बनिये के देहान्त की बात सुनी तो उसके सभी घर वाले रामद्वारे आये। तीन जवान बेटे थे। वे तीनों रोते हुए वहां पहुंचे। पर अपने पिता की यह हालत देखी तो उन्हें बहुत क्रोध आया। महन्तजी से पूछा तो उन्होंने मंजूर किया कि उन्होंने खुद सेठ के कहने के अनुसार, उनकी मुक्ति के लिए उपाय किया था। चन्दन की दोनों ठपकियां अपने हाथों से ठोकी थीं।

सेठ के बेटों ने कहा—मुक्ति का यह उपाय तो हमने आज आपके मुंह से ही सुना। पर आपकी इस मुक्ति को हम गृहस्थी लोग हत्या कहा करते हैं। आपने हमारे पिताजी की हत्या की है। हम तो पहिले राजाजी को फरियाद करेंगे।

यह बात सुनते ही महन्तजी के तो होश उड़ गये। उन्होंने बहुत हाथ जोड़े, पर सेठ के बेटे तो बिल्कुल नहीं माने। बोले— फांसी नहीं दिलवाएं तो बनिये के बेटे नहीं।

महन्तजी ने बहुत समझाया - बुझाया, माफियां मांगी, तो भी वे नहीं माने। आखिर लोगों ने बीच में पड़ कर चालीस हजार रुपयों में समझौता कराया। महन्तजी ने उसी समय अपने हाथ से चालीस हजार रुपये गिन कर दे दिये। उन्हें उस दिन के बोल याद आये कि वह मरने पर भी रुपये नहीं छोड़ेगा। इसलिए उसने तो मरने के बाद भी चार गुने वसूल कर ही लिए। हराम की कमाई नहीं पची सो नहीं पची।



उमर का परवाना

एक बनिये के सात बेटे थे। घर के चारों कोनों में लक्ष्मी पसरी हुई थी। सातों ही बेटे सपूत थे। सभी ब्याहे-गाहे। घर में अटूट सम्पति होते हुए भी उस बनिये ने सातों बेटों के लिए अलग अलग हवेलियां, सातों के लिए अलग अलग दूकानें और वित्त मवेशियों के लिए सातों के ही सात अलम अलग बाड़े बनवा दिये। एक ही बड़े अहाते पर उसने युक्ति पूर्वक यह सारा काम कर दिया। पर होनहार को नमस्कार! उसके सामने किसी का वश नहीं चलता! होनहार के चक्कर से घड़ी पलक में राजा का रंक और रंक से राजा बन जाता है।

तो होनहार के हाथों ऐसा बुरा पासा पलटा कि बनिये की उस भरीपूरी दुनिया का सर्वनाश हो गया। दुर्भाग्य की बात कि उस नई बस्ती में एक भूत का बसेरा था। वह अपनी भूख और इच्छा के अनुसार बारी बारी सबको गटकता गया। पहिले बनिये से ही बोहनी की। फिर बुढ़िया मां का काम तमाम किया। उस हत्यारे भूत ने तो न जवान देखा, न औरत और न बच्चा। एक एक बेटे और पोते को खाते खाते उसने तो बनिये का वंश ही उठा दिया। पीछे केवल सबसे छोटे बेटे की विधवा बहू बची। उसके पेट में सात महीने का बच्चा था। उसने भूत को झांसा दिया कि ये सारी हवेलियां खाली बुरी लगती हैं। मेरे भी ब्याहे हुए सात भाई हैं। मैं पीहर जाकर सातों को ही यहां बसाने के लिए ले आऊं। मेरे पीहर वालों से अगर यह बस्ती फिर बस जाय तो ठीक रहे।

भूत ने मन में सोचा कि वापिस बस्ती बस जाने से तो ठीक काम बन जायेगा। उसने उसे पीहर जाने की इजाजत दे दी। जाते समय पूरी तरह सावधान कर दिया कि जल्दी आ जाना। भूतो में शक्ति तो बहुत होती है पर उनमें अकल का अंश भी नहीं होता।

बनिये के सातवें बेटे की वह बाल-विधवा तो भूत को इस प्रकार झांसा देकर अपने पीहर के लिए रवाना हुई सो वापिस उस दिशा की ओर मुंह भी नहीं किया। भूत ने उसकी प्रतीक्षा में बहुत आंखें फाड़ीं पर उस मार्ग पर तो धूल भी उड़ती नहीं दिखाई दी। अन्त में दुखी होकर उसने उसकी आशा ही छोड़

दी। पर अपना डेरा वह उसी नई जगह पर जमाए बैठा रहा। भूला भटका कोई जीव, जानवर, पंछी या राहगीर वहां आ जाता तो वह उसका सफाया कर देता। पास की बस्ती को उसने कभी नहीं छेड़ा। बस्ती के सारे लोगों ने डरते हुए उससे वादा कर लिया कि वे घी, गुड़ और आटे का पूरा पेटिया उसके कहने के अनुसार रोज पहुंचाते रहेंगे। इसमें किसी प्रकार की भूल कभी नहीं होगी। यदि चूक हो जाय तो भूत अपनी इच्छानुसार बस्ती को दंड देगा। भूत भी इस इकरार को मान गया। उस दिन से ही उसके यहां सारी चीजें पड़ी मिलतीं। वह अपने हाथों से एक कड़ाही में हलुवा रांध कर रोज डकार जाता। खाने पीने के मामले में उसे किसी प्रकार की कमी नहीं आई। रहने के लिए सात बड़ी बड़ी खूबसूरत हवेलियां, सात दूकानें और सात वाड़े तथा खाने के लिए हर टंक गुड़ और घी का झरझरता हलुवा। उसके तो मौज बनी पर बनी।

इधर वह भूत अपनी मौज करता रहा और उधर बनिये के सातवें बेटे की वह विधवा बहू अपने पीहर में जीवन के दिन तोड़ती रही। किसी प्रकार के सुख की यदि आशा थी तो वह अपने बेटे की। उसका मुंह देख देख कर वह जी उठती। लड़का दूज के चांद की तरह दिनोदिन बढ़ता रहा।

इस तरह बेटे का मुंह देख देख कर उसने अपनी उमर के बारह बरस कम कर लिये और उसका बेटा बारह बरसों का होशियार लड़का हो गया। बचपन की चंचल उमर और ननिहाल का निवास! फिर क्या पूछना? भानजे ने तो ननिहाल में धमचक मचा दी। गिलोल से पनिहारियों के घड़े फोड़ डालता, मन करता उसी लड़के को छेड़ लेता, जबरदस्ती किसी के घर में घुस कर दही की हंडिया सबड़ जाता, बछड़ों की तरह लोगों की गायें भैंसे चूंघ जाता, चलते सवार की घोड़ी चमका देता और खेल खेल में बेईमानी कर जाता। उसके घर की पिछली बातें याद करके ननिहाल वाले गम खा जाते, कुछ कहते नहीं। इतनी शैतानी के बावजूद भी वे भानजे का खूब लाड रखते।

परन्तु एक बार एक नाई के लड़के को झुरनी खेलते समय उसने पटक दिया तो वह ताना मारता हुआ बोला — ऐसा ही बहादुर बनता है तो अपने घरवालों का बदला चुका। यहां क्या होशियारी बताता है! भूत के डर से ननिहाल में बैठा टुकड़े तोड़ रहा है। तेरे बाप और छः चाचाओं की भूत चटनी बना गया उसका तो गम खाये बैठा है और मेरे पर जोर आजमाता है!

बात सीधी लड़के के कलेजे में जाकर लगी। वह तो वापिस उत्तर दिये

बिना ही वहां से भागा सो अपनी मां के पास आकर ही दम लिया। हांफते हांफते ही पूछा –– मां, मां, अपना गांव कौनसा? हम यहां क्यों आये? अपने घरवालों को कौन सा भूत खा गया? मुझे सारी बात जल्दी बता!

बेटे के मुंह से यह बात सुनकर मां का कलेजा धक धक करने लगा। उसके पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई और आंखों के आगे अंधेरा छा गया। जिस बात का डर था वही सामने आई। अब इसे कैसे समझाया जाय? मां ने कई तरह बात टाल कर उसे भुलाने को कोशिश की पर उसने तो दूसरी बात सुनने से ही इन्कार कर दिया। बोला –– मां, सच्ची बात बता। मुझे भरमाने की बेकार कोशिश मत कर। मैं सच्ची बात जाने बिना तेरा पीछा नहीं छोड़ूंगा। भूत, प्रेत, राक्षस, जिन्द खवीस कोई हो, मैं घरवालों का बदला लेकर छोड़ूंगा। मेरी बुद्धि पर तू विश्वास रख।

पर मां के मन को कैसे भरोसा होता! उसने तो अपनी आंखों के सामने सारे घरवालों को मरते देखा था। फिर इस हठीले बालक की बुद्धि पर कैसे विश्वास हो! उसकी आंखों से ठलक ठलक आंसू बहने लगे। वह सिसकियां भरती बोली––बेटा, मैं बड़ी मुश्किल से पिछले दुखों को बिसार सकी हूं। वह तो मेरा जी जानता है; तू यह हठ छोड़ दे। हुई सो भाग्य की। होनहार पर किसी का जोर नहीं चलता। अपनी प्रसिद्ध गवाड़ी थी। माया और मनुष्य, दोनों के ठाट थे। पर देखते देखते मनुष्य और माया दोनों समाप्त हो गये। किसी का वश नहीं चल सका। बेटा, तू जिद्द मत कर। तेरा मुंह देख देख कर ही मैंने बड़ो मुश्किल से पिछले दुखों को भुलाया है। मैं तो तेरा मुंह देख कर ही जी रही हूं। भूत के सामने हम मनुष्यों का वश नहीं चलता। तू तो अभी बिल्कुल बच्चा है। कैसे बदला लेगा? मेरे समझदार बेटे, मैं तेरे पैरों पड़ती हूं, तू यह हठ छोड़ दे।

पर अन्त में मां अपने बेटे के हठ को ठीक तरह पहचान गई। रो रो कर तालाब भर दे तो भी वह मानेगा नहीं। फिर बाधा डालकर क्यों अपशकुन करूं? मुंह में मांगलिक गुड़ देकर उसने अपने बेटे को घरवालों का बदला लेने के लिए विदा कर ही दिया।

और लड़का पवन पंखी घोड़े के वेग से दौड़ता हुआ अपने गांव आया। बस्ती के सारे लोगों से मिला, पर अपने मन की असली बात प्रकट नहीं की। कहा –– पुरखों का गांव छोड़कर बाहर कहां धंधा करूं? ऐसी ऐसी हवेलियां और दूकानें खाली पड़ी हैं और मैं ननिहाल में बेकार बैठा रहूं? अब मेरी कमाने

लायक उमर हुई, कुछ न कुछ तो काम करना ही पड़ेगा। बनिये का बेटा हूं, लोगों के भरोसे कितने दिन टुकड़े तोड़ूंगा ? फिर भी आप लोगों के सामने नादान बच्चा हूं; आप लोगों की महरबानी बनी रहेगी तो सारी बातें ठीक हो जायेंगी। आप ही मेरे मां-बाप हैं, मैं आपका बच्चा हूं।

बस्ती के लोगों ने उसे समझाया--तू धंधे लगता है यह तो बहुत अच्छी बात है। पर उस नई बस्ती का नाम भी मत लेना। वहां एक शैतान भूत का डेरा है। तेरे सारे घरवालों को खतम कर दिया, सिर्फ नाम लेने के लिए तू ही बचा है। पुरानी हवेली और पुरानी दूकान में धंधा लगा, खूब बरकत होगी। हमें तो इस बात का अचंभा होता है कि तेरे जैसे कोमल बच्चे को तेरी मां और ननिहाल वालों ने भेज कैसे दिया ? तेरे बिना उनके मन को कैसे शांति मिलेगी ? धंधा है तो सब इस जीव के पीछे है।

लड़के ने कहा--मरना जीना तो कर्मों के वश में है। लिखे लेख टल नहीं सकते। कुछ भी हो, मैं तो वहीं बसूंगा।

लोगों ने बहुत समझाया तो भी वह नहीं माना। भरी दोपहरी लोगों के रोकते रोकते उसने तो अपनी उसी नई बस्ती में जाकर डेरा जमा दिया। उस समय वह भूत अपने एक मित्र जिन्द से मिलने गया हुआ था। लड़के ने खूब निश्चिंतता से सारी हवेलियां और दूकानें देखीं। कैसी सुन्दर इमारतें बनी हुई थीं पर आदमियों के बिना भांय भांय कर रही थीं। इमारत का असली सौन्दर्य तो इन्सान है। कोरे पत्थर कैसे ही सुन्दर घड़े हुए हों तो क्या होता है ! उसने निर्भय घूम घूम कर एक एक ठांव देखा। सब खाली पड़े थे। पूर्वजों ने किस स्पृहा से इनकी नींवें रखवाई थीं ? पर इस हत्यारे भूत ने उनकी सारी उमंगों पर पानी फेर दिया। जितना जल्दी बदला लूं, उतना ही जल्दी मेरा कलेजा ठंडा हो और तभी जीवन सफल हो।

घूमते घूमते वह एक हवेली की रसोई में पहुंचा। वह अवश्य भरी पूरी थी। एक कोने में गुड़ की भेलियों का ढेर लगा हुआ था। एक कोने में घी के पीपे पड़े थे और एक कमरे में आटे की बोरियों की थप्पियां लगी हुई पड़ी थीं। एक बड़ी सारी भट्टी पर कड़ाह चढ़ा हुआ था।

लड़के ने देखते ही लक्ष्य कर लिया कि भूत अपने हाथ से यहां रसोई बनाता है। रसोई का हाल बहुत बिगड़ा हुआ था। जगह जगह गन्दगी हो रही थी। भूत तो केवल खाने में समझता है। सफाई से उसे क्या प्रयोजन !

भूत से भिड़ते ही लड़का उसे चिड़ाना नहीं चाहता था। पहले पूरा पूरा

विश्वास जीत कर फिर मन चाही करनी। रसोई की यह बिगड़ी हुई हालत देखते ही उसने अपने मन में योजना तैयार करली कि भूत को आते ही कैसे खुश करना।

उसने अपने धोती के पल्ले ऊंचे चढ़ा कर काम करना शुरू किया जो सारी हवेली का झाड़ू बुहारा कर दिया, बर्तन मांज दिये और भट्टी जलाकर बढ़िया देवताओं के मन डिगाने जैसा झरझरता हलुवा पूरा कड़ाह भर कर रांध दिया। वह अच्छी तरह जानता था कि भूत शाम को परेशान होकर आयेगा। भूखों मरते उसका पेट धूधू जल रहा होगा। आते ही सीधा गलीच की तरह भट्टी जलायेगा। घी गुड़ और आटे का घोल रांध कर दोनों हाथों से कच्चा-पक्का निगल जायेगा।

वह आज आते ही कड़ाही में इस प्रकार का उम्दा स्वादिष्ट हलुवा बना हुआ तैयार देखेगा तो बेहद खुश होगा। हवेली की सफाई देख कर भी उसका मन प्रसन्न होगा। एक बार खुश होने के बाद तो मैं उसे पूरा वश में कर लूंगा।

शाम को लड़के ने जैसा सोचा वैसा ही हुआ। भूत तो गोधूलि होते ही खाऊं खाऊं करता आया। रसोई में जाते ही देखा कि कड़ाह में बढ़िया हलुवा पका-पकाया पड़ा है। सारी हवेली में देवताओं के रमने योग्य सफाई की हुई है। मौत के मुंह में आकर यह सारी तैयारी करने की हिम्मत किसकी हुई, कुछ भी समझ नहीं पड़ता।

हलुवे की सौरभ लेने के लिए उसने जोर से सांस खींचा तो उसको हलुवे के साथ मनुष्य देह की भी गन्ध आई। मनुष्य का मांस खाये उसे बहुत दिन हो गये थे। रोज दोनों वक्त मीठा खाते खाते उसके मन में ओक बैठ गई थी। पर भूख के आगे जोर क्या करता। उसे खाना ही पड़ता। पर आज मनुष्य की इस अनसोची सौरभ से उसके मुंह में पानी भर आया। वह बेचैन होकर बोला — आदमी की गंध! खाऊं खाऊं। आदमी का स्वाद लिए बहुत दिन हो गये। एक बार फिर कड़ाही के हलुवे को देखकर उसने इधर उधर नजर घुमाई।

इधर भूत का देखना हुआ और उधर लड़के का रसोई घर में आना हुआ। भूत लार टपकाता हुआ बोला—आज तो अनसोची दावत हो गई। बहुत दिनों से मनुष्य के मांस की मन में आ रही थी।

यह बात कह कर वह लड़के पर झपटा। पर लड़का तो निश्चिंत एक जगह खड़ा खड़ा हंसता रहा। उसका इस प्रकार हंसना देख कर भूत भी परेशानी में पड़ गया। पूछा — मैं तुझे खाने वाला हूं और तू हंसता है! तेरा

दिमाग तो खराब नहीं हो गया। मुझे इस हंसी का मतलब बता।

लड़का निश्शक होकर बोला— मैंने सारे दिन मेहनत करके अपने मामा के लिए इतनी सफाई से रसोई बनाई, जिसका मुझे यह फल मिला है ! पिछले जन्म में खोटे कर्म किये जभी तो भूत की योनि भुगत रहे हो, पर ऐसी अहसान-फरामोशी से तो प्रलय तक इस योनि से छुटकारा नहीं होगा। शाबासी देना तो दूर रहा, आपने तो आते ही न पूछा, न जाना, मुझे ही खाने के लिए मुंह फाड़ लिया।

भूत ने थोड़ा नरम पड़ कर पूछा—इस हवेली की ऐसी सुन्दर सफाई तूने की क्या और कड़ाही में यह महकता हलुवा तूने बनाया क्या ?

लड़के ने कहा—मैंने नहीं बनाया तो अपने आप ही बन गया क्या ? चित्त को थोड़ा ठिकाने रख कर पूछते तो सही। आज मुझे खाने से आपकी इच्छा पूरी हो जायेगी, पर कल क्या खायेंगे ? मुझे खा जाने से अगर आपकी उमर भर भूख मिटती हो तो मै खुद मरने के लिए तैयार हूं। मैं चला कर मामा की सेवा बंदगी करने के लिए आया और यहां मामा ने मेरा ऐसा लाड़ प्यार किया ! धिक्कार है आपको। मैं तो बड़ी उमंग और इच्छा से यह सोच कर यहां आया कि मेरे मामा अकेले दुख पाते होंगे। बीमारी-मांदगी में उनकी कौन सेवा करता होगा। मैं हवेली की सफाई रखूंगा, रोज मामा को खाना बनाकर खिलाऊंगा और पैर दबाऊंगा। सोते वक्त उनका शरीर खूंदूंगा। यह विचार कर यहां आया था पर आप तो मुझे खाने दौड़े ! अब आपको जो उचित लगे वही करिये।

भूत ने भी सोचा कि ऐसा होने पर आराम तो खूब ही मिलेगा। सचमुच मेरे अकेले रहने से दुखों का पार नहीं। दोनों वक्त रसोई बनाकर अगर खिला दे तो मेरा सारा धूंआ-फूंका मिट जाय। भानजे के आने से तो बढ़िया काम बना। बूढ़ी हड्डियां है, रात को खूंदने से नींद भी गहरी आयेगी। उसने भानजे को खाने का विचार त्याग दिया। खुश होकर बोला— मुझे तेरे मन की बात का कैसे पता चलता ! अब बताने से सारी बातें ठीक तरह समझ में आ गई। तू निर्भय और निश्शंक होकर यहां मौज कर। पहले ही अगर चिट्ठी में लिखकर ये सारे समचार भेज देता तो मैं तुझे खाने की बात ही नहीं करता। बिना समझाये तो मुझे भी क्या पता चले ? अब यह घर तेरा। किसी बात की चिन्ता मत करना। घी, गुड़ और आटा खूब भरा पड़ा है। इस कड़ाही को कभी खाली मत रहने देना। दोनों, मामा और भानजा सारे दिन माल उड़ायेंगे और आनन्द करेंगे। देखूं आज तूने कैसा हलुवा बनाया ?

यह कह कर वह तो कड़ाही में ही खाने बैठ गया। सबड़ सबड़ दोनों हाथों से खाने लगा सो गरमागरम हलुवा खाता ही गया। तृप्त और प्रसन्न होकर बोला — वाह, खाने का मजा तो आज ही आया।

खुद का गले तक पेट भर जाने के बाद वह बोला — अरे, तू भी तो भूखा होगा। खाले, पेट भर कर खाले।

तब भानजा जबरदस्ती हंस कर कहने लगा — आपका पेट भरने के बाद भी मेरा ध्यान तो आया; पर मिलते ही मुझे खाने की जो धमकी दी उसे याद करके तो मुझे दो महीने तक भी भूख नहीं लगेगी।

भूत पश्चाताप करता हुआ बोला — अब उस बात को बार बार याद मत दिला। मुझसे बड़ी भूल हो गई। फिर अपने भानजे की मनुहार करता हुआ कहने लगा — ले, आजा, इच्छा हो उतना ही खा ले। हलुवा क्या ताजा बना है! मैं अपने जीवन में कभी ऐसा तृप्त नहीं हुआ।

भानजे ने कहा—यह कड़ाह तो आपको ही पूरा नहीं पड़ेगा और मुझसे आज एक कौर भी नहीं खाया जायेगा। मैं कोई संकोच थोड़े ही कर रहा हूं? मेरा तो घर है!

यहां लड़का थोड़ा झूठ बोला। उसने तो पहिले बनाते समय ही पेट भर हलुवा खा लिया था। और इस फूहड़ के साथ बैठ कर तो कुत्ता भी खाना नहीं खा सकता! देखते ही घिन आती है। भूत उस कड़ाह को पूरी तरह चाट-चूट कर साफ कर गया। बड़ी मुश्किल से खड़ा हुआ। पेट पर हाथ फेर कर लगातार चार पांच डकारें लीं—जैसे बादल गरजे हों। वह भानजे पर इतना खुश हुआ कि जिसका पार नहीं।

भानजे ने तो आते ही मामा पर पूरी तरह मंत्र फेर दिया। कितना जल्दी घरवालों का बदला ले, तभी उसका कलेजा बर्फ जैसा ठंडा होगा। वह हरदम इसी ताक में रहता। पर कोई खास तरकीब उसे सूझी नहीं। वह भूत तो रोज सवेरे रोटी की जगह कड़ाह भर हलुवा खा कर जाता जो शाम पड़ने पर वापिस लौटता। इधर उधर घूसता फिरता और मौज मारता। भानजे के आने से उसे किसी बात की चिन्ता नहीं रही। वह अपने दोस्तों और साथियों के पास दिन भर बातें करता या खेलता। भानजा, उसे किसी भी प्रकार मारने का सुराग लगाना चाहता था। पर अभी तक योजना बैठी नहीं थी। एक दिन भानजे ने उलाहना देते हुए कहा—मामाजी, आप तो सारा दिन बाहर घूमते फिरते हैं पर मेरा इस बड़ी सारी हवेली में अकेले बैठे मन नहीं लगता। मैं डरता भी बहुत

हूं। किसी तरह दिन निकालता हूं। या तो मुझे भी अपने साथ ले चलिए या आप भी दिन भर यहां रहिए।

भूत ने कहा—बच्चे, कैसी भोली बातें करता है। मैं तो फिर भी तुझे अपना भानजा समझ कर व्यवहार करता हूं, पर दूसरे भूत पलीत तेरे से यह रिश्ता थोड़े ही निभायेंगे ! किसी की भी नीयत खराब हो गई तो तू बेकार मारा जायेगा। हम भूतों की योनि में मनुष्यों का पूरा निषेध है। अब तू कहे जैसा करूं !

भानजे ने कहा—तो यहां मेरा मन नहीं लगता। अकेले बैठे बैठे मेरा जी घुटता है। आपकी आज्ञा हो तो मैं अब चला जाऊं।

भानजे के जाने की बात सुनते ही भूत का तो कलेजा बैठ गया। उसके जाते ही उसे खाने पीने की माथापच्ची करनी पड़ेगी। चार पांच दिनों में ही कितना आराम आ गया। उसने कहा—तू कहेगा तो मैं ज्यादातर यहीं रहूंगा। पर तू जाने का नाम मत लेना।

भानजा सचमुच जाना कहां चाहता था। वह तो भूत का मन देखना चाहता था। भूत ने बहुत मनुहारें कीं तो वह मान गया। उस दिन अमावस्या थी। दिन को तो भूत घर पर ही रहा पर शाम को खाना खाने के बाद उसने कहा—भानजे, आज की रात तो मुझे बाहर जाना ही पड़ेगा। और सारी रात बाहर रहूंगा।

भानजे ने कहा—मुझे तो दिन को ही यहां डर लगता है और आप रात की बात करते हैं। मुझे निकालना चाहते हों तो साफ साफ कह दीजिए। मुझे लगता है कि आप मुझ से परेशान हो गये हैं। मुझे तो समझ में नहीं आता कि रात को ऐसा क्या काम हो सकता हैं ?

भूत बोला—तू क्या बात करता है ? मैं और तेरे से परेशान ! मुझे इतना आराम तो मेरी उमर में कभी नहीं मिला। सिर्फ एक रात बाहर रहूंगा। अमावस की रात हमारी सभा जुड़ती है। हम सारे भूत, पलीत, जिंद, खबीस, राक्षस, दैत्य, यमराज और विधाता—सब इकट्ठे होकर सलाह करने के लिए सभा करते हैं।

भानजे ने पूछा — इस सभा में आप सब इकट्ठे होकर क्या विचार करते हैं ?

भूत ने कहा—तुम मनुष्य योनि वालों के मरने के अक्षर विधाता बताते हैं। जिसके मरने की बारी हो उसे मारने का यमराज आदेश देते हैं। फिर हम

भूत, पलीत, जिन्द और दैत्य उसे मारकर यमराज के सामने हाजिर करते हैं।

भानजा भोला बन कर पूछ बैठा — इतने अगणित आदमियों का लेखा कौन रखता है और कैसे रखता है ? कभी भूलचूक हो जाय तो ?

भूत हंस कर बोला — वाह रे पगले, विधाता के अक्षरों में भी कभी भूल चूक हो सकती है ?

भानजे ने फिर बेहद भोलेपन से पूछा—मामाजी, भगवान न करे, आपके कुछ हो जाय। पर संयोग से आपके कुछ हो गया तो मेरा क्या हाल होगा ?

भूत डग डग हंसता हुआ बोला — तू निश्चिंत रह, मेरा कभी कुछ नहीं विगड़ सकता। मेरे कपाल में अमृत का कटोरा है। वह अन्दर रहेगा तब तक मैं नहीं मर सकता। मुझे मार कर कोई उसे बाहर निकाल ले तब मैं मरूं। और यदि उस कटोरे के अमृत की एक बूंद भी गिर जाय तो मैं वापिस जिन्दा हो जाऊं। मेरी बात तो छोड़, अगर वह कटोरा सौ बरसों पुरानी हड्डियों पर भी छिड़क दिया जाय तो वे जीवित हो जांय। मेरे साथ कभी ऐसी-वैसी बात हो जाय तो तू इस बात का ध्यान रखना।

भानजे ने कहा— मैं आपका ध्यान नहीं रखूंगा तो और किसका रखूंगा ? पर मामाजी, आप उस सभा में जांय तो एक काम मेरा भी कर दीजिए। मैं एक पुरजे पर मेरा और मेरे घरवालों का नाम लिख कर देता हूं। आप मेरी उमर का परवाना निकाल कर लाइये। देखूं, विधाता के लेख सच होते हैं कि भूठ।

तो भानजे ने अपने मामा को दो पुरजे लिख कर दे दिये। मामा, भानजे को खुश करने के लिए ठीक तरह जाब्ते से उन्हें अपने साथ ले गया। दूसरे दिन सवेरे सवेरे आते ही बोला — तूने कहा वह काम करके आ गया हूं। तेरी उमर तो अस्सी वर्षों की है। और तेरे घरवालों के लिए विधाता ने एक आश्चर्यजनक बात कही है कि वे सब एक बार मर कर वापिस जीवित हो जायेंगे। उनके भाग्य में ऐसा ही लिखा हुआ है।

बात सुन कर भानजा मन में तो बहुत खुश हुआ पर मामा को मन का भेद बताया नहीं। मजाक करता हुआ बोला —– तब तो मामाजी, मुझे तुम्हारे विधाता की बातों में कोई सार नहीं दिखाई देता। मरे हुए भी कभी वापिस जीवित हुए है। और मेरे भी अस्सी वर्षों का कोई भरोसा नहीं। मुझे तो यह बच्चों के खेल जैसा दिखता है। आज रात को वापिस जाकर ठीक से खरा कर पूछो तो मैं निश्चिंत होऊं।

भूत ने कहा— तू कहता है तो मैं आज फिर जाकर पूछ लूंगा। पर यह बात निश्चय समझ कि विधाता के अक्षर कभी झूठे नहीं हो सकते। मेरे हजार बार परखी हुई बात है।

दिन ढलते ही भूत फिर विधाता के पास गया। भानजे ने कही, वे सारी बातें खरा खरा कर पूछीं और उसी समय भानजे के पास लौट कर आया। बोला — मैंने तुझे पहिले ही कह दिया था कि उस बात में कोई मीन-मेख नहीं। बल्कि विधाता मुझ पर बहुत नाराज हुए। तेरी पूरी अस्सी वर्षों की उमर है। इसमें न तो कोई राई घटेगी और न तिल बढ़ेगी। और तेरे घर वाले एक बार फिर जीवित होंगे।

भानजे ने पहिले से ही सारा इन्तजाम कर रखा था। भूत की बात पूरी होते ही उसने लपक कर रसोई का दरवाजा बन्द कर दिया। जगमगाती भट्टी में एक छबड़ी भरी पीसी हुई मिर्चें डाल दीं। मिर्चों के धुंए से भूत की सारी शक्ति क्षीण हो गई। उसे दिखना तक बंद हो गया। कोने में छिपाई हुई नंगी तलवार पड़ी थी। भानजे ने तो एक पलक में वह तलवार झपट कर उठाली। एक हाथ में भूत की चोटी पकड़ कर कड़कता हुआ बोला— विधाता के अक्षर झूठे नहीं होते तो ले, अब तुझे मजा चखाऊं। बहुत दिन हो गये तुझे इन हवेलियों में मौज उड़ाते ! मैं हूं इस नई बस्ती का मालिक। तेरी बोटी बोटी काट कर छोड़ूंगा, तब मेरे घरवालों का बदला पूरा होगा।

भूत कांपता हुआ बोला— भानजे, एक बार मेरी चोटी छोड़ दे। मैं तुझे हीरे मोतियों का अमूल्य खजाना बता दूंगा।

भानजे ने कहा-- ले, यह तेरी चोटी छोड़ता हूं।

यह कह कर उसने दूसरे हाथ से वार किया। तच् करके मुण्ड अलग हो गया और दूसरे झटके में उसने सिर के दो टुकड़े कर दिये। भूत की कपाल में से अमृत का कटोरा बाहर निकाला। फिर भाग कर नीचे तहखाने में गया। वहां उसके घरवालों की हड्डियां पड़ी थीं। अमृत का छींटा देते ही सारे लोग जीवित हो उठे। जम्हाई लेकर बोले— आज तो नींद बहुत गहरी आई।

फिर लड़के ने सब को पूरी बात ठीक तरह बताई। उसकी बुद्धि से सब को दूसरा जन्म मिला। सबने अपनी अपनी हवेलियों और अपनी अपनी दूकानों में फिर मुहूर्त निकाल कर प्रतिष्ठा की। बस्ती के सारे लोगों ने खुशियां मनाई कि उस हत्यारे भूत का खात्मा हो गया।

वहां के सारे कामों से निपट कर लड़का पिताजी को साथ लेकर अपने

ननिहाल गया। ननिहाल वालों की खुशी का तो क्या पूछना। उसकी मां तो हर्ष में आधी पागल सी हो गई। पीहर वालों ने खूब उत्सव मनाये और बड़े प्यार से उसे सुहागन का सिंगार पहनाया। गाजे बाजे सहित उसे ससुराल के लिए विदा दी। मार्ग में बेटे ने उमंग से कहा—मैंने उस दिन कहा नहीं था मां, कि घरवालों का बदला लेकर छोड़ूंगा। उमर का परवाना सुनते ही मैंने तो मूली गाजर को काटने की तरह भूत का सिर काट लिया। तुरन्त उसके सिर के दो टुकड़े करके अमृत का कटोरा निकाला। अमृत छिड़कते ही सारे जैसे नींद में से जगे। बुद्धि के बल के सामने बिचारे शरीर के बल की क्या बिसात ?

मां ने बांहें फैला कर बेटे को छाती से लगा लिया। उसकी आंखों से हर्ष और आनन्द के आंसू उमड़ पड़े। आज उसे जीते जी नया जीवन मिला था।



नींद का क्या ?

एक चोर बहुत दिनों तक एक बनिये के सोने की जगह का पता लगाना चाहता था तो भी उसे इस काम में सफलता नहीं मिली। चोर सोचता था कि अगर सेठ के सोने की जगह का पता चल जाय तो चोरी करने में सुविधा रहे। और उधर सेठ किसी को अपने सोने का भेद नहीं देना चाहते थे। वे जानते थे कि सोना तो आधी मौत होती है। कानों के लौंग और गले की कंठी भी कोई खोल कर ले जावे, तो पता नहीं चले। अपनी सुरक्षा अपने हाथ में है। एक बार चूके कि गये।

अन्त में हार कर चोर ने सेठ से ही तरकीब लगा कर उनके सोने की बात पूछनी चाही। इसमें क्या बुराई है ?

दूकान से दोपहर को सेठ खाना खाने घर जा रहे थे। तो चोर उनके साथ हो गया। पूछा—सेठजी, रात-बिरात कुछ सौदा लेने की जरूरत पड़ जाय तो आप रात को कहां मिलते हैं ? मेरा मतलब है कि रात को आप सोते कहां हैं ?

सेठ उसके जैसे सैकड़ों चोरों को अपनी अंगुलियों पर रमाये हुए थे। वे क्या

निकाल कर देते ! हंस कर बोले—पागल, हमारा क्या, सोवें हाट, सोवें बाड़े, सोवें नोहरे, सोवें और सोवें ही नहीं ।

चोर ने पूछा—यह कैसे ?

सेठ बोले—तू समझे जैसे ही। चोर शर्मा कर वापिस लौट गया । अच्छी तरह जान गया कि इन तिलों में तेल कहां ?



यहां क्या पोल देखी ?

एक लखपति बनिया था । वह अपनी माया के लिए भी आसपास के इलाके में प्रसिद्ध था और अपने मूंजीपन के लिए भी उसका बेहद नाम था । उसके मूंजीपन की कई दंत कथाएं फैली हुई थीं । रोटी खाने के बाद वह कुल्ला भी कभी नीचे नहीं थूकता, पेट में ही गिट जाता । क्योंकि दांतों में रोटी और भाजी का जो कस रह जाता है वह भी व्यर्थ क्यों जाय ? चांदनी रातों में कहीं भी दिया नहीं जलाने देता । जल्दी पेट भरने के लिए भोजन के बीच में चार पांच बार पानी पी लेता। पैरों में फटे हुए जूते और सिर पर फटा हुआ चिथड़ा बांधे रखता । पर मूंजी होते हुए भी वह नेकनामी था । खोटी कमाई नहीं करता । न अकर्म की ठगाई करता और न ठगाता ।

उसे ठगने के लिए कई ठगों ने कई तरकीबें आजमाईं पर वह कभी ठगा नहीं गया। एक बार दो ठगों ने मन में विचार किया कि आज तक यह बनिया अपने पंजे में फंसा नहीं, अपनी ठगाई में भूल है । अब यह ठगा तो कभी जा ही नहीं सकता । लूट खसोट के सामने कहां जायेगा ? चवन्नी की चीज ही खोस लेनो पर खोसनो अवश्य । इसे बिल्कुल कोरा छोड़ने से तो अपनी जात पर लांछन लगता है ।

शाम पड़े सेठ हर रोज निपटने के लिए जाया करते थे । वे दोनों ठग इसी ताक में बैठे रहे कि सेठ का लोटा खोस लें । वे मार्ग में एक झाड़ी के पीछे छिप कर बैठ गये । सेठ पास हो कर गुजरें तो उन्होंने लोटा छीन लेने की योजना बनाई । एक ने कहा कि मुझे लोटा तांबे का दिखाई दे रहा है

और दूसरे ने कहा कि लोटा पीतल का है। वे बहुत ही धीमे बोले तो भी सेठ के कानों में भनक पड़ गई। भनक पड़ते ही उन्होंने उपाय सोच लिया। झाड़ी के पीछे छिपे हुए चोरों को सुनाते हुए थोड़े जोर से बोले — सेठानी को बीस बार फटकार दिया कि मेरे लिए चांदी का लोटा भर कर रखा कर। पर वह तो मलीच स्वभाव की ठहरी; इसी लोटे से काम चलाना चाहती है। इस बेडौल लोटे से मेरी कितनी भद्द उड़ती है। अभी का अभी वापिस जाकर चांदी का लोटा लाऊंगा। औरतों में तो अकल का नाम ही नहीं होता !

सेठ यह बात गुनगुना कर वापिस मुड़ गये। आगे एक कदम भी नहीं चले। ठगों ने सोचा कि सेठ चांदी का लोटा लेकर वापिस आयेंगे तब वह कीमती लोटा ही छीनेंगे। इस फूटे हुए लोटे के लिए कौन झगड़ा करे।

सेठ थोड़ी दूर वापिस घर की ओर चले तो वे दोनों भी उनके पोछे हो गये। जब चांदी का लोटा लेकर वापिस बाहर निकलेंगे तो उसी समय एका-एक झपट कर लोटा छीन लेंगे। एक ठग तो दौड़कर पीछे से उनकी आंखें बन्द कर लेगा और दूसरा कलाई मरोड़ कर लोटा खोस लेगा।

पर सेठ तो मुख्य द्वार के दरवाजे की आगल बन्द कर भीतर गये सो वापिस बाहर निकले ही नहीं। ठगों ने बहुत देर तक उनकी राह देखी। अन्त में प्रतीक्षा करते करते परेशान हो गये तो सेठ के घर की दीवार के बिल्कुल पास आये और रोशनदान से झांक कर देखने लगे कि सेठ क्या करते हैं ? शायद किसी नई बात का पता चल सके।

इधर सेठ के मन में भी पूरा वहम था कि ठग आसानी से पीछा नहीं छोड़ेंगे। चांदी के लोटे के लोभ में वे उसी जगह खड़े रहेंगे। देखें तो सही कि वे कहां हैं ? यह सोच कर उन्होंने उसी रोशनदान से बाहर देखने का विचार किया।

चोर और सेठ, दोनों ने ही एक साथ उसी रोशनदान से आमने सामने देखा। सेठ की नजर कमजोर थी, इसलिए उनको रोशनदान से अड़ा हुआ चोर का मुंह नहीं दिखाई दिया पर चोर ने तो अन्दर नजर फेंकते ही सेठ का मुंह देख लिया। सेठ की लम्बी मूंछें थीं। उसने झट हाथ आगे करके उसकी एक मूंछ पकड़ली। सेठ तो घर में बैठे-बिठाए बुरे फंसे। पर मूंछ के झटका लगते ही उन्हें तरकीब सूझ गई। जोर से आवाज देकर बोले — सेठानी, सेठानी, सौ रुपये लेकर जल्दी से आ। चोर ने मेरी मूंछ पकड़ली है। मूंछ पकड़ने से तो सौ रुपयों में ही पीछा छूटता है। अगर नाक पकड़ लिया तो पांच सौ रुपये देने

पड़ेंगे। दौड़, दौड़, जल्दी सौ रुपये दे दे। दिखता नफा है चार सौ रुपयों का।

चोर ने मन में सोचा कि नाक पकड़ने से यदि पांच सौ रुपये हाथ आते हों तो यह सामने दिखता चार सौ का घाटा क्यों खावें ? मूंछ की जगह नाक पकड़ते क्या देर लगती है ! उसने सेठ के कहते ही पांच सौ रुपयों के लोभ में तुरन्त मूंछ छोड़ दी और नाक पकड़ने को हाथ बढ़ाया। पर सेठ तो इसी अवसर की ताक में थे। मूंछ छूटते ही झट मुंह पीछे हटा लिया। चोर ने नाक पकड़ने के लिए बहुत छीना-झपटी की, पर नाक कहां ? सेठ ने तो और बुरी की। दौड़ कर चूल्हे में से जलती हुई लकड़ी लाकर उसके हाथ में पकड़ा दी। चोर ने चीख कर झट हाथ बाहर खींच लिया तब सेठ डग डग हंसते हुए बोले : भाई, यहां क्या पोल देखी ? तुम्हारा दिमाग तो घास चरने नहीं चला गया है ? एक फूटा हुआ लोटा ही हाथ नहीं लगने दिया जो मैं पांच सौ रुपये कब देता ! तुम्हें थोड़ा बहुत तो विचार करना था। तुम ठग हो तो मैं भी जात का बनिया हूं। तुम्हारे उस्तादों का ही उस्ताद। मैं क्या निकाल कर देता ! तुम्हारे कई भाई खप खप कर मर गये पर मेरे से कुछ वसूल कर लिया हो तो पूछ लेना। इस बार तो जलती लकड़ी से ही पीछा छोड़ता हूं, पर फिर कभी आये तो ऐसी करूंगा कि याद रखोगे।



चोर का सयानापन !

एक सेठ के, दो घड़ी रात रहते नींद से उठने का नियम था। दातुन कुल्ला और स्नान करके वे घड़ी आध घड़ी पूजा पाठ करते। और फिर कलेवा करके अंधेरे अंधेरे ही दुकान खोल लेते। एक बार वे रोज की तरह देहरी पर बाल्टी रख कर दातुन कुल्ला करने लगे कि संयोग से उनको सामने की बोरियों के पास एक चोर छिपा हुआ दिखाई दिया। सेठ ने मन में सोचा कि हल्ला करने से तो काम बिगड़ जायेगा। कमीना चोर कहीं घात कर बैठा तो चोरी से भी सवाई होगी। जीते रहे तो धन बहुत कमा लेंगे, पर यदि अंग भंग हो गया तो यह माया क्या काम आयेगी ? यह सोच कर उन्होंने न तो हल्ला किया और न चोर को ही इस बात का पता चलने दिया कि उन्होंने उसे देख लिया है।

सेठानी दातुन के लिए तम्बाकू का गुल लेकर आई। सेठानी के पास आते ही उन्होंने तुरन्त उपाय सोच लिया। बाल्टी के पानी से मुंह में पूरा कुल्ला भर कर सेठानी पर थूक दिया। सेठानी बोली—दिखता नहीं है क्या? मुझ पर कुल्ला थूक दिया। सारे कपड़े गन्दे कर दिये। मैं तो दातुन के लिए गुल लेकर आई थी और मुझे ही भर दिया। लो, हाथ बढ़ाओ, मैं कपड़े बदल कर आऊं!

पर सेठ ने तो न कोई जवाब दिया और न गुल लेने के लिए हाथ ही बढ़ाया। गुमसुम से अपनी जगह पर बैठे रहे। फिर दूसरा कुल्ला उन्होंने चोर पर थूका। सेठानी को अभी तक चोर का पता नहीं चला था। सेठ ने चोर पर कुल्ला थूक कर फिर तीसरा कुल्ला सेठानी पर थूक दिया। सेठानी फिर बड़बड़ाई—करते क्या हो? मेरे अच्छे भले कपड़े गीले कर दिये। पर सेठ ने तो सेठानी की बात न सुनी न समझी। मुंह नीचा किये वे तो बारी बारी से एक कुल्ला चोर पर और एक कुल्ला सेठानी पर थूकते ही गये। कुल्लों की धार बांध दी।

सेठानी को बेहद गुस्सा आया। वह अपनी हथेली का गुल नीचे गिरा कर अलग खड़ी हो गई। सेठ को झिड़कती हुई बोली—राम मारे, तुम्हें आज यह क्या बुरी सूझी है। कहीं पागल तो नहीं हो गये। रोज मना करती हूं कि आधी आधी रात बैठ कर हिसाब किताब मत किया करो। दिमाग फिर गया तो तुम्हारी यह पोते बाकी क्या काम आयेगी। आखिर मैंने जो कहा था वही हुआ।

सेठ ने तो कुछ जवाब नहीं दिया। बारी बारी से एक कुल्ला चोर पर और एक सेठानी की तरफ मुंह करके वे तो थूकते ही गये। बाल्टी आधी से से ज्यादा खाली कर दी।

चोर के सारे कपड़े भीग गये तो भी वह तो अपनी जगह से हिला नहीं। चुपचाप वहीं खड़ा रहा। उसने सोचा कि सचमुच ही सेठ का तो दिमाग फिर गया है। सेठानी खम्भे के पीछे खड़ी होकर बोली — गीगा के बापूजी, आज तुम्हें यह क्या पागलपन सूझा। ऐसी हरकतें मत करो; मुझे तो डर लगता है।

पर सेठ ने तो सेठानी के कहने की कोई परवाह नहीं की। चुपचाप चित्त भ्रष्ट की तरह कुल्ले थूकते रहे। सेठानी तो आखिर डर कर घर से बाहर निकली। आवाजें दे दे कर पड़ौसियों को इकट्ठा कर लिया। सिसकती हुई बोली — चल कर तो देखो; सेठजी तो पागल हो गये। न बोलते हैं न सुनते

हैं। चुपचाप दो घड़ी से कुल्ले पर कुल्ले थूक रहे हैं। मेरे सारे कपड़े एकदम गीले कर दिये। बहुत समझाया पर मानते ही नहीं।

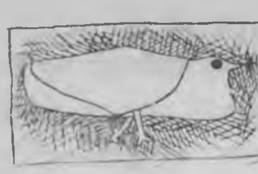
सेठानी के कहते ही चार पांच लोग दौड़ कर आये। देखा तो वास्तव में यही लीला। सेठ तो विमूढ़ होकर बोरियों के पास मार कुल्ले पर कुल्ले थूक रहे हैं। यों करते करते थोड़ी देर में अच्छी खासी भीड़ हो गई। पर सेठ ने तो किसी के सामने देखा तक नहीं। बाल्टी से चुल्लू भर भर कर पानी मुंह में लेते और सामने कुल्ले थूकते जाते। सेठानी तो बहम के मारे रोने लगी। तब एक समझदार आदमी ने सेठ का हाथ पकड़ कर कहा — भले आदमी, यों करते क्या हो? बच्चों की तरह कभी से कुल्ले थूक रहे हो। थूक थूक कर सेठानीजी के सारे कपड़े भर दिये। बात हो सो कहो तो सही।

इतनी देर के बाद सेठ बोले —मैं तो सेठानी का धीरज परखना चाहता था। उसके लिए मैं रात दिन धंधा करता हूं, दुःख उठाता हूं, झूठ सच करता हूं और वह मेरे इतने से कुल्ले थूकने को सहन नहीं कर सकी? झट छेह दे दिया। इससे अच्छा तो यह बेचारा चोर है जो कभी का चुपचाप मेरे कुल्ले थूकना सहन कर रहा है। मुझे रोका तक नहीं। सर्दी की रात में भीग गया तो भी मुंह से चूं तक नहीं किया।

यह कह कर सेठ थोड़ा सा मुस्कराए और बोरियों की बगल में छिपे हुए चोर की ओर हाथ का इशारा कर दिया। सारे पड़ौसी मारने को पिल पड़े सो मार मार कर चोर का फूस निकाल दिया। इतनी अच्छी तरह मारा कि उसका तो सिर चकरा गया।

फिर सेठ ने गर्व से सेठानी की ओर देख कर कहा — अब बोल, मेरा दिमाग खराब हो गया था कि तेरा!

सेठानी ने हंस कर घूंघट निकाल लिया। क्या जवाब देती!



शौर्य का नमूना !

एक सगाई के मौके पर ठाकुर - सरदार लोग इकट्ठे हुए। सुरंगी जाजम की बिछायत हुई और काच जैसा कोटाशाही अफीम गलाया गया। सारे सरदार हाथों में तलवारें, भाले, बरछी और ढालें लिए मूंछों के बट देते हुए जाजम पर बिराजे हुए थे। अफीम की गलनियां झरने के समान झर रही थीं।

खारक, गुड़ और बताशों के थाल भरे हुए थे। हथेलियां भर भर कर अफीम की मनुहारें होने लगीं, और उधर दमामी अफीम को रंग देने लगे :

गढ़ ढाहण, गोळा गिळण, हाथियां देण हमल्ल।
बैरियां हाथ बतावणा, आइयौ मित अमल्ल ॥
अमल अटंकां लीजिए, कांठै बसिये बास।
कांटा बिन आंटा किसा, सत्रवां धड़कै सास ॥
अमल अरोड़ी फूल मंद, बाकर मांस बटक्क।
मिळियां लीजै माधवा, गळियां तणा गटक्क ॥
तूटै घर सांधौ लगै, सूनै महल चिराग।
रूठा रांजिद रिळमिळै, आइयौ मित अैराक ॥
अमलां थें उनमादिया, सैणा हूंदा सैण।
तौ बिन घड़ी न आवड़ै, फीका लागै नैण ॥
रंग रांमा रंग लिछमणा, रंग दसरथ रा जायां।
लंका लूटी सोवनी, मिळ दोनूं भायां ॥
रंग रामा, रंग लिछमणा, रंग दसरथ रा लालां।
लंका लूटी सोवनी, भळकंतां भालां ॥
रंग रामा रंग लिछमणा, रंग दसरथ रा बेटां।
लंका लूटी सोवनी, कर कर आखेटां ॥
रंग रंगीला ठाकरां, रंग दसरथ रा कंवरां।
भुज रावण रा भांगिया, आ ळीजा भंवरां ॥

रंग केसर की क्यारी को, रंग गंगा की झारी को, रंग तीखे से भालों को रंग आबू के झालों को, रंग पद्मिनी रानी को, रंग कोयल की वाणी को, रंग नागौरी नारों को, रंग प्रभाती तारों को, रंग जमुना के कूलों को, रंग सुरंगे फूलों को, रंग दक्षिण के बाव को, रंग अफीम की चाह को, रंग चम्बल की धारों को, रंग सभी सरदारों को।

इधर दमामी रंग देते गये और उधर सारे सरदार हथेलियां भर भर अफीम पर अफीम जमाते गये। जब सब लोग नशे में चूंच हो गये तो फिर आदेश हुआ कि हां, कसूंबा फिर गलाया जाय।

हाजरिया ने अर्ज की—हुकुम, पानी खतम हो गया है। थोड़ी देर आराम फरमाइये। कुम्हार घड़े लेकर दौड़े हैं, अभी वापिस आ जायेंगे।

एक सरदार ने नशे में ही टप्पा मार दिया—पानी लेने कहां गये हैं?

हाजरिया ने जवाब दिया—हुकुम, बावड़ी पर।

सरदार ने फिर पूछा—यह बावड़ी कितनी दूर है? हाजरिया ने बताया : हुकुम, दसेक खेत दूर है। अभी आते होंगे।

सरदारों को अफीम चढ़ा हुआ था। उन्हें पानी लाने में देर बर्दाश्त नहीं हुई। एक दुबले पतले सरदार हाथ में भाला लेकर खड़े हो गये। लड़खड़ाते हुए जोर से बोले—दूर बावड़ी से तो पानी लाना भी मुसीबत है। सम्बन्धी भी क्या जानेंगे कि कोई सरदार आये तो थे। चलो उस बावड़ी को ही यहां उठाकर ले आएं।

नशे में धुत्त हुए सारे सरदारों को भी यह बात जच गई। सभी एक साथ बोले—यह बात तो सरदारों ने पते की कही। चलो, चलो, बावड़ी को यहीं उठा लावें।

अपने अस्त्र शस्त्र लेकर सारे सरदार उठ खड़े हुए। तब एक सरदार ने कहा—इन तलवारों और भालों का क्या काम? वहां कौनसा युद्ध करना है।

बाकी सबने भी स्वीकार किया—हां, हां, वहां कौनसा युद्ध करना है? खाली हाथ ही चलना चाहिए। पर तभी एक बूढ़े सरदार ने टोका—सरदार लोगों को कहीं पर खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। यदि बावड़ी लाते हुए किसी ने अपने को रोका, तो उनको शायद दो दो हाथ दिखाने पड़ेंगे।

इस बात को भी बाकी सब सरदारों ने स्वीकार किया—हां हां, बात तो सरदारों ने पते की कही। चलो, सब अपने अपने हथियार लेकर चलो। आज तो बावड़ी को यहां लाकर छोड़ेंगे।

इस प्रकार अफीमची सरदारों का जत्था रवाना हुआ पानी की बावड़ी लाने के लिए। शस्त्र हाथों में लिए सरदारों का यह भुण्ड एक सेठ की हवेली के पास से होकर निकला तो एक सरदार ने वहीं खड़े होकर ऊपर की ओर देखा। और जोर से हांक लगा कर बोला—सुनो, सुनो सरदारों! एक बात मेरी भी सुनो। इस हवेली का यह कोना बावड़ी से अड़ेगा। पहले इस कोने को तोड़ना पड़ेगा, फिर इधर से होकर बावड़ी ठीक तरह निकलेगी। वर्ना अगर यहां आकर फस गई तो फिर निकालनी मुश्किल हो जायेगी। थोड़ा सोच विचार कर काम करना चाहिये। अगर मैं नहीं होता तो आप सब मूर्खों की तरह मुंह फाड़े इधर से आगे बढ़ने की कोशिश करते। शक्ति के साथ थोड़ी बहुत बुद्धि भी होनी चाहिये।

बाकी सारे सरदारों ने भी बात सुनते ही स्वीकार कर ली — हां, हां, यह बात तो पूरी समझदारी की हुई। गिराओ, गिराओ, हवेली के कोने को नींवों तक गिरा डालो।

सभी शूरवीरों ने समवेत स्वर में गिराओ, गिराओ की हांक पर हांक मचा दी। बहुतों ने तो हवेली की दीवार पर भालों के निशान मारने शुरू कर दिये। हल्ला सुनकर सेठ ने दीवार के ऊपर से झांका तो नीचे सरदारों की भीड़ नजर आई। वे आपस में गिराओ गिराओ की हांक मचा रहे थे। सेठ ने सोचा कि सोते बैठे यह क्या कौतुक मच गया! हवेली से उतर कर उनके पास आये। हाथ जोड़ कर पूछा—गरीब की इस झोंपड़ी पर पधारने को आज कैसे कृपा की। हुकुम दीजिये; ताबेदार हाजिर है।

तब सरदारों ने कहा—सेठ, हुकुम तो आपको क्या दें! हमारा ही काम है सो हाथों हाथ निपटाना पड़ेगा। हम सारे सरदार इकट्ठे होकर आपकी हवेली के पास से वह बावड़ी उठाकर लाने वाले हैं। आपकी हवेली का यह कोना अड़ेगा, इसलिए इस कोने को पहले गिराना ठीक रहेगा।

सेठ ने भी जान लिया कि सरदार लोग नशे में धुत्त हैं। समझाने से और जिद्द चढ़ेंगे। बावड़ी भी किसी के उठाये उठ सकती है? पर इनसे कौन सिर लगाये? हां में हां मिलाना ही ठीक रहेगा। खुशामद करता हुआ बोला — हुकुम, यह काम तो आप लोगों से ही बन सकता है। बावड़ी, ठाकुर साहब के कोट के पास आ जाय तो गांव का कितना भला हो जायेगा! आप लोगों के सिवाय किसकी मां ने अजमा खाया है जो बावड़ी को एक ही बार में उठा कर यहां ला सके! आप लोगों को भगवान ने खूब सुमति दी। पर हवेली

का कोना गिराने का कष्ट आप क्यों करते हैं ? आप बावड़ी यहां लायेंगे तब तक मैं अपने आदमियों से यह कोना गिरवा डालूंगा । इस नाकुछ काम के लिए आप लोगों को तकलीफ करना शोभा नहीं देता । आप सब बड़े सरदार हैं । सदा बड़े काम करना ही आपको शोभा देता है । ये छोटे काम तो मेरे जैसे छोटे मोटे आदमी भी कर लेंगे । मैं अभी मजदूर लगा कर कोना गिरा कर तैयार रखता हूं । आप बावड़ी लाने का शुभ काम आरम्भ कीजिए ।

सेठ के समझाते ही सारे सरदार एक साथ मान गये — हां हां , सेठजी बिल्कुल ठीक कहते हैं । मकान गिराने का काम तो मजदूरों का होता है । अपन लोग तो सीधे बावड़ी पर चलें । देखो सेठ , हम लोग बावड़ी लेकर आते हैं तब तक यह कोना गिराया हुआ तैयार रखना । इस तंग गली में बावड़ी अटक गई तो हमसे भी निकलना मुश्किल हो जायेगा ।

तब एक सरदार सोच विचार कर बोला—सेठ शरीर का बल तो हम में जरूरत से ज्यादा भरा पड़ा है । पूरा दिन सामने होता तो कोई बात नहीं थी, पर अब दिन अस्त होने वाला है । बावड़ी को रात पड़ने से पहले पहले उठा लावें, ऐसी कोई तरकीब बताइये । सुनते हैं कि बनियों में बेशुमार बुद्धि होती हैं ।

सेठ फिर हाथ जोड़ते हुए बोला— मेरी क्या हैसियत कि मैं आप लोगों को उपाय बता सकूं । पर मेरे पास तीस चालीस बोरी सूखी काचरियां पड़ी हैं । बोरी को पीठ और बावड़ी के बीच में लगा देने से उठाने में सहूलियत होगी । आप लोगों की इच्छा हो तो ये काचरियां नजर कर दूं ।

सभी सरदार एक साथ बोले—हां , हां , सेठ ! बात तो ठीक बताई । काचरियों से बढ़िया काम बनेगा । लेलो , लेलो ; सारी काचरियां लेलो ।

यह कह कर सरदार लोग पिल पड़े सो अपने अपने लिए एक एक बोरी उठाली । लड़खड़ाते , लुड़कते, गिरते , पड़ते कैसे ही बावड़ी तक पहुंचे । ध्यान देकर सोचने लगे कि यह बावड़ी जड़ सहित कैसे उठे ! इकट्ठे होकर युक्ति लगाने लगे कि एक सरदार गंभीर होकर बोले—सरदार लोगों , बावड़ी के साथ पानी भी लेकर चलना है । सिर्फ पत्थर उठा लिये और पानी यहीं पड़ा रह गया तो अपनी सारी बहादुरी व्यर्थ जायेगी ।

एक जवान सरदार ने कहा—देखो सरदारों अगर पानी की एक बूंद भी बाहर गिर गई तो अपना पानी उतर जायेगा । कैसी सावधानी रखते हो ! लो अब देखते क्या हो , इतना विचार करने जैसी क्या बात है ? सीढ़ी सीढी सभी नीचे उतरो । कमर पर काचरियों की बोरिएं बांधलो और फिर दीवारों से

अड़ कर सभी एक साथ जोर लगाओ। पहले फटकारे ही बावड़ी उठ जायेगी। यह बिचारी अपने सामने क्या चीज है ?

सरदारों की भीड़ की भीड़ सीढ़ी दर सीढ़ी नीचे उतरने लगी। जल्दी जल्दी में दो चार लोग तो नीचे ही लुढ़क गये। एक सरदार के हिस्से में बोरी ही नहीं आई। उसने बावड़ी के बीचोबीच खड़े होकर कहा——अब सारे सरदार दीवारों से अड़ कर खड़े हो जाओ। मैं बरछी से इशारा करूं तब उसके साथ सब लोग एक साथ जोर लगाना। चार पांच धक्कों में बावड़ी कमजोर पड़ जायेगी।

सारे सरदार कहते ही काचरियों की बोरियां भिड़ाकर दीवार से अड़कर खड़े हो गये। बीच वाले सरदार ने बरछी का इशारा करके जोर से हांक मारी : हां लगाओ, एक साथ जोर लगाओ——होइया !

उसके इशारे के साथ ही सारे सरदारों ने जोर लगाया। काचरियां चरड़ चरड़ बोलने लगीं। सरदारों ने समझा कि बावड़ी की झड़ें टूट रही हैं। वे मन में बेहद खुश होते हुए एडियां उठा कर फिर दूने जोश से जोर लगाने लगे। काचरियों के पिसने की आवाज भी दुगुने जोर ने सुनाई दी। सबने एक साथ हल्ला किया——यह चली, बावड़ी तो यह चली, अब थोड़ी सी देर है। एक बार और जोर लगाओ ! इस गांव के लोग भी क्या जानेंगे कि कोई अतर-बली सरदार आये तो थे।

बावड़ी के चारों ओर यह तमाशा देखने के लिए सारे गांव वाले इकट्ठे हो गये थे। अफीमची सरदारों की मूर्खता पर वे भी हंस हंस कर लोट पोट होने लगे। और बावड़ी के भीतर काचरियों के पिसने की आवाज के साथ सारे सरदार जोर से एक साथ हल्ला कर रहे थे——जा रही है, जा रही है।

उनके साथ गांव वाले भी हल्ला करते——हां, जा रही है, जा रही है। थोड़ा जोर और लगाओ।

अफीमची सरदार सोचते कि बावड़ी जा रही है और गांव वाले मजाकें करते सोच रहे थे कि अफीम के कारण उनकी अक्ल जा रही है।



घोड़े के सींग !

एक सेठ छकड़ा जोत कर अपने ससुराल जा रहा था । साथ में सेठानी और उनका बेटा भी था । बेटे की उमर सत्रह - अट्ठारह साल की थी । सूरज सिर पर आया हुआ था और वे धीरे धीरे बैलों को हांक रहे थे । रास्ते में एक गहरी घेर घुमेर बोरड़ी के नीचे उन्होंने अपना छकड़ा थामा । सेठानी ने कहा—थोड़ी देर विश्राम करके दोपहरी करलें । बोरड़ी की छाया कैसी गहरी है !

वे लोग कटोरदान खोलकर खाने के लिए बैठे ही थे कि उनको दो घोड़ियां सरपट भागती हुई सामने आती दिखाई दी । घोड़ियों के सवारों ने भी बोरड़ी के नीचे छकड़ा देखकर लगामें खींचीं । सेठ से कहा— कोई हमारे बारे में पूछे तो बताना मत । अगर बता दिया तो देखना ।

यह कह कर वे दोनों चोर सरपट बाएं ढलान पर उजड़े रास्ते टल गये । थोड़ी देर बाद खा पीकर सेठ ने वापिस छकड़ा जोता । कोई एकाध मील ही पहुंचे होंगे कि उनको सामने दूसरे दो सवार फिर आते दिखाई दिये । वे शायद घोड़ियों के मालिक थे । चोरों को पकड़ने के लिए वे उनका पीछा कर रहे थे । घोड़ियों के खोज देखते वे उसी रास्ते चले आ रहे थे । पर तो भी दूरी बहुत पड़ गई थी ।

सरदारों ने छकड़े के पास आकर घोड़ियां रोकीं । जल्दी करते हुए पूछा: सेठ, इधर दो घोड़ियां जाती देखी क्या ?

सेठ कुछ भी जवाब दें उससे पहले ही उनका लड़का बीच में बोल उठा : हां देखी ।

सरदारों ने फिर पूछा— उनका रंग कैसा था ? वे दिखने में कैसी थीं ?

चोरों का तो मना किया हुआ था ही और इसके उपरान्त भी सेठ ने सोचा कि घोड़ियां हाथ आने पर गवाई में फिरना पड़ेगा । कौन रास्ते चलते झंझट में फंसे ! उन्होंने बेटे को इशारा किया तो भी वह समझा नहीं । उमंग में बढ़ कर सच्ची बात कहने लगा—लाल रंग की सुन्दर घोड़ियां थीं ।

तब सेठ बैलों को झटका देते हुए बोले---चेत , चेत ।

अब जाकर लड़का इशारा समझा । भोला बन कर हाथ ऊंचा किया और कोहनी के अंगुली लगा कर बोला--- और उनके उनके इतने लम्बे लम्बे सींग थे ।

सरदार भी उसकी बात सुनकर हंस पड़े । बोले--- जा पगले , घोड़ियों के भी कहीं सींग होते हैं । वे सांभर होंगे, सांभर ।

तब सेठ हंसते हुए कहने लगे--- बनिये का बेटा घोड़ियों में क्या समझे । यह तो बच्चा है । यों ही कह दिया । हमने तो कोई घोड़े देखे न घोड़ियां ।

यह कह कर सेठ ने भी अपने रास्ते बैल बढ़ाये और सरदारों ने भी चोरों के पीछे अपनी घोड़ियां दौड़ाईं ।



व्यवहार की बात

एक सेठ मालमत्ते की गठरी उठाये गांव से बाहर जा रहा था । सुनसान जंगल के मोड़ पर , हाथ में तलवार लिए एक आंटीला ठाकुर सामने मिला । ठाकुर प्रसिद्ध डाकू था । पास आते ही ठाकुर ने थोड़ा सा मुस्करा कर कहा—सेठजी, जै गोपाल जी की ।

सेठ तो देखते ही भांप गये कि आज तो बैठे ठाले बुरे फंसे । अब पश्चा-ताप करने से कुछ भी हाथ नहीं लगेगा । उसने भी मुस्करा कर उत्तर दिया—नहीं , ठाकुर साहब , ये बातें तो मसखरी की ।

तब ठाकुर बोला—अच्छा , तो सेठ चुपचाप नीचे रख दे गठरी ।

सेठ ने कहा—हां , यह बात व्यवहार की !

अवनद्ध वाद्यों का एक विश्लेषण

— कोमल कोठारी

राजस्थान में प्रचलित अवनद्ध वाद्यों की पृथक पृथक चर्चा के पूर्व इन वाद्यों के समग्र स्वरूप पर विचार विमर्श कर लेना उचित होगा।

सामान्यतया चमड़े से मंडे हुए वाद्यों को अवनद्ध वाद्य कहा जाता है। मंडाव के ये वाद्य, संगीत में लय एवं ताल की संस्थापना के लिए प्रयुक्त होते हैं। संगीत शास्त्र के विद्वानों ने अवनद्ध वाद्यों की लयात्मक व्यवस्था के आधार पर इन्हें लय-वाद्य अथवा परक्युसन वाद्य के रूप में भी वर्णित किया है। लय-वाद्य की कल्पना के आधार पर घन एवं अवनद्ध वाद्य एक ही वर्गीकरण का भाग बन जाते हैं। किन्तु घन-वाद्य की संगीतात्मक लय प्रदान करने की क्षमता के साथ अवनद्ध रूप की औचित्यपूर्ण कल्पना सामने नहीं आती। अतः मात्र लय-वाद्य अथवा परक्युसन वाद्य की व्यापक कल्पना को मुख्य वर्गीकरण का आधार बनाना अधिक श्रेयस्कर सिद्ध नहीं होगा। भारतीय संगीत शास्त्रों की परंपरा में निश्चय ही अवनद्ध वाद्यों को पृथक सत्ता के रूप में स्वीकार किया गया है।

हमें घन एवं अवनद्ध वाद्यों की लय-ध्वनि प्रदान करने के धर्म के मूल में दोनों का भेद प्राप्त होगा। घन-वाद्यों की बनावट में ही ध्वनि की तारता निहित रहती है। इस तारता (पिच) में मन चाहे परिवर्तन की संभावना नहीं रहती। इधर अवनद्ध वाद्यों की बनावट में 'तारता' के परिवर्तन की संभावना के लिए प्रावधान रहता है। इसी प्रकार ध्वनि की तीव्रता एवं गुण में भी अवनद्ध वाद्य अधिक विकसित लय-रूपों का सृजन कर सकते हैं। इन सांगीतिक विशिष्टताओं के कारण भी अवनद्ध एवं घन वाद्यों को पृथक रख कर देखना आवश्यक मानना चाहिये।

वाद्यों के वर्गीकरण में यह समस्या भी महत्वपूर्ण रूप से हमारे सामने आती है कि अन्ततः हम वाद्यों को वर्गीकृत रूप में ही क्यों देखना चाहते हैं? संगीत की आवश्यकतानुसार तो दो विभेद से ही काम चल सकता है। एक को हम लय-वाद्य कह सकते हैं एवं दूसरे को स्वर-वाद्य। लय एवं स्वर के सृजन के साथ संगीत की समस्याओं के आधार पर ही विचार

किया जा सकता है । वाद्य की बनावट , उसके वादन विधान , उसके स्वरूप आदि से वाद्य की अधिकाधिक जानकारी भले ही होजाय — संगीत के व्यावहारिक प्रयोग में तो वाद्य या तो स्वर देगा या लय देने वाला होगा । इस मान्यता के विषय में संगीत शास्त्रियों ने एक स्वर से कहा है कि वस्तुतः घन , अवनद्ध , सुषिर एवं तत वाद्यों के भेद-विभेदों का महत्व केवल संग्रहालय की व्यवस्था के लिए आवश्यक है । बहुत सीमा तक यह तथ्य सही है और संगीत के इतिहास , वाद्य की बनावट एवं संगीतात्मक ध्वनि उत्पन्न होने के नियमों की स्थापना के परिणाम-स्वरूप ही वाद्य-वर्गीकरण की समस्या उत्पन्न हुई । किन्तु , साथ ही साथ यह तथ्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि इन्हीं सांगीतिक नियमों की स्थापना ने , उनकी वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर, संगीत-वाद्यों के स्वरूप व उनके कलात्मक सृजन को समझने का एक ठोस आधार भी हमें प्रदान किया है ।

संगीत की आवश्यकता एवं परिपूर्ति के साथ यदि हम मुख्य वाद्य विभाजन को सामनें रखते हैं तो कभी कभी एक समस्या अवश्य उत्पन्न होती है। अवनद्ध वाद्यों के वर्गीकरण में दो तथ्य महत्वपूर्ण हैं– एक तो चमड़े का मंडाव होना एवं दूसरा मुख्यरूप से लय प्रदान करना । लय प्रदान करने में स्वर की तारता की स्थापना संभव है (जिस कारण यह घन-वाद्य से पृथक है) किन्तु स्वरात्मकता का वह अंश उसे स्वर वाद्य की श्रेणी में नहीं ले आता । क्योंकि अवनद्ध वाद्य का मुख्य प्रयोजन लय देना ही है , स्वर-संगीत की अवतारणा करना नहीं है। लेकिन यदि हम विश्व के अवनद्ध वाद्यों एवं उनके नवीन प्रयोगों को अपने सामने रखें तो पाते हैं कि कुछ चर्म-मंडित वाद्य मंडल (तरंग) रूप में स्वरात्मकता की ओर भी अग्रसर हुए हैं । इस प्रक्रिया के कारण अवनद्ध वाद्यों में एक नये 'डायमेन्शन' का उद्भव हुआ है। उधर परंपरा से प्रायः कुछ तत-वाद्यों में चमड़े का मंडाव भी मिलता है । किन्तु वहां चमड़े का प्रयोग केवल तबली पर ही किया जाता हैं जो ध्वनि के अनुरणन का एक महत्वपूर्ण साधन है। ऐसे तत-वाद्यों का मुख्य प्रयोजन केवल लय देना नहीं है अपितु स्वरात्मक संगीत सृजन ही श्रेय एवं प्रेय है ।

इसी जगह एक विशिष्ट प्रकार के वाद्यों की समस्या भी आती है । इन वाद्यों में चमड़े का मंडाव है और वे मात्र लय के लिए काम में आते हैं; किन्तु एक तांत का प्रयोग उनमें अवश्य है । राजस्थान में इन वाद्यों संख्या तीन है । अपंग , भपंग एवं डूचकी । तीनों वाद्यों में दोनों ओर पोला मुख होता है और केवल एक ओर चमड़ा मंडा जाता है और इस चमड़े के बीच से एक तांत निकलती है जिसे बांये हाथ में लेकर तनाव दिया जाता है और दाहिने हाथ की अंगुली या जवे के ताडन से बजाये जाते हैं । तांत अथवा तार के प्रयोग के कारण सहज ही

इन वाद्यों को तत-विभाजन में ले जाने का मोह होता है। किन्तु इनकी संगीतात्मक प्रयोग-विधि के कारण इन्हें अवनद्ध वाद्यों की श्रेणी में रखना ही उचित होगा। राजस्थान के कुछ तत लोक वाद्यों में ऐसे वाद्य भी हैं जो स्वरात्मक होते हुए भी लय-प्रकार भी प्रदान करते हैं किन्तु उनका यदि संगीतात्मक विश्लेषण करें तो स्पष्ट हो जाता है कि वाद्य-प्रयोजन स्वर देना ही है। ऐसे वाद्य मुख्यतया श्रुति-वाद्य हैं। इनमें चौतारा, दोतारा एवं इकतारे के विभिन्न रूप सम्मिलित किये जा सकते हैं। स्वरात्मकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन वाद्यों के तारों को सुनिश्चित स्वर पर स्थापित किया जाता है और गायन का आधार-स्वर ऐसे वाद्य से ही प्राप्त होता है।

लेकिन रवाज नामक एक ऐसा वाद्य हमें राजस्थान में प्राप्त होता है जिसका आकार-प्रकार कामायचा [एक तत गज वाद्य] जैसा होता है और इस वाद्य की तबली पर चमड़े का मंडाव भी होता है। यह तबली काफी बड़ी होती है। इस रवाज पर चार तांतें बांधी जाती हैं। किन्तु इस पर जवे के ताड़न द्वारा मुख्य रूप से लय को ही प्राप्त किया जाता है। सही है कि तांत के प्रयोग और उनके विभिन्न स्वरों पर स्थापना होने के कारण यह स्वर-वाद्य का ही प्रमुख रूप है। इस विशिष्ट-वाद्य को 'राधा गोविन्द संगीत सागर' में अवनद्ध वाद्यों के साथ वर्णित किया गया है। वर्णन इस प्रकार है :

"यह रबाव एक हातको लबो कटह के काठको कीजिये। तहां एक काठको आधे तूंबा के आकार कठोता दंडा के आगले को लगाइये। कठोता चामसों मढ़िये। और कठोता की सनमुख कोर पे सात छेद करि सात तांति बांधि दंडा के अग्र भाग में खूंटी ढीली गाढ़ि के सातों तांतिन के अग्र बांधिये। उन सातों तांतिन में षड़जादि सातों स्वर क्रमसों राखिये। हाति-दांति के टूकसों तांति बजाइये। बांये हातसों मढ़े चामकों बजाइये। यांमे मृदंगके से पाठाक्षर जांनिये। इहां कोऊ आचारिज पहले च्यारि तार में मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद, यह च्यारि स्वर; पिछले तीन तांतन में षड्ज, रिषभ, गांधार, यह तीनों भेद क्रमसों कहे हैं।" [वाद्याध्याय, पृष्ठ ७४]

इस रबाब का वर्णन राजस्थान के रवाज से भिन्न है। तांत की संख्या सात दी गई है जब कि राजस्थान के वाद्य में केवल चार ही तांते प्राप्त हैं। लेकिन खास समझने की बात यह है कि इस पुस्तक के रचयिता ने रबाब का वर्णन तांत के प्रयोग के बावजूद अवनद्ध वाद्यों में किया है। राजस्थान के रवाज के वादन-विधान एवं सांगीतिक प्रयोग को गहराई से समझने का उपक्रम करते हैं तब भी यह कहना पड़ता है कि यह वाद्य मात्र लय-रूप देने वाला एक प्रकार है। यदा कदा स्वरों का स्वतंत्र - वादन भी कर दिया जाता है।

अवनद्ध वाद्य की सीमा रेखाओं का निर्माण करते समय ऐसे विवादों को भली प्रकार विवेचित कर लेना आवश्यक ही समझना चाहिये।

इस पृष्ठ भूमि में अब अवनद्ध वाद्यों के विभाजन एवं वैविध्यता के बीच समान तथ्यों पर विचार किया जाय।

विश्व के प्रमुख संगीत विद्वानों ने अवनद्ध वाद्यों को वादन - विधान के रूप में विभक्त करने के प्रयत्न किए हैं। अवनद्ध वाद्य को बजाने की दृष्टि से उस पर आघात किया जा सकता है; उसको अंगुली या जवे से ताड़ित [कर्षित] किया जा सकता है अथवा उसे घर्षण के द्वारा बजाया जा सकता है। इस प्रकार आघात, ताड़न और घर्षण ये प्रमुख तीन विभाजन बने। आघात के द्वारा ढोल, ढोलक जैसे वाद्य बजाये जाते हैं; ताड़न के द्वारा अपंग, भपंग जैसे वाद्यों को प्रयोग में लिया जाता है एवं घर्षण के द्वारा नार-हुंकारिया जैसा वाद्य हमारे सामने आता है। इस विभाजन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग आघात से बजने वाले वाद्यों का है।

राजस्थान में प्रचलित आघात से बजने वाले लोक वाद्यों को उनके स्वरूप के आधार पर आगे और उप-विभाजित किया जा सकता है। अन्य संगीत वाद्यों के विद्वानों यथा कर्ट साक्स एवं विलियम गालपिन ने भी ठीक इसी प्रकार का विभाजन प्रस्तुत किया है। इन विद्वानों ने अंग्रेजी में जो नाम दिये हैं, वे इस प्रकार हैं :

1. Cylindrical drums : the tube is straight
2. Barrel drums : the tube is bulging
3. Conical drums : the tube tapers towards one end
4. Hour-glass drums : the tube terminates in cup-shaped ends with a narrower west between them
5. Footed drums : generally large and not portable ; one end is carved to form a foot or scole
6. Goblet drums : portable footed drums
7. Handle drums : with one or more loop handles
8. Kettle drums : vessel as body. Hemispheric if large in diameter at top. Eggshaped if the largest diameter is somewhere below the top. Extremely shallow kettledrums may be called "bowl drums"
9. Frame drums : has a frame instead of body

किन्तु इस सूची से भारतीय अवनद्ध वाद्यों के सभी स्वरूपों की स्थापना नहीं की जा सकती। अर्थात ठीक इसी विभाजन के द्वारा सभी वाद्य रूपों को संयोजित नहीं किया जा सकता। साथ ही अंग्रेजी शब्दों के अर्थानुकूल हिन्दी शब्दों का चयन करें तब भी कुछ कठिनाइयां उपस्थित हो जाती हैं। उदाहरण स्वरूप 'ऑवर-ग्लास' का अनुवाद 'रेत की घड़ी' होगा। सही है कि इस घड़ी के रूप से वाद्य को पहिचाना जा सकता है, लेकिन उससे भी सुविधा-जनक नाम 'डमरू' स्वरूप हो सकता है। 'रेत की घड़ी' का आकार-प्रकार जन-सामान्य में प्रचलित भी नहीं है। इस एक नाम की स्थापना के बाद, यह महसूस होता है कि प्रचलित वाद्यों के आकार पर ही यदि इस स्वरूप विभाजन का नामकरण किया जाय तो हिन्दी-क्षेत्र में अधिक सुविधाजनक एवं अर्थग्राही सिद्ध होगा।

राजस्थान के लोक वाद्यों में मुख्यतया आघात से बजने वाले अवनद्ध वाद्यों को निम्न-लिखित नामों से अभिहित कर सकते हैं :

१. डमरू रूप
२. ढोलक रूप (तीन उप-भेद सहित : ढोलकाकार, गोपुच्छाकार एवं बेलनाकार)
३. ढोल रूप
४. नगारा रूप
५. घट रूप
६. तासा रूप
७. खंजरी अथवा चंग रूप

कुछ और प्रचलित वाद्य-नामों के आधार पर अवनद्ध वाद्यों का यह विभाजन सहज ही स्थापित किया जा सकता है। उपरोक्त नामों को देखने से ज्ञात होगा कि ढोलक एवं ढोल रूप को पृथक किया गया है। ढोलक मुख्यतया लंबाई में अधिक एव डायमीटर में ढोल की तुलना में कम होती है। यों ढोलक व ढोल दोनों ही बेलनाकार भी होते हैं लेकिन डायमीटर का अन्तर इतना बड़ा है कि इन दोनों को साथ नहीं रखा जा सकता। अन्य वाद्य रूपों में आकार-प्रकार की यह समानता भी प्राप्त नहीं होती है।

किन्तु उपरोक्त स्वरूप की स्थापना के बाद भी अवनद्ध वाद्यों के अनेक तथ्य ऐसे रह जाते हैं जो स्वतंत्र व्याख्या की जरूरत को और भी बढ़ा देते हैं। यह तो हमें विदित ही है कि अवनद्ध वाद्यों को चमड़े से मंडा जाता है और उसे आघातित किया जाता है। इस आघात के विधान क्या हैं ? प्रथमतः तो वे वाद्य सामने आते हैं जिनके दोनों मुंह पर चमड़ा चढ़ाया जाता है। अर्थात दोनों ओर ही आघात भी किया जाता है। आघात करने की तीन विधायें

सामने आती हैं :

प्रथम : दोनों ओर हाथ से वादन [सामान्य ढोलक या मादल]

द्वितीय : एक ओर हाथ एवं दूसरी और डंडे से वादन [सामान्य ढोल]

तृतीय : दोनों और डंडे से वादन । [नटों की ढोलक]

इन्हीं वाद्यों में अनेक बार बांस की पतली दो खपच्चियों को लेकर मुख्य वादक के अलावा एक ओर व्यक्ति भी जुड़ जाता है । एक ही वाद्य को बजाने वाला यह दूसरा वादक होता है।

डमरू - रूप के वाद्यों को वाद्य पर ही डोरी से बंधी हुई दो गांठों के द्वारा, मुट्ठी को हिलाकर आघातित किया जाता है । अथवा ढेरू जैसे वाद्य को अंगुलियों या मुड़ी हुई लकड़ी के आघात से बजाया जाता है ।

नगारा-रूप के वाद्यों को दो डंडों से बजाया जाता है । आकार-प्रकार एवं वादन विधान की स्थिति के अनुसार ही डंडों का निर्धारण किया जाता है ।

घट-रूप के वादन में हाथों को ही काम में लिया जाता है । अंगुली पर पहनी हुई अंगुठी का प्रयोग भी किया जाता है ।

तासे-रूप के वाद्यों में दो पतली खपच्चियों का आघात रहता है । यह वाद्य गले में लटका कर बजाया जाता है ।

खंजरी-रूप के वाद्यों को एक हाथ की अंगुलियों, दोनों हाथों, एक हाथ एवं एक डंडे अथवा एक पतली चीप एवं हाथ से बजाया जाता है । वादन के यह सभी रूप राजस्थान में प्राप्त लोकवाद्यों में मिल जाते हैं ।

इन अवनद्ध वाद्यों के बनाने में धातु [लोहा, तांबा, पीतल], काष्ठ, मिट्टी एवं तूंबे का प्रयोग मिलता है । धातु की चद्दरों से बने ढोल, नगारे, डमरू आदि हैं । काष्ठ से ढोलक, ढेरु [ढाक] ; मिट्टी से मादल, तासा एवं तूंबे पर भपंग नामक वाद्य बने हुए होते हैं ।

इसी सामग्री के साथ चमड़े के मडाव का प्रश्न महत्वपूर्ण बन जाता है । कुछ वाद्यों में दोनों मुंह पर चमड़ा मंडा होता है और कुछ पर केवल एक ओर होता है । खंजरीनुमा वाद्यों पर चमड़े का प्रयोग एक ओर होता है एवं दूसरी ओर वह खुला रहता है । किन्तु नगारों के प्रकारों में कुछ गोलाकार या अंडाकार बंद स्थितियां होती हैं । लेकिन इसी जगह इस तथ्य को जानना भी आवश्यक है कि एक वाद्य के दोनों और बजाने के विधान के साथ ही कुछ वाद्यों में दो स्वतंत्र वाद्य भी होते हैं और उन्हें साथ रखकर बजाया जाता है । चमड़े का मंडाव भी इन्हीं की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है ।

इन वाद्यों पर भेड़, बकरे, भैंसे, ऊंट, हिरण के अतिरिक्त सरिसृप प्राणियों से

चदन-गौ की खाल का भी प्रयोग किया जाता हैं। वाद्य के काम में आनेवाली सभी खालें कच्ची ही प्रयोग में लाई जाती हैं। उन्हें तथाकथित रूप से रंगा नहीं जाता। कभी कभी खंज-रियों पर कछुए की नीचली खाल का प्रयोग भी मिलता है।

वाद्य के पात्र एवं चमड़े के विवरण के बाद मंडने के विधान की स्थिति देखना भी आवश्यक बन जाता है। सबसे पहिले तो खंजरी-रूप के वाद्यों को देखा जाय। इन वाद्यों पर चमड़े को चिपकाया जाता है अर्थात् अन्य किसी रूप से बांधने की व्यवस्था नहीं होती। चमड़ को चिपकाने के लिए मेथी के आटे का प्रयोग किया जाता है। लेकिन खंजरी-प्रकार के वाद्यों में ही डफ एक ऐसा वाद्य है जिसे जालीदार चमड़े की पतली बद्दियों से बांधा जाता है। चमड़े का पूरा तनाव बद्दियों पर ही रहता है। राजस्थान में पाबूजी के माटों पर चमड़े को मढ़ने का एक अन्य तरीका है। इस तरीके में घड़े के मुह पर पृथक बांस या लकड़ी की खप-च्चियां रहती हैं और उसी में उलझा कर चमड़ों को बंधाव दिया जाता है। इधर मादल के दोनों मुह पर चमड़े को बांधने के लिए बद्दी को सीधे मुख्य चमड़े के छेदों मे निकाला जाता है। बद्दी के लिए सूत की डोरी काम में ली जाती है। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि आदिवासियों के अवनद्ध वाद्यों में चमड़े पर सीधे ही बद्दी का तनाव रहता है; अन्य वाद्यों में चमड़े को एक गोलाकार मंडल पर कसने के बाद, उसे बद्दी के द्वारा तनाव दिया जाता है। मंडल के प्रयोग द्वारा वाद्य की तारता को स्थापित करने में बहुत बड़ी सहायता मिल जाती है। इधर आदि-वासी लोग इसी तारता को प्रयोग में लाने के लिए गीले आटे का प्रयोग करते हैं। ढोल एवं नगारों में मंडल निश्चित रूप से प्राप्त होता है। तासे का रूप मुख्यतया एक परात के समान होता है और उसमें भी मंडल का प्रयोग नहीं रहता। सीधे चमड़े के साथ पतली बद्दियों को निकाल कर जाली-रूप में पात्र के साथ ही गूथ दिया जाता है। यह जानना भी उपयुक्त होगा कि कुछ तत-वाद्यों के तबली पर लकड़ी की कीलों के साथ भी चमड़े को तानने का विधान प्राप्त होता है। इस प्रकार की कीलों का प्रयोग राजस्थान के अवनद्ध वाद्यों में प्राप्त नहीं हुआ।

भारतीय अवनद्ध वाद्यों में नर एवं मादा की धारणा व्याप्ततम रूप में प्राप्त होती है। नर नीचे के स्वर में एवं मादा को ऊपर के स्वर में स्थापित करने का नियम है। नर एवं मादा की इस धारणा का प्रयोग उन्हीं अवनद्ध वाद्यों में प्राप्त होता है जिनमें या तो दोनों मुह पर चमड़े का मंडाव हो अथवा दो भिन्न पात्रों के साथ एक ही वाद्य का निर्माण प्राप्त हो। केवल खजरी-रूप वाद्य एवं एक घट-वादन में हमें नर-मादा की स्वर-गत अथवा तारता-गत स्थापना प्राप्त नहीं होती। इनके अलावा सभी वाद्यों में नर एवं मादा की धारणा अक्षुण्ण रूप से

प्राप्त होती है। चमड़ पर तारता के गुण को प्राप्त करने के लिए विभिन्न तरीकों का प्रयोग किया जाता है। दो मुंह वाले वाद्य में मादा चमड़े को अपनी प्रकृत-अवस्था में छोड़ दिया जाता है अर्थात् तनाव के द्वारा तारता प्रदान कर दी जाती है जब कि नर चमड़े के अन्दर वाले हिस्से पर राल, तेल आदि से निर्मित एक प्रकार की स्याही का प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया के कारण चमड़े का घोष गंभीर हो जाता है और वह नीचे स्वर पर बोलने लगता है। बद्दी का तनाव दोनों मंडलों पर समान होते हुए भी वह नर के स्वर को ऊंचा नहीं उठा सकता। शास्त्रीय संगीत के तबले या मृदंग पर जिस प्रकार दोनों ओर स्याही का प्रयोग किया जाता है, ठीक वही प्रयोग लोक वाद्यों में नहीं होता। ढोल एवं ढोलक में स्याही का प्रयोग चमड़े के अन्दर की ओर ही किया हुआ मिलता है।

चमड़ के मंडात्र का फर्क मादल में होता है और यहां नर एवं मादा के स्वरात्मक विभेद को स्थापित करने के लिए जौ के आटे का प्रयोग किया जाता है। नर की ओर अधिक एवं मादा की ओर बहुत कम आटे के लोये लगाये जाते हैं। आटे की मात्रा की कमी-बेशी से स्वर का उतार चढ़ाव बना लिया जाता है। इसी प्रकार रावल जाति द्वारा बजायी जाने वाली मिरदंग में भी दोनों ओर आटे का प्रयोग रहता है लेकिन साथ ही बद्दियों के साथ लकड़ी के गट्टों का प्रयोग भी मिलता है।

इधर दो स्वतंत्र पात्रों से बने हुए एक ही अवनद्ध वाद्यों में भी नर-मादा की स्थापना रहती है। नौबत में एक नगारा एवं एक नगारी रहती है। नगारी को राजस्थान में जील भी कहते हैं। जील पर ऊंचे स्वर को कायम करने की दृष्टि से इसका आकार (डायमीटर) छोटा रखा जाता है। जील पर ऊंट का कुछ पतला चमड़ा काम में लेते हैं। कहते हैं कि यह चमड़ा स्वयं स्वरगत ऊंचाई कायम रख सकता है। वादन के पूर्व जील को तपा लिया जाता है और ताप की वजह से ऊंचे स्वर पर चढ़ जाता है। उधर मादा का रूप बहुत बड़ा होता है। भैंसे का चमड़ा काम में लिया जाता है। किन्तु साथ ही बड़े नगारे के पैंदे में एक छेद का प्रावधान भी रखा जाता है जिससे पानी ऊंडेल कर चमड़े को खूब गीला कर लिया जाता है। इससे नगारे का घोष एवं ध्वनि-धर्म एकदम गंभीर-सा बन जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राजस्थान के अवनद्ध लोक वाद्यों में नर एवं मादा की स्वरात्मक अथवा तारतात्मक सांगीतिक तथ्य को प्राप्त करने के लिए कितने ही प्रकार के प्रयोग चल रहे हैं।

वाद्य के बन जाने तक के उपरोक्त सभी तथ्य अपने अपने रूप में आवश्यक एवं महत्वशील हैं। किन्तु उनकी सांगीतिक महत्व की स्थापना तो उनके वादन द्वारा प्रकट लय रूपों की सर्जना पर ही निर्भर करती है। भारत के शास्त्रीय संगीत के ग्रंथों ने शास्त्रीय अवनद्ध

वाद्यों के विवरण के साथ इस तथ्य का विवेचन किया गया है कि प्रत्येक वाद्य के पाठाक्षर क्या हैं ? अर्थात वहां विभिन्न आघात प्रकार से उत्पन्न ध्वनि के नामों की स्थापना कर दी गई है। शास्त्रीय संगीत एवं नृत्य के जानकार इस बात को भली प्रकार जानते हैं कि मृदंग एवं तबले के बोलों में फर्क कहां हैं। इसी प्रकार नृत्य के भिन्न बोलों की स्थापना भी की गई है। किन्तु लोक अवनद्ध वाद्यों में पाठाक्षर की स्थिति लगभग प्राप्त नहीं होती। ढोल के साथ अवश्य कुछ पाठाक्षरों की चर्चा लोक वादकों से सुनने को मिली। नगारों में पाठाक्षरों की एक निश्चित स्थिति भी प्राप्त होती है। अन्य वाद्यों में निःसृत ध्वनि के बोलों के नामकरण की परंपरा प्राप्त नहीं होती।

यह सही है कि अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग लय की स्थापना के लिए किया जाता है और लोक-वाद्यों में अत्यंत विकसित लय रूपों का प्रयोग मिल जाता है। लेकिन एक तथ्य को निश्चित रूप से सामने रखा जाना आवश्यक है कि लोक वाद्यों में ताल का स्वरूप प्राप्त नहीं होता। भारत के शास्त्रीय संगीत में ताल का अपना एक गठन है और ठेके के बोलों का, उसकी आवृत्ति का, उसके सम, खाली और भरी का विशेष महत्व है। इन सभी तथ्यों के बिना ताल का निर्माण संभव नहीं है। किन्तु ताल का यह पारिभाषिक रूप लोक अवनद्ध वाद्यों में कभी भी प्राप्त नहीं होता। यहां प्रयोजन शुद्ध रूप से लय स्थिति तक ही कायम रहता है। इस दृष्टि से चाहे ढोलक हो, नगारा हो, चंग हो अथवा माटे हों—सभी में लय वादन का प्रावधान ही प्राप्त है। किसी लय विशेष को किसी विशिष्ट चाल में प्रतिबंधित करके उसे ताल रूप देने की प्रारंभिक स्थिति भी यहां नहीं मिलती है।

लोक संगीत के क्षेत्र में अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग गायन, वादन (अन्य वाद्य की संगत) एवं नृत्य के साथ प्राप्त होता है। किन्तु राजस्थान की महिलाओं के मांगलिक गीतों के साथ इनका अभाव ही रहता है। ढोलक एवं छोटी चंग के अतिरिक्त सभी वाद्य मुख्यतया पुरुष वर्ग द्वारा ही बजाये जाते है। कुछ वाद्यों को तो बजाने वाली प्रमुख जातियां भी अस्तित्व में है। जैसे सरगरा जाति के लोगों का एक प्रमुख पेशा ढोल बजाना है। ढोली जाति में ढोलक का प्रामुख्य प्राप्त होता है किन्तु जातिवार यह बंटवारा जितना तत वाद्यों में स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है, उतना अवनद्ध एवं घन वाद्यों में प्राप्त नहीं होता। राजस्थान में अवनद्ध वाद्यों को मांडने वाले और उन्हें बनवाने वालों की जाति डबगर कहलाती है। हिन्दु डबगर एवं मुसलमान डबगर भी होते हैं। इन वाद्यों के अतिरिक्त यह जाति कागज की कुट्टी का कार्य भी किया करती है।

पत्नी द्वारा पति का नाम उच्चार

— कोमल कोठारी

कथ्य साहित्य को संग्रह करने के अनुभव ने हमें इस बात के लिए प्रेरित किया कि एक ही क्षेत्र के विभिन्न भागों में भागने फिरने के बजाय किसी एक गांव-विशिष्ट में ही सर्वांगीण रूप से संग्रह की योजना को हाथ में लिया जाय। इस सीमित-तम क्षेत्र को अपना कार्य-क्षेत्र चुनने के साथ ही पता चला कि कथ्य साहित्य की जिस गहराई और वैविध्य तक हम पहुंच सकते हैं, वह अन्य किसी अन्य खोज व शोध प्रणाली के द्वारा सभव नहीं है। तलगामी कार्य-क्षेत्र से संग्रह एव अध्ययन में विस्तार भले ही आ जाय उसमें गहराई और दृष्टि का गांभीर्य उत्पन्न नहीं होता। केवल इतना ही नहीं, एक ही प्रकार के कथ्य साहित्य का जो वैविध्य है, वह अनायास प्रकाश की भांति आलोकित भी नहीं होता।

यह विशिष्ट अनुभव हुआ उस समय जब हमने पहेलियों के संग्रह के लिए बोरुन्दा गांव में अपने प्रयत्न प्रारंभ किये। पहेली को राजस्थानी भाषा में आडी कहते हैं। इस 'आडी' नामक संज्ञा के नाम से हमने संग्रह प्रारंभ किया तो पता चला कि बालकों की निरर्थक पहेलियां भी कितने सार्थक रूप में एक बाल्य क्रिया - कलाप अथवा क्रीड़ा की तरह सहज ही समाज में व्याप्त है। पहेली का न केवल यह स्वरूप ही मिला अपितु सैकड़ों की संख्या में निरर्थक पहेलियों का संग्रह भी हो गया। आडी का एक अन्य रूप वैवाहिक अवसरों पर वस्तुओं के 'बांधने एवं खोलने' के साथ भी मिला। दूल्हे के लिए थाल को बांध देना, गद्दी को वांध देना एवं झारी को बांध देने की बात कही जाती है और उसे ठीक बालकों की निरर्थक पहेलियों के शैलीगत काव्यानुकरण के आधार पर इन सभी वस्तुओं को खोलना पड़ता है। इसी प्रकार एक वाक्य की प्रश्नात्मक पहेलियों के रूप भी सामने आये। गेय पहेलियों की विपुल संपदा का कुछ अंश प्राप्त हुआ। इन सभी संग्रहों के द्वारा एक बात स्पष्ट होती चली गई कि पहेली मात्र एक प्रश्न और उत्तर तक ही सीमित नहीं है अपितु उससे कुछ भिन्न स्थितियों में भी उसका अस्तित्व है।

इसी क्रम में प्रहेलिकात्मक कथाओं का ज्ञान भी हुआ। पहेली के इस रूप का वर्णन अन्यत्र कहीं से जानने को नहीं मिला था। इस सारे वैविध्य के संग्रह हो जाने का एक मात्र कारण यही तो था कि हमने केवल एक गांव से ही अपने संग्रह को संपन्न बनाने का निर्णय ले लिया था। एक एक सूचना देने वाले को गहराई में ले जाते ले जाते हम स्वयं रूप विभेदों की गहराई में पहुंचते गये।

पहेली से संबंधी इस खोजबीन में पता चला कि सावन की तीज के अवसर पर विवाहित स्त्री को अपने पति का नाम लेने के लिए बाध्य किया जाता है। चूंकि पति के नाम लेने का प्रश्न पूछा जाता है और एक महिला को वर्जित 'नाम' का उच्चार करना पड़ता है: अतः यह प्रश्न भी पहेली की समकक्षता-सी ग्रहण कर लेता है। वस्तुतः यह प्रक्रिया पहेली की संज्ञा में आती है या नहीं, यह दूसरी समस्या है। सामान्य महिलाओं ने पहेलियों के संग्रह के दौरान में इस स्वरुप को भी सहज प्रहेलिकात्मक रूप में ही वर्णित किया

राजस्थान में सावन की तीज का त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता हैं। इस त्यौहार के सुखद वर्णनों से भरे-पूरे अनेक लोकगीत भी प्रचलित है। गांव की महिलाए सावन की तीज के दिन बाग-बगीचों में या कांकड़ के वृक्षों पर भूले डाल कर उन पर भूलने के लिए पहुंचती हैं। हंसी-खुशी और वर्षा की हरियाली के बीच में यह त्यौहार सहज ऋतु के सौन्दर्य एवं उससे उद्भूत स्नेहपूर्ण परिकल्पनाओं का प्रतिफलन है।

इस त्यौहार के दिन भूला भूलने के लिए एक या दो महिलाएं भूले पर बैठ जाती हैं या खड़े खड़े भूलकर उतरने के लिए तैयार होती हैं तो सभी सखी-सहेलियां उसे घेर लेती हैं और उसे बाध्य करती हैं कि वह अपने पति का नाम बोल कर कहे। राजस्थान ही क्या संपूर्ण भारत में पत्नी द्वारा पति का नाम बोलना वर्जित है। पति के नाम उच्चार से माना जाता है कि पति का अनिष्ट होगा अथवा उसकी अवस्था घट जायेगी। इस मान्यता के पीछे भी एक अभिचारिक (जादू-संबंधी) विश्वास है। मनुष्य का यह आदिमतम विश्वास है कि व्यक्ति-विशेष के शरीर के किसी भी अंग के त्याज्य भाग को लेकर, उस पर जादू किया जा सकता है अथवा उसका अनिष्ट किया जा सकता है। यह विश्वास आज भी हर घर में एवं हर व्यक्ति में हमें व्याप्त मिलता है। अंगुलियों के नाखून काटने पर अथवा केस काटने पर उन्हें इधर-उधर नहीं फेंकने दिया जाता है। बूढ़ी माताए एवं दादियां आज भी भयपूर्ण आशंका से बालकों को सतर्क किया करती हैं। ठीक इसी अभिचारिक विश्वास का विकास यहां तक हुआ कि मनुष्य ने अपने नाम को भी अपने शरीर का ही अंश माना और नाम के उच्चार के साथ भी स्वयं के अनिष्ट की कल्पना का संचार कर लिया। राजस्थान में शत्रु समझे जाने वाले

व्यक्तियों पर 'मूठ' करने का एक विश्वास प्रचलित है। मूठ करने वाले लोग गुप्ततम रूप में इसकी शिक्षा प्राप्त करते हैं और व्यक्ति का नाम लेकर उस पर अभिचारिक मूठ कर देते हैं। मूठ से असाध्य बीमारी और मौत तक हो जाती है—ऐसा विश्वास किया जाता है। लेकिन मूठ करने वालों का कहना है कि ठीक उसी व्यक्ति पर मूठ फेंकी जा सकती है जिसका कि जन्म-नाम ज्ञात हो। जन्म-नाम जन्मकुंडली के साथ ही निर्णीत होता है। हमारे समाज मे इसीलिए जन्म-नाम से पुकारने या संबोधन करने का रिवाज नहीं है अपितु एक पृथक बोलता-नाम भी रखा जाता है। यहीं नाम की अभिचारिक क्रिया का भय भी सम्मिलित हो गया है। पत्नी द्वारा पति के नाम के उच्चार के साथ अभिचारिक भय की कल्पना चाहे नहीं भी हो, किन्तु नाम के उच्चार में अनिष्ट का भय अवश्य आ गया है।

इसी विश्वास के आधार पर सखी-सहेलियों का यह प्रश्न अत्यन्त कठिन बन जाता है कि पत्नी अपने पति का नाम खुले रूप में और वह भी सभी महिलाओं के बीच में किस प्रकार उच्चरित करे। इस समय भय के विश्वास के साथ ही 'लज्जा' का अंश भी जुड़ जाता है। पति एवं पत्नी का संबंध अत्यन्त सुमधुर, कोमल एवं स्निग्ध होता है। परस्पर गहरी निकटता होने के बाद भी वह अपने पति के नाम के साथ अपने प्रणय संबंधों को खोलकर तो नहीं रख सकती। पति का नाम लेना अर्थात जीवन के रहस्यतम संपर्क को ही मानो निर्लज्जता-पूर्वक सबके सामने प्रकट कर देना है। भय के विश्वास एवं सामाजिक लज्जा के भाव के मिश्रित प्रयास से वह पति का नाम नहीं लेना चाहती। जीवन भर उसने यह नाम कभी लिया भी नहीं। लेकिन सखि-सहेलियां उसे यों ही छोड़ने के लिए तत्पर नहीं है। या तो झूला चलता ही रहेगा अथवा उसे झूले से तब तक नहीं उतरने दिया जायगा—जब तक कि वह नाम न लेले। भय व लज्जा का स्थान यहां खेल का कारण बन जाता है।

यों तो इस प्रश्न का सीधा सा उत्तर यही हो सकता था कि पत्नी एक ही शब्द में अपने पति का नाम बोल दे। लेकिन नहीं, उसके नाम के उच्चारण के साथ एक काव्यात्मक कथ्य-प्रयोग भी है।

झूलने वाली विवाहित महिला अपने पति का नाम एक काव्य-बद्ध उक्ति के साथ लेती है। यही उक्ति अथवा उक्तियां वस्तुतः कथ्य-साहित्य की एक निधि है। ये उक्तियां परंपरा से चली आती हैं और उनके रचयिता एकदम अज्ञात है। ज्ञात केवल यही तथ्य है कि ऐसी उक्तियों का सृजन निश्चय ही महिलाओं ने किया होगा और यदि नवीन उक्तियां सर्जित भी हो रही हैं तो उनके सृजन का श्रेय भी महिलाओं को ही है।

लोक साहित्य के अध्ययन के द्वारा वस्तुतः हम सामूहिक मानस का दर्शन कर पाते हैं।

इसमें व्यक्ति की प्रतिक्रिया गौण और समूह की अचेतन अभिव्यक्ति ही प्रमुख होती है। इस दृष्टि से पति के नाम लेने के विषय में महिलाओं द्वारा जो भी कहा गया है, वह वस्तुतः महिलाओं की वह प्रतिक्रिया है जो उनके सामूहिक अचेतन मन में सन्निहित है। सही है कि सावन की तीज के सुखद त्यौहार में अपने प्रियतम के नाम को लेते समय ठीक वैसी ही सुखद परिकल्पना भी की गई हो !

लोक संस्कृति के इस अंक में महिलाओं की ऐसी ही उक्तियों को संग्रहित करके प्रकाशित किया जा रहा है।

यदि हम इस अंक में प्रकाशित काव्यात्मक उक्तियों को ही आधार मान कर, इनका विश्लेषण करें तो सहज ही ज्ञात हो जायेगा कि इनमें कहीं वैवाहिक संबध, कहीं पति के सौन्दर्याभूषण, कहीं प्रेम-क्रीड़ाएं, तो कहीं पत्नी के वियोग-जनित भावों का वर्णन किया हुआ है। किन्हीं उक्तियों में पति के गुणों का वर्णन करके कह दिया गया है कि वही मेरे पति हैं। कुछ उक्तियों में कहा गया है कि पत्नी के प्रति पति का क्या भाव है। वह पति की प्यारी या रानी है या नहीं। इसी प्रकार पति का अभिवादन, उसकी सेवा एवं प्रशंसा की उक्तियां भी मिलती हैं। इनके अतिरिक्त पति के नाम के साथ, उनके अपने रिश्तेदारों एवं संबंधों के जरिये भी संकेत दिये हैं। सासूजी का पुत्र एवं नणद के बीर रिश्ते के ही संकेत हैं। ये सभी बातें पद के दूसरे चरण में ही कही जाती हैं। इसी चरण में 'पति' का नाम भी रहता है।

दूसरे शब्दों में इसी बात को यों कह सकते हैं कि उक्ति तो परंपरा से प्राप्त है केवल उसमें पति का नाम जोड़ भर देना है। शेष बातें तो पति के नाम को स्थापित कर देने मात्र के लिए हैं।

लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि इस काव्यात्मक उक्ति में दो चरण होते हैं। पहिले चरण में कहीं एक तथ्य और कहीं दो तथ्यों का वर्णन आ जाता है। लेकिन इन तथ्यों का अन्वय करने पर संपूर्ण पद का कोई सांगोपांग अर्थ निकलता हो—सो बात भी नहीं। प्रथम पंक्ति का अपना एक चित्रात्मक अर्थ है और दूसरी पंक्ति में पति के व्यक्तिवाचक नाम के साथ किसी वैशिष्ट्य को व्यक्त किया गया है। लेकिन एक प्रयत्न सहज एवं स्पष्ट रूप से सामने आता है कि प्रथम एवं द्वितीय चरण की 'तुक' अवश्य मिलती है। तुक-मिलान का ठीक यही विधान बालकों की निरर्थक पहेलियों एवं बांधने-खोलने की काव्यात्मक क्रीड़ाओं में भी मिलता है।

इस टिप्पणी के साथ प्रस्तुत संग्रह को समझने की दृष्टि से यह बताना उचित होगा कि उसका प्रकाशन किस रूप में किया गया है। प्रत्येक पद में पति के किसी विशिष्ट व्यक्ति-

वाचक नाम के बजाय राजस्थानी के उन शब्दों को काम में लिया गया है जो प्रियतम अथवा पति के लिए लोक काव्य में प्रचलित हैं। यथा गाढ़ा मारू, मीठा मारू, पन्ना मारू, हंजा मारू, ढोला मारू अथवा फूठरमल, गायड़मल, धींगड़मल अथवा जलालै-बिलालै, कमधजिया, मारूजी, मदछकिया, सायबजी, आलीजा-भंवर एवं छैल-भंवर। वस्तुतः इन नामों की जगह आपका या उनका नाम भी हो सकता हैं। व्यक्ति-वाचक नामों को इसीलिए गहरे काले अक्षरों में छापा गया है ताकि आप सुविधापूर्वक उस स्थान पर अपना ही नाम पढ़ सकें। एक बात सूचना के तौर पर बताना जरूरी है कि जिन उक्तियों में श्वसुर के रिश्ते का उल्लेख है वहां श्वसुर का व्यक्ति-वाचक नाम भी लिया जा सकता है। श्वसुर के अतिरिक्त अन्य रिश्ते जैसे '**सुगणी सासूजी, नणदल बाई**' का नामोल्लेख आया है वहां व्यक्ति वाचक संज्ञा का कभी प्रयोग किया जाता है और कभी नहीं भी किया जाता।

अन्त में, यही देखना शेष है कि क्या सावन की तीज के अतिरिक्त भी पत्नी द्वारा पति के नाम उच्चार का कोई त्यौहार या अवसर राजस्थान में प्राप्य है? है तो, वह कौनसा है। एक वृद्धा महिला से यह भी ज्ञात हुआ कि जापे से उठने के बाद सूर्य-पूजन के दिन पाट से उतरते समय भी पति के नाम का उच्चारण करवाया जाता है। यह सामग्री प्राप्त करना अभी भी शेष है।

पत्नी द्वारा पति का नाम उच्चार

धोरै धोरै दोबड़ी , बाड़ माथै पाही ,
म्हारा वाभोसा , फूठरमलजी नै परणाई ।

सोना केरा थाळ में , मीठौ मीठौ भात ,
कमधजिया कथा सूं म्हारै कांकण केरौ साथ ।

आडा डोढ़ा गोखड़ा , गढ़पतियां रौ गांव,
सासूजी रा छैल भंवर, फूठरमलजी नांव ।

अेक पग घर में , अेक पग दुकांन ,
म्हारै छैलभंवर रा मोत्यां सोहै कांन ।

पांच री घोड़ी , पचास री भूल ,
माथै बैठा गायड़मलजी , हाथ गुलाब रौ फूल ।

चढ़चौ धुराऊ धूंधळी , बरस्यौ धारीधार ,
अलबेला गायड़मलजी म्हारा आंटीला भरतार ।

माथै पिचरंगी पाग , हाथां तरवार ,
सेजां रमावै म्हारा मदछकिया भरतार ।

शब्दार्थ : **धोरै धोरै**—खेत की सिंचाई के लिए कुए मे बहने वाली पानी की नाली । **दोबड़ी**—दूब । **बाड़**—कांटों की चौहद्दी । **माथै**—ऊपर । **पाही**—बेर की झाड़ियों के पत्ते झाड़ने के बाद उन्हें शामिल किया हुआ औसत मार । यह बाड़ बनाने के काम आती है । **म्हारा**—मेरे । **वाभोसा**—पिता । **परणाई**—विवाह किया । **केरा**— के । **कांकण**—कंकण । **केरौ** — का । **आडा - डोढ़ा** — टेढ़े - मेढ़े । **गोखड़ा**—गवाक्ष । **भूल**—घोड़े या घोड़ी की पीठ पर सजावट का रंगीन कपड़ा । **चढ़चौ धुराऊ धूंधळौ**—उत्तर दिशा से घटा उमड़ी । **आंटीला**—बांके । **पिचरंगी पाग**—पचरंगी पगड़ी । **हाथां**—हाथ में ।

सिव पारवतां रो अेक ई जीव ,
पन्नामारूजी हैं म्हारा पीव ।

दूध में घी , पांणी में जीव ,
धींगड़मलजी है म्हारा पीव ।

ढळती रात आवै नींद ,
धींगड़मलजी म्हारा बींद ।

सोना रो तिमणियो , माथै लगाई तनड़ी ,
म्हैं हूं राजन , **धींगड़मलजी** री बनड़ी ।

भैंस रै चूंघै पाडी ,
म्हैं **हंजा मारू** री लाडी ।

मगरै भाटा , हेटै पांणी ।
म्हैं हूं **मीठा मारू** री रांणी ।

काच री गिलास , सरबत रो पांणी ,
म्हैं हूं **गायड़मलजी** री रांणी ।

बाग बाग में गुल क्यारी ,
निरखै **धींगड़मलजी** री प्यारी ।

चांदी रो लोटो , सोना री झारी ,
म्हैं हूं **आलीजा भंवर** री प्यारी ।

हाथ में पांन , मूंडा में सोपारी ,
म्हैं हूं **फूठरमलजी** री प्यारी ।

शब्दार्थ : सिव पारवतां—शिव-पार्वती । **ढळती**—ढलती । **बींद**—पति । **तिमणियो**—गले में पहिनने का एक आभूषण विशेष । **माथै**—ऊपर । **बनड़ी**—दुल्हिन । **पाडी**—भैंस की बछिया । **लाडी**— बहू । **मगरै भाटा**—टेकरी पर पत्थर हैं । **हेटै**—नीचे । **सरबत**—शर्बत । **निरखै**—देख रही है । **मूंडा**—मुंह ।

माथा ऊपर मोरड़ी ,
म्हैं हूं **मारूजी** री गोरड़ी ।

पीळौ तौ म्हैं हद रंगायौ , पळकै गोटा केरौ तार ,
फूठरमलजी रंग रसिया री म्हैं सुगणी नार ।

बाजरी रौ सोगरौ , ग्वारफळी रौ साग ,
म्हैं **हंजा मारू** री लाडली , वै म्हारा सुहाग ।

सोळै तोळां री वाळली , बीस तोळां रौ हार ,
गढ़पतिया **गायड़मलजी** म्हारै चुड़ला रा सिणगार ।

माथै बोर , गळै तिमणियौ , हाथां मैंदी ,
म्हैं **पन्नामारूजी** हाथ झालियौ जद सूं संदी ।

घी ताऊं , घीलोड़ी ताऊं , घी री ताऊं कीटी ,
मीठा मारू री सेजां जाऊं , लाऊं सोना री बींटी ।

इत्तीसी कुलड़ी , कुलड़ी में जीरौ ,
म्हैं हूं कोडीला **फूठरमलजी** रौ हीरौ ।

रंग गुलाबी डाबी , हीरां सूं जड़ी ,
जलालै बिलालै री हूं जीव री जड़ी ।

पीवरियै रै मारग चढ़तौ डूंगर नीं लागै दोरौ ,
गायड़मलजी सूं म्हारौ हिवड़ौ घणौ सोरौ ।

शब्दार्थ : मोरड़ी—मोरनी । **पीळौ**—पीली ओढ़नी । **पळकै**—चमचमाहट करता है । **केरा**—का । **सुगणी**— सुलक्षणी । **नार**— स्त्री । **बाजरी रौ सोगरौ**—बाजरे की रोटी । **म्हारा**—मेरे । **सोळै तोळां री**—सोलह तोलों की । **वाळली**—गले में पहिनने का एक आभूषण विशेष । **सिणगार**—शृंगार । **ताऊं**—गर्म करूं । **घीलोड़ी**—घी रखने का छोटा बर्तन । **कीटी**—मक्खन गर्म करने के बाद बचे हुए भागों को कीटी कहते हैं । **बींटी**—अंगूठी । **इत्तीसी**—इतनी सी । **कुलड़ी**—मिट्टी का छोटा बर्तन । **म्हैं**—मैं । **डाबी**—डिबिया । **पीवरियै**—पीहर । **डूंगर**—पर्वत । **नीं**—नहीं । **दोरौ**— कठिन । **म्हारौ**—मेरा । **हिवड़ौ**— हृदय । **घणौ**—अत्यधिक । **सोरौ**— सुखी ।

रातो डाबी रंग भरो, ऊपर घेर घुमेर,
फूठरमलजी सायबा री म्हारै माथै मेर।

पांच म्हारै जेठजी, वीरा म्हारै सोह,
फूठरमलजी सायबा म्हांसू राखै मोह।

बाग बगेच्यां सूं उड़तो आयो पांन,
गायड़मलजी मैलां में राखै म्हारो मांन।

मैलां चोरी काकड़ी, झिरोखा राळचा बीज,
धींगड़मलजी वेग पधारो भेळी रमां तीज।

घासियो तो हद्द भरायो, वळै चढ़ाई खोळी,
म्हैं अर म्हारा ढोला मारू भेळी रमां होळी।

हिंगळू पागां ढोलियो, निवार केरो तंग,
मदछकिया धींगड़मलजी सेजां मांणै रंग।

चांदी केरा थाळ में, केसर वरणो भात,
फूठरमलजी जोड़ै बैठो, थांरी गोरी जीमै साथ।

झीणी पैरै धोती अर तीखा बांधै फेंटा,
गायड़मलजी म्हारी सुगणी सासूजी रा बेटा।

शब्दार्थ : **राती**—लाल। **डाबी**—डिबिया। **सायबा**—पति। **म्हारै**—मेरे। **माथै**—पर। **मेर**—महर। **वीरा**—भाई। **सोह**—सौ। **म्हांसूं**—मुझ से। **मांन**—मान। **मैलां**—महलों में। **काकड़ी**—ककड़ी। **झिरोखा**—गवाक्ष। **राळचा**—डाले। **वेग**—जल्दी। **भेळी**—शामिल। **रमां**—खेलें। **तीज**—सावन की तृतीया। **घासियो**—गद्दा। **वळै**—फिर। **खोळी**—खोल। **ढोलियो**—पलंग। **केरो**—का। **मांणै**—मनाते हैं। **केरा**—के। **केसर वरणो**—केसर के रंग का। **थांरी**—तुम्हारी। **जीमै**—खाये। **फेंटा**—साफा। **म्हारी**—मेरी। **सुगणी**—सुलक्षणी। **सासूजी**—सास।

चांदी केरा थाळ में गुदळी पुरसूं खीर ,
फूठरमलजी म्हारी नणद बाई रा वीर ।

गवरल आडी देखती , जिवड़ौ धरै न धीर ,
म्हारै जोड़ै ऊभा **फूठरमलजी** , नणद बाई रा वीर ।

तारां जड़्यौ कसूंबल चीर ,
मीठा मारू नणद बाई रा वीर ।

पग में नेवरी , हाथ में गजरौ ,
म्हैं लुळ लुळ करूं , **सायबजी** सूं मुजरौ ।

मोत्यां केरी झालरी , रेसम केरा तार ,
पोढ़्या **आलीजा भंवर** बाव ढोळै नार ।

झीणौ बाजै बायरौ , छांनै कैऊं बात ,
गायड़मलजी सायबा री घणी करूं ख्यात ।

सळवळतौ सीरौ लापसी , घेवर किणनै भावै ,
गाढ़ा मारू गांव पधारया , नींद किणनै आवै ।

बैठ रूंख पर मैना बोलै , बोलै इमरत वांणी ,
मैलां पधारौ **गायड़मलजी** , घणी उडीकै रांणी ।।

शब्दार्थः केरा—के । **गुदळी**—गाढ़ी । **म्हारी**—मेरी । **नणद**—ननद । **वीर**—भाई । **गवरल**—गोरी । **आडी**—तिरछी । **म्हारै**—मेरे । **ऊभा**—खड़े । **कसूंबल**—लाल । **पग**—पैर । **नेवरी**—पैर का गहना विशेष । **गजरौ**—हाथ में पहिनने का आभूषण । **म्हैं**—मैं । **लुळ-लुळ**—झुक झुक कर । **सायबजी**—पति । **सूं**—से । **केरी**—की । **रेसम**—रेशम । **पोढ़्या**—सोये । **बाव ढोळै नार**—पत्नी बयार कर रही है । **बायरौ**—वायु । **छांनै**—चुपके । **सायबा**—पति । **घणी**—अत्यधिक । **ख्यात**—ख्याति । **सळवळतौ**—गहरे घी में बना गर्मागर्म । **सीरौ**—हलुआ । **किणनै भावै**—किसको अच्छे लगते हैं । **रूंख**—वृक्ष । **इमरत**—अमृत । **उडीकै**—प्रतीक्षा करना ।

कोरो काजळ, कूं कूं केरी टीकी,
हंजा मारू गांव सिधाया, म्हैं पड़गी फीकी।

ताकड़ी, ताकड़ी में टक्का,
बोरुंदा गढ़ में, गायड़मलजी पक्का।

कोरो कागद, काळी स्याही,
ढबो फूठरमलजी जल्दी कांइं।

शब्दार्थ : कूं कूं— कुंकुम। केरी—की। सिधाया — गये। म्हैं— मैं। कागद — कागज। काळी— काली। ढबो— ठहरो। कांइं—क्या।

शोध-पत्रिका

सम्पादक : डॉ. देवीलाल पालीवाल

यह त्रैमासिक पत्रिका सन् १९४७ से निरन्तर साहित्यिक ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक क्षेत्र में अनुसंधान का महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। अद्यावधि इस में अनेक महत्वपूर्ण शोध-निबंध, ताम्र-पत्र, प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थ तथा अन्य प्रकार की मूल्यवान् शोध-सामग्री प्रकाशित हुई है।

एक प्रति : तीन रुपये
वार्षिक : दस रुपये

सम्पर्क :

साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ,
उदयपुर [राजस्थान]

लोक साहित्य

सम्पादक : डॉ. रामप्रसाद दाधीच

लोक साहित्य के वैज्ञानिक अध्ययन और शोध की हिन्दी में महत्वपूर्ण पत्रिका

वार्षिक शुल्क ८ रुपये
अध्यापकों एवं छात्रों के लिए ६ रुपये

सम्पर्क :

लोक साहित्य केन्द्र, सरदारपुरा
१ ए, जोधपुर [राजस्थान]

हिन्दी नवलेखन की सशक्त मासिकी

लहर

सम्पादक : प्रकाश जैन, मनमोहिनी

नियमित हिन्दी पाठकों के समक्ष कहानियों, कविताओं के अतिरिक्त समसामयिक घटनाओं–समस्याओं पर विचारयुक्त सामग्री प्रस्तुत करती रही है ल.ह.के विशेषांक स्थायी महत्व के रहे हैं

एक प्रति : एक रुपया
वार्षिक : दस रुपया

सम्पर्क :

महात्मा गांधी मार्ग,
पो. बॉ. ८२, अजमेर

अभिनव विचारों का साहित्यिक मासिक

वातायन

साहित्यिक मासिक

प्रति माह :
सृजन के सभी पक्ष आप पढ़ेंगे.
समसामयिक साहित्यिक समस्याओं पर गंभीर चिन्तन प्रधान निबन्ध.
साहित्येतर समस्याओं पर लेख.
पुस्तकों की सम्यक समालोचना.
एवं अन्य स्थायी स्तम्भ.

एक प्रति : एक रुपया पचीस पैसे
वार्षिक : बारह रुपये

सम्पर्क :

५, डागा बिल्डिंग
बीकानेर [राजस्थान]

राजस्थान स्टेट लोटरीज प्रथम ड्रा

एक लाख रुपये के इनाम के विजेता

श्री श्योचन्द्रराम यादव, पेशा : काश्तकारी

निवासी : नाथी का वास, मलिकपुर पंचायत, तहसील : सांभर, जिला जयपुर

आप भी

इतने ही भाग्यशाली हो सकते हैं !

राजस्थान स्टेट लोटरी का

दूसरा ड्रा ६-४-१९६९

दूसरे ड्रा का टिकिट खरीदिये

कुल इनाम १५३

पहला इनाम— १ लाख रुपये और एक एम्बेसेडर कार अथवा २५,००० रुपये ।
दूसरा इनाम— ५०,००० रुपये ।
तीसरा इनाम— २५,००० रुपये ।
चौथा इनाम— २,००० रुपये [पचास]
पांचवा इनाम— १,००० रुपये [एक सौ]

कुल ४ लाख रुपये के १५३ इनाम

एजेन्टों को भी कमीशन में इजाफा

पहले ५००० तक १५ प्रतिशत
५००० से २०,००० तक १६ प्रतिशत
२०,००० से ५०,००० तक १८ प्रतिशत
५०,००० से ऊपर २० प्रतिशत

१ लाख से ऊपर १ प्रतिशत विशेष बोनस

आज ही एजेन्ट बनिये !

जिले की ट्रेजरी व तहसील की सब-ट्रेजरी में टिकिट मिलते हैं ।

निदेशक, अल्प बचत एवं स्टेट लोटरीज विभाग, सी– ३०, भगवानदास रोड, जयपुर

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का
राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

राजस्थानी - हिन्दी

प्रकाशन नाम	सम्पादक	मूल्य — रुपये.
कान्हड़दे प्रबंध	प्रो० के० बी व्यास	१२. २५
क्यामखां - रासा	डा० दशरथ शर्मा अगरचंद और भंवरलाल नाहटा	४. ७५
लावा - रासा	श्री महताब चन्द खारेड़	३. ७५
बांकीदास री ख्यात	श्री नरोत्तमदास स्वामी	५. ५०
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग १	श्री नरोत्तमदास स्वामी	२. २५
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
कवीन्द्र - कल्पलता	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	२. ००
जुगल विलास	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	१. ७५
भगत - माळ	श्री उदयराज उज्जवल	१. ७५
राजस्थान पुरातत्त्व मंदिर के हस्त-लिखित ग्रंथों की सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	७. ५०
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान हस्त-लिखित ग्रंथों की सूची भाग २	श्री गोपालनारायण बहुरा	१२. ००
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	४. ५०
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रंथ संग्रह सूची	श्री गोपालनारायण बहुरा	६. २५
मुहता नैणसी री ख्यात भाग १	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग २	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	९. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ३	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ००
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ४	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ७५
राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग ३	श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी	५. ५०
सूरजप्रकाश भाग १	श्री सीताराम लाळस	८. ००
सूरजप्रकाश भाग २	श्री सीताराम लाळस	९. ५०
सूरजप्रकाश भाग ३	श्री सीताराम लाळस	९. ७५
नेहतरंग	श्री रामप्रसाद दाधिच	४. ००
मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन	डा० मोतीलाल गुप्त	७. ००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है

[राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित]

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित–सं.। विज्ञा.। डी। ५५९। ६७। बी–१५७५ ३बी.

लोक संस्कृति

के सजिल्द तेरह अंक

[दिसंबर, ६७ से दिसंबर ६८ तक]

राजस्थान की विभिन्न लोक-साहित्यात्मक एवं लोक कलात्मक विधाओं पर लोक संस्कृति का प्रकाशन किया जा रहा है।

यह मासिक पत्र रूपायन संस्थान द्वारा गत आठ वर्षों से प्रकाशित किया जा रहा है। नवम्बर, ६७ तक इस पत्र का नाम वाणी था और केवल लोक-कथाओं का प्रकाशन किया जा रहा था। दिसंबर ६७ से इसका नाम एवं स्वरूप परिवर्तित कर दिया गया।

लोक वार्ता के विद्वानों, विषय पर कार्य करने वाली संस्थाओं एवं विशेषकर लोक-कथाओं के अध्येताओं के लिए लोक संस्कृति के पिछले अंक (दिसंबर, ६७ से दिसंबर ६८ तक) सजिल्द तैयार कर दिए गये हैं।

कम ही प्रतियां शेष हैं। अपने पुस्तकालयों हेतु शीघ्र मंगवायें।

मूल्य : ३० रुपया

रूपायन संस्थान के प्रकाशन

लोक कथा

१. बातां री फुलवाड़ी [नौ भाग प्रकाशित]
बीस भागों में संपूर्ण करने की योजना

प्रति भाग १५ रुपया

२. तीडोराव [बड़ी लोक कथा पर आधारित लोक उपन्यास]

प्रति पुस्तक १. ५० रुपया

३. नाहर सिंह–वछराज सिंह [तीन कथाओं का छोटा संग्रह]

प्रति पुस्तक २ रुपया

४. अनोखा पेड़ [हिन्दी में लिखित पशु-पक्षी संबंधी कथाएं]

प्रति पुस्तक ६. ७५ रुपये

राजस्थानी कविता

५. राधा [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपया

६. दीवा कांपै क्यूं [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

७. चेत मांनखा [रेवत दान द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक ४ रुपया

अनुवाद

८. बाम्बी [वाल्ट डिज़ने का राजस्थानी अनुवाद]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

विवेचन

९. राजस्थान का लोक साहित्य [नानूराम संस्कर्ता द्वारा लिखित]

प्रति पुस्तक १५ रुपये



चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया



वर्ष ८ अंक ६

कथा , गीत , गाथा , कहावत , मुहावरा ,
धर्म , देवी-देवता , त्योहार, नाट्य , चित्र ,
मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

लोक संस्कृति

संपादक

कोमल कोठारी , विजयदान देथा

रूपायन संस्थान बोरुन्दा

संपादकीय

यह बात तो सही है कि भारत के लोक संगीत के विषय में आज एक अन्तर्राष्ट्रीय जिज्ञासा का जन्म हो गया है। केवल भारत ही नहीं, विश्व के सभी भागों में लोक संगीत के प्रति अनायास ही एक गहरी रुचि उत्पन्न हो गई है। इस जिज्ञासा एवं रुचि के कौनसे कारण हैं अथवा यह होना चाहिए या नहीं, इस समस्या का उत्तर ढूंढने के बजाय यह देखना उचित होगा कि क्या हम इस अन्तर्राष्ट्रीय मांग को पूरा करने के लिए कुछ प्रयत्न कर सकते हैं अथवा नहीं।

लोक वार्ता विषयक वे सभी कलाएं जो मौखिक हैं अर्थात समाज के कंठ में ही युगों से जीवित रही हैं, उन्हें संरक्षित करने एवं अन्तर्राष्ट्रीय रूप से उपयोग में लाने का प्रयास हम सहज ही कर सकते हैं। इस प्रयास के लिए हमारे पास दो विशिष्ट साधन हैं—प्रथम : टेप रेकॉर्डिंग एवं दूसरा : ग्रामोफोन रेकॉर्ड्स। इनके अतिरिक्त अनेक साधन और भी हो सकते हैं जिनमें अनेकानेक दृश्य-श्रव्य उपकरणों का प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु संभवतया भारतीय संस्थाएं जिन आर्थिक परिस्थितियों में से निकल रही हैं, उनके लिए सहज ही महंगे उपकरण प्राप्त होना संभव नहीं दिखता। अत: लंबी एवं आकाशी कल्पना के बजाय छोटी-सी बात ही कहना चाहते हैं कि टेप रेकॉर्डिंग एवं ग्रामोफोन डिस्क के प्रयोग के द्वारा हम भारत के लोक वाङ्मय को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भेज सकते है। पुन: टेप रेकॉर्डिंग एक ऐसा साधन है जो हमारे देश में अभी अधिक प्रयोग में नहीं आया है और सामान्य व्यक्ति की आर्थिक क्षमता के परे है। ऐसी दशा में, श्रव्य साधनों में डिस्क रेकॉर्ड ही एक ऐसा माध्यम बन सकता है जो लोक संगीत का अपने सही एवं प्रामाणिक रूप को प्रस्तुत करने में सिद्ध हो सकता है।

किन्तु, हमारे देश के बहुत कम लोगों को यह ज्ञात होगा कि डिस्क रेकॉर्डिंग की अपनी प्रक्रिया में भी अनेक बाधाएं हैं। प्रमुख बाधा तो यही है कि भारत में केवल एक ही कंपनी रेकॉर्ड्स बनाया करती है। अर्थात हिज मास्टर्स वोइस की इस क्षेत्र में 'मोनो-पोली' है—एकाधिकार है। इस एकाधिकार का परिणाम यह होता है कि व्यापारिक रूप से जो लाभ-दायी होगा — केवल वही समाज के सामने आयेगा। फिल्मी संगीत एवं सस्ता संगीत जिस विपुल मात्रा में समाज में चला आता है, उसके पीछे भी शुद्ध 'व्यापारिक' आधार है। प्रतियोगिता के अभाव में संगीत के नवीन स्रोतों एवं क्षेत्रों को खोजने की जिज्ञासा भी नहीं रहती।

ऐसी परिस्थिति में लोक संगीत की डिस्क रेकॉर्ड्स को व्यापारिक आधार पर निकलवा पाने की उम्मीद कम से कम ही रहती है और यदि लोक वाङ्मय के क्षेत्र में काम करने वाली संस्थाएं भी चुप ही बैठी रहीं तो निश्चय ही एक अत्यंत लाभदायी एवं महत्वपूर्ण सुरक्षा के साधन को हमेशा के लिए खो भी देंगी।

गत कुछ वर्षों में हमने यह प्रयास देखा है कि कुछ व्यक्तियों ने अथवा संस्थाओं ने लोक संगीत की सुरक्षा की दृष्टि से स्वरलिपि का सहारा लिया है और कुछ पुस्तकें बाजार में आई हैं। किन्तु स्वरलिपि एवं उसके पुनः गाने की सच्चाई के बीच जो अन्तर रह जाता है, उससे सभी भली-भांति परिचित हैं। इस अन्तर को यदि कोई मिटा सकता है तो वह एक साधन है—डिस्क रेकॉर्डिंग।

संभवतया यह मात्र कल्पना ही नहीं होगी कि हम योजनाबद्ध रूप से भारत के प्रत्येक सांस्कृतिक क्षेत्र से प्रतिवर्ष बारह-बारह डिस्क्स निकालने का कार्यक्रम हाथ में लेवें। इस योजना का एक ही स्थान से खर्च करने का सोचें तब तो बहुत अधिक आयेगा लेकिन हर क्षेत्र से कुछ उत्साही संस्थाएं आगे बढ़ें तो आसानी से साधनों को जुटाया जा सकता है।

प्रश्न यह उठता है कि क्या हम इन डिस्क रेकॉर्डस के द्वारा अपनी व्यय की गई राशि को पुनः प्राप्त कर सकेंगे ? पुनः प्राप्त करने के पीछे भी यही मंशा है कि अगला काम होता चले। हमें महसूस होता है कि हम अपने देश में ही तीन-सौ के लगभग रेकॉर्ड्स बेच सकते हैं और शेष रेकॉर्ड्स का बाजार विश्व के दूसरे भागों में खोजा जा सकता है। देश-विदेश में कुल मिला कर दो हजार से अधिक संस्थाएं ऐसी हैं जो केवल लोक वार्ता के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। यदि उन संस्थाओं का समर्थन भी मिल जाय तो यह योजना कुछ ही समय में सफलता प्राप्त कर सकती है।

इस विचार को पढ़ कर अनेक लोग यह सोच सकते हैं कि इस समय बाजार में अनेक प्रदेशों के लोक गीतों के रेकॉर्ड्स प्राप्त हैं। किन्तु दुर्भाग्य यह है कि यह रेकॉर्डेड लोक गीत न तो प्रामाणिक हैं और न उन्हें इस दृष्टि से तैयार ही किया गया है जिनके द्वारा लोक सांगीतिक अध्ययन का आधार बन सके। हम जिन लोक गीतों के रेकॉर्डिंग की बात करना चाहते हैं : वे न लोक प्रियता की ओर अग्रसर हों और न व्यापार की ओर। उनका शुद्ध दृष्टिकोण प्रामाणिक लोक संगीत की संरक्षा हो और एक ऐतिहासिक काल की मौखिक परम्परा का सजीव चित्र हो।

निश्चय है कि यह प्रयास न व्यापारिक है और न लाभ के लालच से पूर्ण हो सकता है। किन्तु लोक वार्ता के विशेषज्ञों एवं समाज के सजग व्यक्तियों के लिए निश्चय ही यह चुनौती है कि वे जहां निरपेक्ष अध्ययनों के द्वारा लोक संस्कृति की गहराई में जाने का प्रयास कर रहे हैं, वहां इस साधन के उपयोग के प्रति भी एक चेतना को जागृत करने का प्रयास करें।



नजराना

एक लखपती बनिये के बेटे की बारात शादी के बाद वापिस लौट रही थी। बेटे के ससुराल वालों ने हजारों रुपयों की समठावनी और हजारों रुपयों का दहेज दिया था। बारात गाजों बाजों के साथ वहां से रवाना हुई। एक डकैत ठाकुर ने इस बारात को लूटने का निश्चय किया। यह ठाकुर बारह बरसों से डाके डाल रहा था। छोटे मोटे कई डाके डाले पर ऐसा मौका कभी नहीं आया। इस एक बारात के लूटने से ही सारी उमर का इन्तजाम हो जायेगा। उस ठाकुर ने सोचा कि इस डाके के बाद अपनी ठौड़ पकड़ लूंगा। बहुत बरस हो गये जंगलों में भटकते! इस बारात का माल हाथ आ जाय तो तीन पीढ़ी भी नहीं खतम होगा। यह विचार कर उसने अपने साथियों को सन्देश भेज भेज कर इकट्ठा कर लिया। पांच सौ बरातियों का बेहद जंगी मजमा था। साथ में रख-वाली के लिए भील और मीणे भी थे। ठाकुर ने हिसाब लगाकर सौ डाकुओं का जत्था बनाया। दो पखवाड़े पहले ही उसने एक मौके की घाटी देखकर वहां अपना मोर्चा लगा लिया।

इधर सेठ के कानों में भी इस बात की भनक पड़ गई थी। पांच सौ आद-मियों की बारात थी तो भी डाकुओं से सामना करना कोई हंसी खेल नहीं था। गांव जाने का मार्ग भी एक ही था। बारात इधर उधर कहीं टल भी नहीं सकती थी। यदि डाकू घाटी में मोर्चा लगाये बैठे हैं तो वे एक बाराती को भी जिन्दा नहीं छोड़ेंगे। हजारों रुपयों का दहेज देखते देखते लूट लेंगे। बारात के साथ चालीस पचास भील, मीणे और बावरी थे। उन्होंने सेठ से कहा——आप किसी बात की चिन्ता मत कीजिए। हम, मरने पर भी डाकुओं को बारात के हाथ नहीं लगाने देंगे।

पर सेठ को धीरज नहीं बंधा। उन्होंने मन में अच्छी तरह समझ लिया कि यह विश्वास बहुत मंहगा पड़ेगा। खून खराबी होने से बारात के शकुन बिगड़ जायेंगे। दुल्हा-दुल्हिन के कुछ हो गया तो मैं मुंह दिखाने लायक ही नहीं रहूंगा। इस समय तो बुद्धि से ही कुछ उपाय निकालना चाहिये।

सेठ ने थोड़ी ही देर में अटकल विचार ली। और उपाय विचारते ही जैसे उनके सिर से हिमालय का बोझ उतर गया। उनके मन में पक्का निश्चय हो गया कि इस तरकीब से बारात राजी खुशी गांव पहुंच जायगी। सारे बरातियों को उन्होंने धीरज बंधाया कि सोच फिक्र करने जैसी कोई बात नहीं। सेठ अकेले ही डाकुओं से निपट लेंगे। उनके बिना कहे, किसी को कोई दखल देने की जरूरत नहीं।

सेठ की बुद्धि पर सबको भरोसा था। वे सब निश्चिन्त होकर अपनी अपनी जगह बैठ गये। किसी ने कोई चिन्ता नहीं की। सेठ खुद, दूल्हे के साथ सब से आगे वाले रथ में बैठ गये।

बारात ठीक दोपहर में ढोल ढमाकों के साथ घाटी पर पहुंची। सेठ तो पूरा जाब्ता किये निश्चिन्त बैठे थे। घाटी के बीच में आते ही ठाकुर ने अपना जत्था लेकर बारात को रोका। सेठ निर्भय होकर दुल्हन को लेकर रथ से नीचे उतरे। उनके दोनों हाथों में दो थाल थे। एक में मेवा-मिष्ठान्न, मिश्री और पताशे भरे थे। दूसरे में इक्कीस मोहरें भरी थीं। सेठ ठाकुर के पास जाकर बोले—ठाकुर, मेरी यह बहू आपकी गोद है। और मेरी तरफ से आपको यह मामूली नजराना है। कबूल कीजिए।

सेठ की यह बात सुनते ही ठाकुर ने तलवार दूर फेंक दी और बोले — सेठ, मार डाला !

यह कहकर ठाकुर ने बहू के सिर पर हाथ फेरा और कहा—मेरी लाडली बेटी, दूधों नहाओ और पूतों फलो।

फिर उन्होंने सेठ की तरफ देख कर कहा — सेठ, यह बहू मेरे गोद है इसलिए बिटिया के दहेज की कोई चीज मैं नजराने में कबूल नहीं कर सकता। इसके तो ससुराल का पानी पीना भी मेरे लिए निषिद्ध है।

फिर सेठ की पीठ ठोकते हुए कहा — सेठ, तुमने मुझे एक बोल में ही हरा दिया। बीस दिनों से मैं यहां सौ साथियों का जत्था लेकर यह बारात लूटने के लिए तापड़धिन उड़ा रहा था। पर तुमने मुझे उल्टा लूट लिया। कोई बात नहीं, बनी सो भाग की। अब आप मेरी तरफ से बेटी के लिए ये एक सौ एक रुपये कबूल कीजिए।

यह कह कर ठाकुर ने कमर से बंधा हुआ तोड़ा खोला और एक सौ एक रुपये गिन कर बहू के हाथ में रख दिये।

फिर अपना जत्था लेकर ठाकुर खुद बारात के साथ रवाना हुए। घर

पहुंचने के बाद सेठ ने उनको वापिस नहीं जाने दिया। अपने साथ ही धन्धे में भागीदार बना लिया। ठाकुर की लालसा भी पूरी हुई। उस दिन के बाद उन्होंने भी डाके डालने बन्द कर दिये।

ठाकुर और सेठ दोनों ने ही इस प्रकार अपनी अपनी मर्यादा निभाई। दोनों सगे भाइयों की तरह साथ साथ रहे।



सौगन्ध

एक बनिये को प्याज खाने का बेहद शौक था। बारहों महीने, तीसों दिन, वह हर समय प्याज की भाजी रंधा कर खाता ही। कहीं भी भाई बन्धुओं में या ससुराल में पाहुना बन कर जाता तो भी निशंक अपने मुंह से कहकर प्याज का साग बनवा लेता। पहले तो सेठानी भी उसकी इस आदत से परेशान हुई, पर धीरे धीरे वह भी उसके अनुरूप सांचे में ढल गई।

एक बार उस गांव में एक जैन साधु आये। आसपास के गांवों के सेठ-साहूकार भी उनका प्रवचन सुनने के लिए पहुंचे। कई दिनों तक उनका प्रवचन चलता रहा। महाराज ने एक एक भक्त को खाने पीने की चीजों की सौगन्ध दिलाई। किसी को बैंगन छुड़ाया, किसी को आलू, किसी को कुम्हड़ा, किसी को मूली, किसी को शकरकंद, किसी को केले, किसी को बेर, किसी को तुरई, किसी को ककड़ी और किसी को मतीरा खाने की सौगन्ध दिलाई। संयोग की बात कि उस प्याज खाने वाले बनिये को महाराज ने प्याज खाने की सौगन्ध दिला दी। बनिये ने कहा—महाराज, आपका आदेश हो तो मैं धान खाना भी छोड़ दूं पर मेरे से प्याज खाना तो मरने पर भी नहीं छूटेगा।

महाराज ने कहा—मरने के बाद तो सारी चीजें यहीं छूट जायेंगी। जीवन रहते कुछ भी छोड़ना अपने हाथ है। छोड़ना हो तो प्याज छोड़, वर्ना तेरे मन में हो सो कर।

महाराज भी बेहद जिद्दी थे। एक बार बात पकड़ लेते तो आसानी से छोड़ते नहीं थे। आखिर बनिये को प्याज छुड़ाकर ही माने। दूसरे बनियों को तो मुख-

जबानी सौगन्ध दिला कर मान गये पर इसे तीन बार हाथ में पानी दिलाया कि वह प्याज कभी नहीं खायेगा।

प्याज न खाने की कसम लेकर ही बनिया घर आया। सेठानी से पूछा—आज क्या भाजी बनी है ?

सेठानी ने कहा—इसमें पूछने की क्या बात है ! भाजी तो प्याज की हीं बनी है ; तुम्हें पता नहीं है क्या ?

बनिये ने कहा—आज तो महाराज ने मुझे प्याज न खाने की सौगन्ध दिलादी है। तीन बार हाथ में पानी लिया है। क्या करूं प्याज खाने के लिए मन बहुत ही कट रहा है, पर महाराज की सौगन्ध के आगे वश नहीं चलता।

सेठानी ने कहा—महाराज कोई देखने थोड़े ही आयेंगे। अपने तो सौगन्ध भी खा लेनी और प्याज भी खा लेना।

पर बनिये ने कहा—ऐसा करने के लिए भी मन नहीं मानता। सौगन्ध खाई है वह तो निभानी ही पड़ेगी। तू जल्दी से कोई दूसरी भाजी बना दे।

सेठानी काम करने में आलसी थी। बोली — अब कौन चूल्हा जलायेगा ओर कौन तरकारी काटेगा ! प्याज का बढ़िया साग बना बनाया तैयार है। आज आज तो खालो, नहीं तो मन में रह जायेगी।

तो भी बनिये का मन नहीं माना। वह भी डरपोक स्वभाव का था। कहा — आज की आज सौगन्ध तोड़नी तो बुरी रहेगी। जितने दिन निभे, उतने दिन तो निभानी चाहिए। प्याज की भाजी पड़ी रहने दे। भूख बड़े जोर की लगी है। ला, थोड़ा पापड़ ही छौंक दे।

सेठानी ने फिर बहाना बनाया। बोली—पापड़ का साग बनाऊंगी तब तक तुम्हारी भूख मर जायेगी। सौगन्ध खानी तो सच्चे मन से खानी चाहिए। मन में आना तो आधा खाना है। प्याज का नाम लेने से ही तुम्हारे मुंह से लार टपकती है। मेरा कहना मानो ; आज बहुत बढ़िया भाजी बनी है। आज आज तो खा लो। कल से सौगन्ध पाल लेना।

बनिये के मन में तो खाने की थी ही। सेठानी के इतना आग्रह करने पर उसने कहा—तुम्हारी ऐसी ही मरजी है तो यही साग ले आओ। पर एक उपाय करना। देगची का ढक्कन पूरी तरह बन्द करके सिर्फ शोरवा शोरवा आने दो। प्याज का एक फूस भी मत गिरने देना। महाराज ने सौगन्ध प्याज की दिलाई है, शोरवे की नहीं। सौगन्ध भी सच्ची हो जायेगी और मन की मंशा भी पूरी हो जायेगी।

सेठानी ने कहा—हां, यह गली तो ठीक निकाली। शोरवे में भी मसाला, पानी और घी का बघार है। महाराज ने इनकी सौगन्ध तो दिलाई नहीं है! ऐसी चतुराई से शोरवा डालूंगी कि थाली में प्याज का फूस भी नहीं आने पायेगा।

तो बनिया खाने के लिए बैठा। सेठानी मसोते से पकड़ कर प्याज की देगची लाई। ऊपर मजबूत ढक्कन लगा रखा था। उसने थाली में शोरवा उड़ेलना चाहा तो एक बूंद भी नहीं गिरी। तब उसने ढक्कन को थोड़ा ढीला किया तो शोरवे के साथ साथ प्याज के टुकड़े भी आने लगे। तब सेठानी बोली: यह लो, अन्दर टुकड़े पड़ गए! अब?

थाली में अपनी आंखों से प्याज देखने के बाद बनिये का मन पूरी तरह विचलित हो गया। वह बोला— अब क्या! मेरा प्याज खाने का मन नहीं और तेरा प्याज डालने का मन नहीं; फिर भी अगर अपने आप जबरदस्ती पड़ते हों तो पड़ने दे। इसका तो हम भी क्या करें!

शोरवे के साथ प्याज थाली में पड़ते ही गये। इस प्रकार उसने अपनी सौगन्ध की मर्यादा निभाई।



कुंजड़े का नफा

एक कुंजड़ी एक सेठानी के यहां रोज फल बेचने आया करती थी। सेठानी उसके अच्छी खासी बटत करा देती। कभी एक रुपये के और कभी दो रुपयों के फल कुंजड़ी वहां बेच देती। इसलिए वह सबसे पहले सवेरा होते ही ताजे फल लेकर वहां आ जाती। सेठ के सराफे का धन्धा था। असीम सम्पत्ति जमा की हुई थी। रुपये दो रुपये के खर्च से उनका क्या बनता बिगड़ता। रोज आने के कारण सेठानी भी कुंजड़ी का मन रखती।

वे दोनों पति पत्नी फलों का ही धन्धा करते थे। कुंजड़ा दुकान लगा कर बाजार में बैठता और कुंजड़ी टोकरी लेकर फेरी लगाती। मजे से घर का गुजारा चलता।

एक दिन बातों बातों में कुंजड़ी ने सेठानी से पूछा— सेठानी जी, तुम्हारे सराफे के धन्धे में कितना नफा रहता होगा !

सेठानी बोली—मुझे तो पता नहीं। मैं तो सिर्फ घर का कामकाज देखती हूं। धंधा तो सेठ देखते भालते हैं।

कुंजड़ी बोली — हम तो दोनों लोग लुगाई कमाते हैं। मरद बाजार में फलों की दुकान करता है और मैं फेरी लगाती हूं। अकेले आदमी के कमाने से तुम्हारे घर का काम कैसे चलता होगा, मुझे तो कुछ भी समझ नहीं पड़ता।

सेठानी बिचारी एकदम भोली भाली थी। घर के कामकाज के अलावा उसे दूसरी किसी बात का कोई पता नहीं था। बोली—काम तो भगवान चलाते हैं, वैसे ही चलता है। तुम दोनों मरद औरत कमाते हो तो तुम्हारी बराबरी तो हम कैसे कर सकते हैं ?

शाम को सेठ घर आये तो सेठानी ने उन्हें आते ही पूछा —— क्यों जी, अपने इस सराफे के धन्धे में क्या नफा रहता है ? मुझे भी बताओ तो सही।

सेठ ने कहा— कोई लम्बा चौड़ा नफा तो रहता नहीं है। बड़ी मुश्किल से सौ रुपयों पर पांच रुपये बचते हैं।

सेठानी ने भोलेपन से कहा — मैं सारा दिन घर में रहती हूं। मुझे भी किसी धन्धे में लगा दो तो मैं भी कुछ काम करूं। दोनों कमाई करने लगें तो ठीक रहेगा।

सेठ ने कहा — कमाई तो भाग्य से होती है। नफा होने का योग होने पर तो मैं अकेला ही काफी हूं। हम, कौन से कुंजड़े या निजारे हैं जो तुम भी धन्धा करो। तुम तो सिर्फ घर का काम धन्धा देखो और मौज करो। मैं अकेला ही बीस धन्धे निपटाने लायक हूं।

सेठ के समझाने से सेठानी तुरन्त मान गई। आगे जिद्द नहीं की। दूसरे दिन कुंजड़ी आई तो सेठानी ने अपनी तरफ से बात चला कर कहा — बहना, मेरे धन्धे में तो कोई विशेष दम नहीं। सौ रुपयों के पीछे बड़ी मुश्किल से पांच रुपये नफा बचता है। तेरे धन्धे में क्या नफा रहता है ?

कुंजड़ी बोली — मेरे धन्धे का क्या पूछना ! दुगना, तिगुना और कई बार तो चार गुना नफा भी हो जाता है।

सेठानी अचम्भे से बोली — हें, तिगुना चौगुना ? तब तुम्हारे धन्धे की क्या बात है ! नफा ही नफा है।

कुंजड़ी का पहनावा देख कर सेठानी ने मन में सोचा कि वह मूंजी बहुत

है । इतना नफा होता है तो भी ऐसी मलीच की तरह क्यों रहती हैं । सारे शरीर पर सोने चांदी का नाम तक नहीं ! यह माया क्या साथ चलेगी ! पर तो भी सेठानी ने कुंजड़ी से कुछ कहा नहीं । शायद अलग अलग जातियों के पहनावे के अलग अलग नियम होते होंगे । कभी कभी वह अपनी साथिन से मसखरी में जरूर कह देती — मूंजी तो मेरे सेठजी भी बहुत हैं पर तू तो उनसे भी आगे जाती है ।

कुंजड़ी बाहर की तिबारी से ही फल बेचकर लौट जाया करती थी और सेठानी ने भी कभी कुंजड़ी का घर देखा नहीं था । इसलिए दोनों के बीच ऐसी ही गोलमोल बातें चलती रहती थीं ।

एक बार कुंजड़ी के यहां पांच सात महमान आये । थाल और कटोरियों की पूरी कमी थी । दोनों पति पत्नी के लिए भी पूरे नहीं पड़ते थे । पति के खाने के बाद उसी थाली को मांज कर कुंजड़ी खुद खाना खाने बैठती । पर महमानों को तो एक साथ खाना खिलाना पड़ेगा । रसोई बनाकर वह सीधी सेठानी के पास गई । जल्दी मचाती हुई बोली — घर पर बहुत सारे महमान आ गये हैं । खाने के कुछ बरतन चाहिए । आपके पास हों तो सिर्फ आज के लिए दे दीजिए । कल वापिस पहुंचा दूंगी ।

सेठानी बोली — बरतन कहां जाते हैं । तुम्हारा काम निपट जाने पर आराम से पहुंचा देना । यह कहकर सेठानी तो अन्दर ओरे में गई और आठ दस चांदी के थाल और चांदी की कटोरियां लेकर कुंजड़ी के पास आई । बोली : तेरी जितनी मरजी हो उतने ले जा ।

कुंजड़ी तो चांदी के थाल और चांदी की कटोरियां देख कर ही स्तम्भित हो गई । उसकी आंखें तो जैसे चौंधिया गई हों । आंखें मलती हुई बोली — मुझे तो सादे पीतल के बर्तन चाहिए । इन चांदी के बर्तनों की जोखम कौन मोल ले ।

सेठानी ने कहा—इसमें जोखम की क्या बात । तुम्हारे यहां से बर्तन कहां जाते हैं ? और फिर महमानों को हल्के बर्तनों में परोसेगी तो बुरा नहीं लगेगा ? मेरा कहना मान और ये बर्तन ले जा ।

सेठानी ने बहुत कहा तो भी कुंजड़ी ने चांदी के बरतनों में हाथ नहीं डाला । कली किये हुए पीतल के चार थाल और दस कटोरियां लेकर वापिस लौट आई । तीन चार महीनों बाद सेठ की बेटी का ब्याह मंडा । सेठ ने सेठानी के सामने यों ही बात चलाई—बाकी तो सारी बातें ठीक हैं पर बरातियों को जिमाने के

लिए चांदी के बरतन कम पड़ेंगे। पचास थाल और कटोरियों का सेट तो अपने घर में है। बीस थाल और साठ कटोरियों का इन्तजाम करना है। तुम कहो तो नई घड़वा दूं और तुम कहो तो किसी के यहां से मांग लाऊं।

तब सेठानी बोली—इस काम के लिए आपको चिन्ता करने की जरूरत नहीं। मैं अपने आप इन्तजाम कर लूंगी।

सेठ ने पूछा—पर कहां से कर लोगी ? मुझे भी तो बताओ। ऐसा न हो कि भरोसे रह जांय।

सेठानी ने कहा—आप सोचते हैं कि मैं सारे दिन घर में बैठी रहती हूं, कैसे और कहां से इन्तजाम करूंगी। पर मैं चारों तरफ ध्यान रखती हूं। आपको इन्तजाम करने के बाद बताऊंगी।

दूसरे दिन सवेरे जब कुंजड़ी ओडा लेकर आई तो सेठानी ने उससे कहा—बहना, आज एक काम अटक गया है, तुझे पार लगाना पड़ेगा। लड़की की शादी इसी अगली तीज पर है। बरातियों के जीमने के लिए चांदी के पचास थाल और दो सौ कटोरियां तो हमारे घर में है। बीस थाल और साठ कटोरियां कम पड़ती है। सेठजी ने तो कहा कि नई घड़ा लें, पर मैंने मना कर दिया। पांच दिनों के लिए तू अपने यहां से तेरे चांदी के बर्तन तो ले आ। शादी होने के बाद तुझे वापिस पहुंचा दूंगी।

कुंजड़ी हंस कर बोली—सेठानीजी, आप भी क्या मेरी मसखरी करती हैं। दो प्राणियों के बीच में ही खाने के पूरे बर्तन नहीं हैं। उनके खा लेने के बाद, मैं उसी थाली को मांज कर खा पाती हूं, वर्ना हाथ में ही रोटी लेकर खानी पड़ती है। मेरे तो पैरों में चांदी की कड़ियां ही नहीं है, आप बात करती हैं थाल और कटोरियों की।

सेठानी को एकाएक भरोसा नहीं हुआ। कहा—यह कैसे हो सकता हैं ? तेरे धन्धे में तो दुगना, तिगुना और चार गुना नफा होता है। दोनों मर्द-औरत कमाते हो। यहां तो सिर्फ एक सेठजी ही कमाने वाले हैं और धन्धे में भी कोई लम्बा चौड़ा कस नहीं है। सौ रुपयों के पीछे बड़ी मुश्किल से पांच रुपयों का नफा रहता है। इतने कम नफे में ही जब मेरे घर में चांदी के इतने बर्तन हैं तो तुम्हारे यहां तो हम से भी ज्यादा होने चाहिए।

कुंजड़ी धीरे धीरे सारी बात समझने लगी। ठुड्डी पर हाथ धर कर बोली : कहां राजा भोज और कहां गंगला तेली। आपके और मेरे धंधे की क्या बराबरी ! जैसे तैसे पेट भराई होती है।

अब सेठानी को भी सारी बात समझ में आ गई। शाम को सेठ घर आये तो उसने कहा——आपको चांदी के थाल और कटोरियां घड़वानी हों, अथवा कहीं से लानी हों तो आप खुद अपना इन्तजाम कर लेना। मुझ से नहीं होगा। मेरे भरोसे मत रहना, मैं पहले कह देती हूं।

फिर सेठानी ने सेठ से सारी बातें ब्यौरेवार बताई। बात सुनकर सेठ खूब हंसे। बोले—— सेठानी, मुझे तो तू बिल्कुल भोली लगती है। बिचारे कुंजड़े का नफा भी कोई नफा होता है!



चांद सूरज की साक्षी

एक बनिये के लेन देन का धन्धा था। आस पास के सारे गांवों में उसकी रकम बिखरी हुई थी। बगल में बहियां, हाथ में मिजान और कान में कलम खोंसे हुए वह इस गांव से उस गांव लेन देन करता फिरता। हजारों रुपयों की माया इस धंधे से ही इकट्ठी हुई थी। पड़े पड़े रुपये दिन बढ़ कर रात बढ़ते और रात बढ़ कर दिन बढ़ते—इससे अच्छा धंधा और क्या हो सकता है? सेठ की यह धाक और प्रसिद्धि थी कि उनकी एक लाल छदाम भी कभी नहीं डूबी। आसामी के मरने के बाद भी रुपये वसूल करने की शक्ति उनमें थी। और फिर सेठ अपनी इस नामवरी को लजाना भी नहीं चाहते थे।

एक बार एक ठाकुर ने उनसे छः सौ रुपये उधार लिये। खाता लिखवाने से पहले तो ठाकुर ने बहुत ही आजिजी की कि दूध में धो कर रुपये चुकाऊंगा, पर अपना काम बनने के बाद उनकी धीरे धीरे नीयत बदलती गई। उनकी नीयत बदलने में दुगुना लाभ था। एक तो घर में छः सौ रुपये हजम हो जाते और दूसरे रुपये न डूबने की नामवरी पर दाग लग जाता। सेठ का हल्कापन नजर आ जाता, ठाकुर का बड़प्पन दिख जाता और घर में छः सौ रुपयों का नकद लाभ हो जाता, इसलिए ठाकुर वायदे के बाद बहुत दिनों तक टालमटोल करते रहे।

सेठ के खाते का जाबता पूरी तरह किया हुआ था। साक्षी गवाही सब पक्की थी। पर दूसरे लोगों की तरह ठाकुर से तगादा करना उतना आसान नहीं था। उनको रुपये देते समय भी बापजी अन्नदाता करना पड़ता है और रुपये लेते समय भी। रुपये नहीं दो तो आफत और वापिस मांगलो तो आफत। पर सेठ एक लाल छदाम भी डूबत-खाते नहीं मांडना चाहते थे। और इधर ठाकुर एक लाल पाई भी अदा करना नहीं चाहते थे।

सेठ के दुनिया देखी हुई थी। पहले तो उन्होंने खानगी में ही ठाकुर को रुपयों की याद दिलाई। ठाकुर आज दूंगा, कल दूंगा, करता रहा। अन्त में परेशान होकर सेठ ने ठाकुर से लोगों के सामने तगादे करने शुरू कर दिये। रोकड़ लिये हुए रुपये पांच आदमियों के सामने मुकर जांय तो इज्जत जाती है। लोगों में आया-आया हो जाते। आदमियों के सामने तो ठाकुर कमजोर पड़ कर रुपये चुकाने की हां भी भर लेते पर मन में बहुत खीझते कि बनिये को कभी हाथ दिखाना।

एक बार ठाकुर साहब के पास बहुत सारे आदमी बैठे थे कि सेठ आये। बही की डोरी खोलते हुए बोले — ठाकुर साहब, बहुत दिन हो गये अब तो फारखती हो जानी चाहिए।

ठाकुर ने कमजोर पड़कर कहा––सेठ, आज मेरे पूनम का व्रत है। कल आना। जरूर फारखती कर दूंगा।

तब सेठ बोले––पूनम के व्रत में रुपये देने कब अड़ते हैं? फिर भी आपकी मर्जी। आपका यह कल तो रात ढलने पर आयेगा ही। पर पहले भी बहुत कल आ चुके किन्तु मेरे रुपये नहीं आये। मुझे तो आपके इस आजकल का अन्त ही नहीं आता दिखता। साथ बैठे भाई हैं। ठीक तरह निपटारा हो जाय तो अच्छी बात। कचहरी में दावा मुदकमा करने से आपका भी बुरा लगेगा और मेरा भी अच्छा नहीं लगेगा।

सेठ तो लोगों के बैठे बैठे बहुत सी बातें सुना गये। ठाकुर का मुंह उतर गया। तो भी हंसते हुए कहने लगे — सेठजी, माया के साथ साथ आपकी जबान भी बहुत बढ़ गई है। आजकल रुपयों का जोश ज्यादा खाने लगे गये हैं। कभी किसी गंवार के हत्थे चढ़ गये तो बुरी बीतेगी। मेरा तो कुछ नहीं, आपने कहा वही सुन लिया। पर थोड़ी बहुत बोलने की तमीज रखा करो। सेठ बोले––मैंने तो अपनी जान में कोई उल्टी सीधी बात कही नहीं है। पर आज यह अच्छी तरह समझ में आ गई है कि आप जैसे बड़े आदमियों से लेन

देन करने में गांठ के रुपये भी गंवाने पड़ते हैं और बैर बंध जाता है वह ऊपर से। आगे के लिए अकल ही आई।

ठाकुर फिर ताना मारते बोले---इस अकल का तो क्या अनुमान ; यह तो मौके मौके पर आती ही रहती है। पर कभी ज्यादा आ गई तो तकलीफ देगी। मुझे तो सिर्फ यही कहना है। रुपये लिये वे तो देने ही हैं।

सेठ तो आज निश्चय करके आये थे। इतने लोगों के बीच इस अनसोची फजीती से ठाकुर की देह में जैसे आक दहक उठा। एडी से चोटी तक आग आग फूट गई। मन में पक्की गांठ बांधली कि इस बनिये को हाथ तो बताना ही।

सेठ भी क्या करते। बगल में बही दबा कर वहां से रवाना हो गये। इस काण्ड के बाद ठाकुर के तो गले के नीचे पानी भी ठीक तरह नहीं उतरा। एक नौकर को भेज कर अपनी खास मर्जी के बावरी को अपने पास बुलाया। कहा : तू अभी का अभी जाकर यह पता लगा कि सेठ शाम को कौन से गांव जा रहे हैं। जल्दी लाकर खबर दे।

बावरी ने सेठ के सारे कार्यक्रम का पता लगा कर ठाकुर को बता दिया। ठाकुर सेठ से एक घड़ी पहले ही अपने महलों से बाहर निकल गये। दो एक कोस दूर ऊंचे मगरे पर खेजड़ी के नीचे बैठे गये। सेठ तो समय पर आते हुए दिखाई दिये ही। ठाकुर झट खड़े हुए। चला कर सेठ के सामने की ओर रवाना हुए। पास पहुंचते ही म्यान से कटार निकाली। गाली देते हुए बोले---सेठ के बच्चे, बोल अब कहां जायेगा ! दिमाग में पैसे की गरमी बहुत चढ़ गई है। आज पेट की आंतड़ियां न निकाल दूं तो मेरा भी नाम नहीं।

सेठ अपनी बही को मजबूती से बगल में दबाते हुए बोले---और आप कर भी क्या सकते हैं ! मैं तो पहले ही जानता था। घर पर बच्चों को कागज का पुरजा लिख कर आया हूं कि रास्ते में ठाकुर मेरे साथ घात करेगा। मेरे मरने के बाद राजाजी के पास फरियाद अवश्य करना।

ठाकुर साहब के ठिकाने को पहले भी दो तीन बार जब्त करने का फरमान आया था। सेठ की बात सुनते ही ठाकुर डर गया। पर अपने डर को प्रकट नहीं होने दिया। बोले---ये सारी बातें सोचकर ही मैं आज तेरी गरमी छांटने आया हूं। कमीने, किराड़ ! तूने आज लोगों के सामने मेरी शान बिगाड़ दी। राजाजी की छोड़कर खुद बादशाह से फरियाद करदे तो भी आज तो तेरी अक्खड़ मिटा कर छोड़ूंगा।

सेठ का पहुंचा पकड़ कर ठाकुर र पटकते हुए बोले---या तो चुपचाप

अपनी बही में अपने हाथों से पूरी फारख्ती कर दे, वर्ना होठ समेत नाक काट लूंगा।

सेठ ने देखा कि ठाकुर आंतड़ियों से नाक तक तो आ गये है। मरने की जोखिम तो अब है नहीं। तो भी कांपते कांपते कहा—यहां कौनसी नींव भरनी है। आपकी जो मरजी हो सो कर लीजिए। मेरे रोके तो रुकेंगे नहीं। पर ठाकुर, यह है आपका अन्याय।

ठाकुर ने थोड़ा पहुंचा मरोड़ कर कहा—जूते मार मार कर आज तेरी टाट गंजी नहीं कर दूं तो देखना।

सेठ ने देख लिया कि ठाकुर नाक से टाट पर आ गये हैं। उसके मन में कुछ धीरज आया। बोले—यहां कौनसी बाजरी बोनी है। ऐसे एकान्त मैदान का अवसर आपको फिर कभी नहीं मिलेगा। जो मरजी हो सो कर लेना। मन में मत रखना।

सेठ अपने मन में तो यह बात अच्छी तरह समझ गये कि ठाकुर जूते से नीचे तो नहीं उतरने वाले हैं। रुपये तो अब नहीं आयेंगे पर इज्जत तो खराब हो जायेगी। इस समय ठाकुर के मन के अनुसार चलना ही ठीक है। हजारों जगह लेनदेन बिखरी हुई है। यों जूते खाये कैसे काम चलेगा। बोले — आप अपने हाथ से ही खाते में जमा करके फारख्ती कर दीजिए। मैं कब मना करता हूं।

ठाकुर ने कहा — यह तो मैं पढ़ा लिखा नहीं हूं और अगर पढ़ा लिखा होता भी तो क्या अपने हाथ से लिखकर फारख्ती कर देता क्या? तू मुझे इतना भोला समझता है?

सेठ बोले—आपको भोला नोज समझूं। पर मेरा हाथ तो आपने पकड़ रखा है, तब फारख्ती कैसे करूं?

ठाकुर ने हाथ छोड़ दिया। बोले — अब चुपचाप छः सौ रुपयों की फारख्ती कर दे। देरे दिनमान ठिक हैं इसलिए इतने में ही पीछा छोड़ता हूं। घर से तो पूरा निश्चय करके चला था कि सेठ को ठंडा रख दूंगा। पर तेरे बच्चों की खातिर गम खाता हूं। अब सीधी तरह खाते की फारख्ती कर दे। किसी के कानों यह खबर पहुंच गई तो मुझे से बुरा कोई नहीं होगा।

सेठ बही खोलते हुए बोले — ठाकुर साहब रुपये लेते समय आपने खाते में दो साक्षियों का हवाला दिया था। अब खाता चुकता होने पर भी साक्षी होनी चाहिए। बिना साक्षी यह फारख्ती मानी नहीं जायेगी। मैं आप ही के

फायदे की बात करता हूं। आप दो साक्षियां डलवा कर ही फारख्ती करवाइये।

सेठ ने सोचा कि साक्षी देने के लिए दो आदमी अगर आ गये तो वे मेरे पक्ष में रहेंगे। और ठाकुर ने सोचा कि यह तो चोरी छिपे का काम है। आदमियों के सामने प्रकट हो गया तो बुरा लगेगा। वे सोचकर बोले --- तू बिना साक्षी फारख्ती करदे। बेकार अड़ंगा लगा कर मुझे गुस्सा मत दिला।

सेठ बोले — साक्षी होना आपके हक में ठीक है। आप कहें तो मैं चांद सूरज की साक्षी लिख दूं। बही में साक्षी वाला कक्ष तो भरना ही पड़ेगा।

ठाकुर ने सोचा कि चांद सूरज की साक्षी से अपना क्या बिगड़ता है। वे तो धरती पर उतर कर गवाही देने से रहे। कहा — हां, इनकी साक्षी भले ही लिख दे।

सेठ ने बही खोलकर ठाकुर के खाते में लिख दिया — ऊपर वाले मगरे पर सामने फिरे; चांद सूरज की साक्षी। बुरी बातें सब भरपाई, पर छः सौ रुपये बाकी।

ठाकुर पढ़े हुए तो थे नहीं। मूंछों के बट देते हुए पूछा---फारख्ती कर दी?

सेठ बोले --- चांद सूरज की साक्षी लिखकर पूरी फारख्ती करदी।

फिर सेठ अपने रास्ते चल पड़े और ठाकुर साहब वापिस गांव लौट आये।

थोड़े दिनों बाद सेठ ने तो राजाजी के सामने बही खाते ले जाकर हाजिर कर दिये। हाथ जोड़ कर फरियाद की --- अन्नदाता, ठाकुर लोगों के सामने इज्जतदार आदमी का तो जीना ही हराम हो गया है या तो आप अपने हाथों से हमें देश निकाला दे दीजिए या फिर जान माल की रक्षा कीजिए। एक तो गांठ के रुपये देवें और दूसरे ठाकुर लोगों के हाथों पेट की आंतड़ियां बाहर निकलवाएं, होठों समेत नाक कटवाएं और टाट में जूते खाएं।

फिर सेठ ने ठीक तरह निश्चिन्तता से राजाजी को बात बताई। ठाकुर का खाता खोल कर सामने रखा। राजाजी फारख्ती का मजमून पढ़ कर खूब हंसे। समझ गये कि सेठ के साथ ज्यादती हुई है। तुरन्त कासिद को भेज कर ठाकुर को दरबार में बुलाया। ठाकुर डरते कांपते दरबार में हाजिर हुए। राजाजी नाराज होकर बोले---क्यों ठाकुर, आजकल उल्टे बहुत चलने लगे हो। साहूकारों की आंतड़ियां निकालते फिरते हो। आखिर यह जागीर तुम्हें पची नहीं। बताओ, तुमने सेठ से छः सौ रुपये उधार लिए थे कि नहीं?

ठाकुर स्वीकार करते हुए बोले---हां, लिये थे अन्नदाता!

राजाजो ने पूछा---रुपये वापिस चुका दिये!

ठाकुर ने अटकते हुए कहा —— हां अन्नदाता, सेठ की बही में खुद उनके हाथों से फारखती की हुई है।

राजाजी ने फिर पूछा——फारखती में साक्षी किसकी डाली ?

ठाकुर ने कहा——अन्नदाता, उस समय दूसरा कोई तो मौके पर हाजिर था नहीं। इसलिए सेठ ने चांद सूरज की साक्षी मांड दी।

राजाजी को अब सोलह आना विश्वास हो गया कि बनिये ने सच कहा था। ठाकुर का पूरा जुल्म है। क्रोध में हथेली पटकते हुए बोले——तो फिर तुम जंगल में ऐसे विकट अवसर देखते ही क्यों हो जहां आदमी का बच्चा भी नहीं हो !

राजाजी ने ठाकुर को बहुत फटकरा। जागीर के जब्त करने का हुकुम सुनाया और ठाकुर को वहीं हवालात में बंद कर दिया।

सेठ राजी खुशी हंसते मुस्कराते बही खाते लेकर अपने घर की ओर चले। जाते जाते ठाकुर को ताना मारते हुए बोले —— गांव जा रहा हूं। आप राजी खुशी के समाचार देते हों तो हाथोंहाथ पहुंचा दूंगा।



लाली की कथा

अेक लखपति बनिया था। स्वभाव का एकदम मलोच। बेहद मूंजी। सेठानी अलबत्ता दिल की फैयाज थी। उनके एक बेटी थी, जिसका नाम था लाली। लाली पर सेठानी का मन कुछ ज्यादा ही था। लाली लाली करते उनका जी नहीं थकता था। लाली को ग्यारहवां बरस उतर कर बारहवां लगा, उस दिन से ही सेठानी तो सेठ के पीछे पड़ गई कि कोई अच्छा सा लड़का ढूंढो। अपने लिए बेटी समझो तो लाली और बेटा समझो तो यह लाली ही है। बीस हजार टीके के खर्च हो जांय उसकी चिन्ता नहीं, पर लाली के लिए अपने से सवाया घर ढूंढ़ना चाहिए। लाली के विवाह का खर्चा निकालने के बाद अपने जीवन में तो फिर कोई खर्चा आयेगा ही नहीं।

सेठ जवाब देते——बीस हजार खर्च करना तो बहुत सरल है, पर कमाना

बहुत मुश्किल होता है । समय एक समान नहीं रहता । बुढ़ापे में तकलीफ हो गई तो वहां भीख मांगेंगे ? सोच विचार कर खर्चा करना चाहिए । बेटी, बेटी की जगह होती है । वह आप-करमी होती है , बाप-करमी नहीं । इसके भाग्य इसके साथ हैं ।

सेठानी रोज लाली के योग्य लड़का देखने के लिए सेठ के कान खाती और सेठ रोज टालमटोल करते रहते । सेठ हजार पन्द्रह सौ में ही विवाह का सारा काम पटाना चाहते थे । इतने रुपयों में तो कोई मुर्दा भी हाथ नहीं आता । इस तरह करते करते लाली को पन्द्रहवां बरस भी उतर गया । सेठानी तो छीज छीज कर आधी भी नहीं रह गई । पर सेठ रुपयों को अपने प्राण और लाली से भी ज्यादा प्यारा समझते थे ।

अन्त में संयोग की बात ऐसी बनी कि सेठ ने तो लाली के लिए दूल्हा नहीं ढूंढ़ा पर यमराज के दूतों ने लाली को ढूंढ़ लिया । ज्यादा लाडले बच्चे पेट जलाने के लिए ही होते हैं । सेठानी का पेट जलाकर लाली तो अपने धाम प्रयाण कर गई । सेठानी रो रो कर अंधी हो गई तो भी उसने लाली के लिए बिलखना नहीं छोड़ा । लाली की चर्चा चलते ही सेठानी की आंखों में सावन भादों की झड़ी लग जाती ।

सेठ समझाते—यदि रोने से लाली वापिस लौट आती हो तो हम दोनों मिलकर भूं भूं रो लेवें । रुकें ही नहीं ।

सेठानी झिड़क कर जवाब देती—क्यों , जीते जी उसे बहुत सुख दिया , जो वह अब तुम्हारे पास वापिस आयेगी ! तुमने ही मेरी लाली को मारा है । चिल्ला चिल्ला कर मेरा गला बैठ गया , पर तुमने लाली के पीले हाथ नहीं किये । अब यह माया छाती पर लेकर जाओ तो जानूं ।

कुछ भी जवाब देने को नहीं होता तो सेठ बहाना बनाते—सारा हिसाब किताब करना बाकी पड़ा है—तुमसे कौन माथा लड़ावे !

सेठानी कहती—राम के घर तुम्हारा भी तो हिसाब किताब रखा जाता होगा । मेरी तो समझ में यह बात नहीं आती कि यह सारा हिसाब-किताब और धंधा आखिर किसलिए ? पूरे दिन अकेले बैठे मेरा मन नहीं लगता । अब तुम अपने गांव में ही एक छोटी मोटी दूकान लगा लो । शहर तक रोज चार कोस पैदल जाना आना अपने क्या काम आयेगा । तुम्हें हाथ जोड़ती हूं : शहर वाली दुकान उठा दो और गांव में दूकान मांडलो । अपने लिए तो पिछली कमाई ही सारी उमर नहीं खतम होगी , फिर किसके लिए यह माथापच्ची

करते हो ।

सेठ परेशान होकर कहते—तुम्हारी बातें सुनकर तो वाकई दिमाग खराब हो जाता है । जो बात समझ में नहीं आती उसमें क्यों दखल करती हो । तुम्हें कमाई-धमाई की बातों से क्या मतलब !

यों रोज की कहा सुनी में एक बरस बीत गया । एक दिन सेठानी आठ आठ आंसू बहाती हुई बोली— इस अगली तेरस को लाली का दिन है । सिर्फ सात दिन बाकी रहे हैं । सौ पचास ब्राह्मणों को भोजन कराओ तो लाली की आत्मा को शान्ति मिले ।

सेठ बोले — मुझे तो तुम्हारी अकल पर पत्थर पड़ गये लगते हैं । यहां जिन्दा ब्राह्मणों को भोजन कराने से लाली की आत्मा को कैसे शान्ति मिल सकती है ? थोड़ा बहुत तो सोच समझ कर बोला करो ।

सेठानी सेठ का अंगोछा पकड़ कर सिसकती हुई बोली — मैं इतनी रोई झींकी तो भी तुमने लाली के पीले हाथ नहीं कराये । रो रो कर मेरी आंखें फूट गईं पर तुम्हारी आंखें नहीं खुली । पर अब अगर मेरा कहना नहीं माने तो मैं लाली की मृत्यु के दिन कुए में कूद कर प्राण दे दूंगी । फिर तुम्हारी आंखें खुलेंगी और तुम्हारी अकल ठिकाने आयेगी ।

सेठ अपना अंगोछा सेठानी को झिलाते हुए बोले—लो यह अंगोछा अपने पास आंखें पोंछने को रखना । आंसुओं से इस अच्छी भली चुंनड़ी को खराब मत करो । अब मैं जाता हूं । चार कोस जाना है । ग्राहक बैठे राह देख रहे होंगे ।

बिचारी सेठानी क्या करती ? दांत भींच कर बैठी रही । उसके रोने की सेठ ने यह कीमत की कि अच्छी भली चुंनड़ी खराब मत करना । ऐसे आदमियों का तो पड़ौस ही बुरा । तकदीर से वही पति मिल गया । तो भी दूसरे दिन फिर सेठानी ने मन मार कर कहा — सारी उमर में मेरा एक बार तो कहना मान लो । लाली के श्राद्ध में ग्यारह ब्राह्मण तो जिमा दो । वर्ना उसकी आत्मा भटकती रहेगी । उसको कभी मुक्ति नहीं होगी ।

सेठ बोले—श्राद्ध आने तो दो । अभी से क्यों जी जलाती हो । तुम कहोगी वैसा ही कर दूंगा पर यदि बीच में रोज रोज कहना शुरू किया तो ब्राह्मण भोजन तो दूर रहा, मैं खुद उस दिन भूखा रह जाऊंगा ।

सेठानी क्या जोर करती । उसे जबरदस्ती चुप होना पड़ा । लेकिन लाली के श्राद्ध के एक दिन पहले उसने मुंह खोला । बोली—कल लाली का दिन है, इतने दिन तो बड़ी मुश्किल से कलेजे पर पत्थर रख कर चुपचाप बैठी रही ।

तुम्हारा कोई भरोसा नहीं, इसलिए बोलना पड़ता है। कल कितने ब्राह्मण बुला रहे हो। बिना बताए उनके आटे दाल का बन्दोबस्त कैसे करूं।

सेठ बोले—जैसी तुम्हारी मरजी होगी वैसा अपने आप हो जायगा। तुम परेशान मत होओ। लाली क्या अकेली तुम्हारी ही बेटी थी, मेरे कोई रिश्ता ही नहीं था?

सेठानी चुनड़ी के पल्ले से आंखें पोंछती हुई बोली—तुम्हारे रिश्ता होता तो मुझे रोना ही किस बात का था।

सेठ झल्ला कर बोले—कितनी बार कह दिया कि यह चुनड़ी मत खराब किया करो। लो, मेरे इस अंगोछे से आंखें पोंछ लो।

सेठ की यह बात सुन कर सेठानी क्रोध में जलती, पैर पटक कर वहां से रवाना हो गई। फिर सारी रात उनसे नहीं बोली।

लाली के इस श्राद्ध पर केवल एक ब्राह्मण को ही भोजन कराना, सेठ की यह इच्छा थी। ब्राह्मण भी ऐसा मुर्दा ही ढूंढ़ना जो दो कौर भी ठीक तरह नहीं खा सके। ब्राह्मण भोजन का नाम भी हो जाय और खर्च भी विशेष न हो। यह श्राद्ध बीतने के पूरे एक वर्ष बाद लाली का दिन फिर आयेगा। तब की तब देख लेंगे।

लाली के श्राद्ध की यह चर्चा गांव के सारे ब्राह्मणों में भी हो गई थी। सेठ का मूंजीपन आसपास के गांवों में किसी से छिपा नहीं था। एक बूढ़ा और दुबला-पतला ब्राह्मण सारी जाति का अगुआ बना। उसने कहा—आप लोग यह बात मुझ पर छोड़ दीजिए। मैं सारी युक्ति बिठा लूंगा।

जातिवालों ने भी उस अधमरे ब्राह्मण की बात मानली। दूसरे दिन सवेरे ही सेठ ब्राह्मणों के मोहल्ले में आये। घर घर घूमकर देखा पर उनको एक भी ब्राह्मण पसन्द नहीं आया। अन्त में घूमते घूमते वे उस बूढ़े ब्राह्मण के घर पहुंचे। वह ब्राह्मण अपनी ब्राह्मणी को सारी बातें ठीक से समझा कर खटिया पर चद्दर ओढ़े सो रहा था। सेठ के घर में आते ही उसे ऐसी जोर की खांसी चली कि बहुत देर तक चलती ही रही। सेठ ने खटिया के पास आकर ब्राह्मणी से पूछा: यह कौन सो रहा है?

ब्राह्मणी बोली—पण्डितजी सो रहे हैं। निकाले के कारण खटिया पकड़ा जो आज बीस दिन हो गये। बीस दिनों में धान तो सूंघा तक नहीं।

सेठ की बोली सुनकर उसने भी मुंह उघाड़ा। झीने स्वर में बोला—कौन है?

ब्राह्मणी बोली—ये तो सेठजी आये हैं।

सेठ ने कहा—पालागन महाराज।

पण्डितजी ने खांसते खांसते ही आशीर्वाद दिया। फिर टसकते हुए बोले—कैसे आना हुआ ?

सेठ ने कहा—आज लाली का श्राद्ध है। आपको भोजन करने का निमंत्रण देने आया हूं। आपको पधारना पड़ेगा।

पण्डितजी कफ थूकते हुए बोले—सेठ, मुझे तो धान छोड़े आज बीस दिन हो गये। भारी निकाला निकला है। मुझे तो धान की खुशबू से ही घृणा होती है। कोई दूसरे पण्डित को न्यौता दीजिए। मेरी शक्ति नहीं है।

सेठ के तो बड़ी मुश्किल से मनचाही बात हुई थी। वे अब झख मारने को दूसरे ब्राह्मण के घर जाते! बोले—पण्डितजी मैं तो कहीं दूसरी जगह नहीं भटकूंगा। लाली की मां ने आपके लिए बहुत आग्रह किया है। आपको ही चलना पड़ेगा। पण्डित पण्डित, सब एक से थोड़े ही होते हैं। कुछ तो गुण भी देखे जाते हैं।

पण्डितजी ने कहा—आपकी मरजी है तो चलना ही पड़ेगा। पण्डित के हां करने पर पण्डिताइन बोली—यदि खाने पीने से पण्डितजी को कुछ हो गया तो इसका जवाबदार कौन होगा ? यह भोजन क्या भाव पड़ेगा ?

सेठ ने सोचा कि यह कभी हो सकता है! अभी तो स्पष्ट नफा दिखाई देता है। अदृश्य के घाटे का सोच आज क्यों किया जाय! बोले—क्या बात करती है पण्डिताइन चाची! खाने पीने से तो दुनिया जीवित रहती है। लोगों को भूख से मरते सुना, पर खाने पीने से भी कोई मरता है, यह बात तो आज आपके मुंह से ही सुनी।

सेठ बेहद खुश होकर घर आये। सेठानी से कहा—तुम्हारी मन की इच्छा के अनुसार काम कर दिया। अभी पण्डितजी आयेंगे। वे जैसा कहें वैसा सामान सौंप देना। बस, अब तो खुश!

सेठानी ने पूछा—मुझे बताओ तो सही, कितने ब्राह्मणों को न्यौता है ? इस तरह गोलमाल में कैसे काम चलेगा ?

सेठ ने मन में सोचा कि सच्ची बात बताने पर तो सेठानी बहुत कलपेगी और रोयेगी। इसलिए इसे कुछ नहीं बताना ही ठीक है। बोले—तुम्हें दूसरी बातों से क्या पंचायती है ? अभी पण्डित जी आयेंगे। वे जैसा कहें वैसा कर देना। मैं अब दूकान जाता हूं। वापिस शाम को आऊंगा। पीछे तुम हो और

पण्डितजी हैं। अच्छी सरबरा करना। मन में कुछ बाकी मत छोड़ना। सेठ तो जानते थे कि कोरी सरबरा करने से क्या होता है। खाना तो पण्डितजी के हाथ की बात है। आज तो काम बढ़िया बना। इस प्रकार ठीक तरह समझा-बुझा कर सेठजी शहर की ओर रवाना हो गये।

सेठ के जाते ही वह मरियल ब्राह्मण उनके घर पहुंचा और सेठानी से बोला—आज तो सेठ जी के पिण्ड में जैसे राजा कर्ण तुष्टमान हो गये। उन्होंने आपको सारी बातें बता दी होंगी।

सेठानी ने कहा—मुझे तो उन्होंने कुछ भी नहीं कहा। सारी बात आप पर छोड़ दी है। आप जैसा हुकुम दें वैसा हो करूं। अब पण्डितजी क्यों कम उतरते! सारी न्याति के लिए दस पीपे घी, दस बोरी खांड और दस बोरी आटा मांगा। सारे न्यातिवाले लोग लगे सो हाथोहाथ रसोई बनाली और हाथोहाथ ही जीम-चूठ कर निवट गये। शाम को सेठ के घर आने से पहले मार डकारें खाते वे तो अपने अपने घर चले गये। पर वह मरियल पंडित जानता था कि सेठ घर आते ही लाल पीले होंगे। उनको यह खर्चा बर्दाश्त कैसे होगा? सारी बात सुनकर वे सीधे मेरे घर आयेंगे। पण्डितजी पानी से पहले बांध बांधना चाहते थे इसलिए ब्राह्मणी को ठीक तरह समझा दिया कि सेठ के आने पर क्या करना।

सेठ हमेशा से एक घड़ी पहले ही अपने घर लौट आये तो क्या देखते हैं कि घर पर चीलें और कौवे मडरा रहे हैं। पांच सात भट्टियां खुदी हुई हैं और उन पर कडाह चढ़े हुए हैं। चारों ओर थाल, परातें और दूसरे बर्तन बिखरे हुए हैं। मन में सोचा कि यह क्या खेल हुआ। गुस्से में झल्लाते घर में आये। आते ही सेठानी पर बरस पड़े — बाहर यह क्या तमाशा मचा रखा है? मैंने तो केवल उस मरियल ब्राह्मण को न्यौता दिया था। यह सारी की सारी न्याति कैसे जीम गई! मेरे तो करम ही फोड़ डाले।

सेठानी को भी अचंभा हुआ। वह बोली—मैं क्या करूं? मैंने तो वही किया जो तुमने कहा। मेरा क्या दोष! कितनी बार पूछा कि बताओ तो सही कितने ब्राह्मण बुलाए हैं, पर तुमने तो कह दिया कि जैसा वह मरियल ब्राह्मण कहे वैसा कर देना। उसने मेरे से जो सामान मांगा वह मैंने दे दिया।

सेठ का तो यह सुनते ही जैसे अंश निकल गया। वह सन्निपात में आ गया। अर्धविक्षिप्त-सा सीधा उस मरियल ब्राह्मण के घर पहुंचा।

ब्राह्मण आंगन में मरा हुआ पड़ा था। ऊपर कफन ढका हुआ था। सेठ

को देखते ही ब्राह्मणी तो जोर जोर से विलाप करने लगी। सेठ को झिझोड़ती हुई बोली--तुमने मेरे पण्डितजी को मार डाला। दुष्ट तुमने उन्हें कल क्या खिला दिया। घर आते ही वमन के द्वारा सारी उमर का खाया-पिया वापिस निकलने लगा सो रुका ही नहीं। कै पर कै होने लगी-- हरी हरी ! आखिर उनके प्राण लेकर ही कै रुकी। खाने में जहर दे दिया। पण्डितजी ने तेरा क्या बिगाड़ा था सेठ ! तुम्हें ब्रह्म-हत्या का पाप लगेगा। मैं इनकी लाश राजाजी के सामने ले जाकर फरियाद करूंगी। तुम्हें भी इनके साथ नहीं जलाऊं तो मैं असली ब्राह्मणी नहीं।

सेठ पिछली सारी बात तो भूल गये और उनको यह नया ही फिक्र लग गया। वे तो पण्डितजी से लड़ने आये थे, यह तो उल्टी गले पड़ गई ! राजाजी निश्चय फांसी का दंड देंगे। सेठ तो मरने के डर से कांपने लगे। थर थर कांपते हुए बोले — लक्ष्मी, तू हल्ला मत कर। क्यों बस्ती को सुनाती है। तू राजाजी को फरियाद मत कर,मैं पण्डितजी के क्रियाकर्म का सारा खर्चा और तुझे पांच सौ रुपये दे दूंगा। होनी थी वह तो हो गई। मैं तो घर पर था भी नहीं। अकेले पण्डितजी को न्यौता दिया था सो उन्होंने सारी न्यात जिमा दी। मेरा दिवाला निकाल दिया। मैं तो यहां उलाहना देने और रुपये वसूल करने आया था। वे रुपये भी छोड़ता हूं और उल्टे हरजाने के पांच सौ रुपये भरता हूं। और क्या चाहती है ?

ब्राह्मणी छाती कूटती हुई बोली--पण्डितजी की देह की तूने पांच सौ रुपये ही कीमत की ? तुझे शरम नहीं आती। पांच सौ रुपयों में पति मिलता हो तो तू मरजा, मैं सेठानी के लिए पांच सौ रुपये खर्च करके नया पति ला दूंगी। मेरी तो जिन्दगी बिगड़ गई। मैं अभी न्यात इकट्ठी करूंगी।

सेठजी का तो सांस ऊंचा चढ़ गया। बोले--बस लक्ष्मी, चिल्ला मत। एक हजार रूपये ले लेना। अब तो खुश !

ब्राह्मणी फिर कपाल ठोंकती हुई बोली--मेरा तो जवान हट्ठा कट्ठा आदमी मरा है और तू खुश होनें की बात करता है। मेरे लिए तो आज प्रलय की रात हुई है। बीस हजार रुपये देने से भी कलेजे की यह जलन नहीं मिट सकती।

आखिर सेठ बढ़ते बढ़ते पांच हजार रूपये देने को राजी हो गये। ब्राह्मणी बड़ी मुश्किल से मानी। बोली--घर के सेठ हो, इसलिए मंजूर करती हूं वर्ना बीस हजार से कम एक पैसा भी नहीं लेती। मैं तो बारह दिनों तक घर की देहरी नहीं लांघ सकती। तुम अभी के अभी रुपये लाकर दो।

सेठ के सिर पर जैसे आसमान आ गिरा। पागल की तरह घबराये हुए घर पहुंचे। सेठानी ने पूछा—क्या बात हुई? तुम्हारा मुंह इतना काला क्यों दिखाई देता है?

सेठ के मुंह में झाग आ गये। थूक उछालते हुए अंट-शंट बोलने लगे—यह तुम्हारी लाली ने निहाल कर दिया। फिर करना श्राद्ध! पांच हजार का हरजाना भरना पड़ा। पण्डितजी तो मर गये। यह सब तुम्हारा कबाड़ा है। जल्दी देओ तिजोरी की चाबियां। अगर पंडिताइन राजाजी के पास चली गई तो सूली पर चढ़ा देंगे। फिर तुम्हरी जैसी मरजी हो, करना। हजार बार समझाया तो भी तुम्हारी समझ में नहीं बैठती। अब भुगतो। लाली का दिन है, लाली का दिन है, कहते कहते मेरे कान खा गई। अब मेरा दिन भी साथ ही मना लेना।

सेठानी बोली—थूको अपने मुंह से। सवेरे सवेरे ऐसे अशुभ बोल क्यों निकालते हो। मुझे ठीक तरह समझाओ तो सही कि क्या बात हुई। किस बात के पांच हजार रुपये भरने हैं।

सेठ क्रोध से उफनते हुए बोले—यह समझाने का समय नहीं है? फुर्ती से पांच हजार रुपये लाओ। मुझे सूली पर चढ़ा दिया तो सारी जिन्दगी समझती रहना।

सेठ ने अपने कांपते हाथों से पांच हजार रुपये तिजोरी से बाहर क्या निकाले जैसे अपना कलेजा ही निकाल कर हाथ में ले लिया।

सेठजी तो ब्राह्मणी के हाथ में पांच हजार रुपये सौंप कर उसी समय वापिस अपने घर की ओर रवाना हो गये। घर आते ही खटिया पकड़ ली। कांपते ठिठुरते सेठानी से कहा—मुझे तीन चार गूदड़े और ओढ़ा दे, बहुत सर्दी लग रही है। सेठजी को जूड़ी का ताव चढ़ गया था। और वे सन्निपात में बड़बड़ा रहे थे—पांच हजार, पांच हजार!

और उधर ब्राह्मणी पांच हजार रुपयों की थैली देख कर खुशी में पागल हो उठी। सेठ के बाहर जाते ही दरवाजे मजबूती से बन्द कर दिये। पण्डितजी के सिर से कफन दूर हटा कर खीसें निपोरती हुई बोली—लो ये पांच हजार रुपये। तुमने तो अपनी जिन्दगी में कभी सौ रुपये भी इकट्ठे नहीं किये होंगे। मैंने एक मुश्त पांच हजार कमा कर दिखा दिये।

मरियल पंडित बोला—मैं नहीं मरता तो तू ये रुपये कैसे पटकाती! मेरे मरने से ही हम दोनों को नया जनम मिला है। सौ बरसों तक जीकर भी इतने रुपये नहीं कमा सके जो आधी घड़ी के लिए मर कर कमा लिये। इस प्रकार अगर तीन बार और मरने का मौका मिल जाय तो फिर क्या कहने? पर अब जो सेठ

के सामने आ गया तो सचमुच मारे बिना नहीं छोड़ेगा। इसलिए हमेशा घर के भीतर ही छिपा रहना पड़ेगा। देखना कैसी होशियारी रखती है। किसी को कानोकान खबर नहीं पड़नी चाहिए। कोई दुश्मन चुगली कर गया तो आफत हो जायगी। तू मुझे एक दो दिन बाद सेठ के घर से समाचार लाकर देती रहना। इस बनिये को एक बार फिर निचोड़ना है।

सेठ को चार पांच दिनों तक बुखार चढ़ता रहा। सेठानी रोज समझाती—यों क्या रुपये रुपये बकते हो। तुम ताजे चंगे रहे तो हजारों रुपये फिर कमा लोगे और फिर इतनी माया का करना भी क्या है? तुम समझना कि लाली के टीके में खर्च हो गये। यदि वह विवाह के बाद मर जाती तो इससे दुगुने रुपये खर्च होते कि नहीं। लाली अपना पावना मांगती थी जो वहां बैठी भी वसूल करेगी ही। भगवान के घर में सारा हिसाब रहता है। अब ज्यादा पश्चाताप मत करो। अब अगर रुपयों के लिये इतना रोना-पीटना करो तो मुझे मार कर खाओ। अब से अगर तुम्हारी जबान पर भी पांच हजार रुपयों का नाम सुना तो उसी समय मैं अन्न-पानी छोड़ दूंगी।

सेठ पांच सात दिनों में चलने फिरने लायक हुए तो शहर की दुकान पर जाने की इच्छा हुई। सेठानी ने हाथ पांव जोड़ कर बड़ी मुश्किल से तीन चार दिन तो उन्हें रोका पर बाद में तो उन्होंने मानने से इन्कार कर दिया। मरियल पण्डित के बारहवें दिन वे जबरदस्ती हठ करके दुकान गये। सेठानी ने उनके लिए एक गाड़ी किराये पर कर दी।

सेठ के दुकान जाते ही ब्राह्मणी ने पण्डित जी को सारे समाचार सुना दिये। मरियल पण्डित रामनामी ओढ़ कर मरने के बाद पहली बार घर से बाहर निकला। सीधा सेठ के घर गया। सेठानी गली में बैठी बरतन मांज रही थी। पण्डितजी ने पास आकर आशीर्वचन कहे तब पहले तो वह चमकी, फिर डरती हुई पूछने लगी — 'आपको तो मरा हुआ सुना था पण्डितजी! वापिस जिन्दा कैसे हो गये?' पण्डितजी खांसते खांसते बोले—'बिल्कुल ठीक सुना था। मैं अभी तक मरा हुआ ही हूं। आज मेरे बारहवें पर वापिस आया हूं। तुम्हारी लाली राजी खुशी है। उसके समाचार देने को आ गया।' सेठानी ने हर्ष के साथ पूछा—क्या आप मेरी लाली से मिलकर आये हैं? कैसी है वह? मुझे पूरे समाचार बताइये। पण्डितजी कहने लगे—अपने ठाकुर साहब की हजामत बहुत बढ़ गई थी। उन्होंने मुझे नाई को बुलाने के लिए भेजा तो लाली मेरे पास दौड़ती आई। बोली—मेरी मां को भी मेरा समाचार देना कि मैं हूं तो राजी खुशी,

पर बिल्कुल निर्धन ! मेरे मां बाप ने तो मेरे पीले हाथ नहीं किये पर अब इस सुनवमी के दिन मेरा भी विवाह है। दुख इस बात का है कि मेरे पास गहने के नाम पर एक तिनका भी नहीं है। अच्छा घर मिल गया है। मेरी मां के पास से मेरा सारा गहना लेकर आना। वह कहते ही दे देगी।

सेठानी अपनी बेटी के समाचार सुनकर बेहद खुश हुई। आनन्द के कारण उसकी आंखें डबडबा आईं। पूछा—अब मेरी लाली बीमार तो नहीं है न ? शरीर कैसा है ? और कुछ कहा है ?

पण्डितजी बोले—बिल्कुल तरोताजा है। पर पहनने के लिए कपड़े-लत्ते नहीं हैं। दूसरी लड़कियां जब सोलह सिंगार सजकर निकलती हैं तो वह उनका मुंह देखती है। बेहद बिलखती है। बाकी उसको कोई तकलीफ नहीं है। मैं अभी वापिस जानेवाला हूं। नाई को ठाकुर साहब का सन्देश दे दिया। तुम भी कुछ समाचार कहती हो, तो लाली को बता दूंगा।

सेठानी बोली—'पण्डितजी, केवल समाचार से क्या होता है ! मेरी लाली गहने कपड़ों को बिलखती है ! आप कपड़ों के लिए पांच हजार रुपये और उसका सारा गहना ले जाओ। आपको तकलीफ तो होगी पर लाली का बिलखना मेरे से सहन नहीं होता। आपको मेरा इतना काम तो करना ही पड़ेगा। आप मेरे खास गुरु हैं।' पण्डितजी बोले—आपका काम नहीं करूंगा तो और किसका करूंगा। पर थोड़ी फुर्ती कीजिए। देरी हो गई तो मुझे देवलोक में घुसने नहीं देंगे।

भोली-भाली सेठानी ने अपनी लाली के प्रेम में पांच हजार रुपये और उसका सारा गहना पंडितजी को सौंप दिया। बोली—फिर कभी इधर आवें तो मेरी लाली से जरूर मिलकर आने की कृपा करें। मेरी लाली को किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होनी चाहिए। मेरे बेटी गिना तो वह और बेटा गिनो तो वह। यह सारी माया सम्पत्ति उसके लिए तो है ही। पण्डितजी, मेरी लाली का विवाह खूब धूमधाम से आप खुद करवाना, ज्यादा क्या कहूं !

पण्डितजी ने कहा—'मेरे होते आप किसी बात की चिन्ता न करें। लाली कौन पराई है।' पण्डितजी तो पांच हजार रुपये और गहनों का कटोरदान लेकर वापिस देवलोक की ओर रवाना हुए। सेठानी लाली की ललक में ठेट गली तक उन्हें छोड़ने आई।

शाम को सेठ घर आये तो सेठानी उल्टे उन्हें ही उलाहना देती हुई कहने लगी—'बिचारे उस मरियल ब्राह्मण को तुम यों ही भला-बुरा कह रहे थे। वह तो बेहद ईमानदार और सयाना आदमी है। आज वह देवलोक से अपने बारहवें

के दिन वापिस यहां आया था।' सेठ कपाल के हाथ लगाकर बोले—सेठानी, तेरे दिमाग में तो गोबर भरा है गोबर ! मरने के बाद भी कोई आदमी वापिस आया है कहीं ? तब वह पंडित मरा ही नहीं। मेरे साथ धोखा कर गया।

सेठानी झिड़कती हुई बीच में ही बोली — मेरी पूरी बात तो ठीक तरह सुनो। तुम्हारे मन में तो बात बात पर वहम उठता है। मैंने अपनी आंखों से पंडितजी को देखा है वह तो झूठ और तुम सच्चे ! वाह !

सेठ ने कहा— पगली, मैं तुझे कब झूठी कहता हूं। मैं तो उस मरियल ब्राह्मण को झूठा कहता हूं। वह मरा नहीं है।

सेठानी अचंभे से बोली— यदि नहीं मरा होता तो देवलोक से वापिस कैसे आता ? अपनी लाली के समाचार कैसे लाता ? हां, मैं तो भूल ही गई— इसी सुनवमी को अपनी लाली का ब्याह है। तुमने यहां उसके पीले हाथ नहीं किये तो क्या हुआ ? वहां बढ़िया घर और बढ़िया लड़का मिला है। मैंने पंडित जी के हाथ पांच हजार रुपये और उसका सारा गहना भेज दिया है।

यह बात सुनते ही सेठजी का तो जैसे कलेजा मुंह को आ गया। बोले— 'क्या कहा ? पांच हजार रुपये और गहना ?' 'सेठानी बोली—तुम्हें दिखते हैं ये पांच हजार रुपये। मेरी लाली के लिए बीस हजार रुपये दूं तो भी कम हैं।' सेठ दोनों हाथों से छाती कूटते हुए बोले — अब तेरा मारा कहां जाऊं ? इससे तो अच्छा होता कि तू मेरा गला घोंट देती। बता, वह कपटी ब्राह्मण किधर गया ?

सेठानी को अब तक यह बात समझ में नहीं आई कि इसमें कपट की क्या बात हुई। उसने कहा—'ठेट गली तक मैं उसे छोड़ने गई। उसने तो बिचारे ने, बहुत मनुहारें करने पर रुपये और गहने ले जाने मंजूर किये। खुद ठाकुर साहब ने उसे नाई लाने के लिए भेजा था। देवलोक में उनकी हजामत बहुत बढ़ गई है। मुझे तो इसमें कोई कपट नजर नहीं आता।' तब सेठ एक गहरी निश्वास डाल कर बोले—औरतों में अकल होती तो वे पगड़ी नहीं बांधतीं ?

सेठ फुर्ती से सीढ़ियां चढ़ कर छत पर गये। कोने पर खड़े होकर दीवार के ऊपर से गरदन निकाल कर पंडित को देखने लगे कि कहीं वह नजदीक में दिखाई देता हो तो उसका पीछा करें। सेठजी झल्लाए हुए इस प्रकार देख रहे थे कि एक चील उड़ती उड़ती बोली—

ऊंचे चढ़ चढ़ सेठ देखें। यह धन भी लाली के लेखे ॥

राजस्थान के अवनद्ध वाद्य : चंग एवं डफ

कोमल कोठारी

[राजस्थान के लोक संगीत वाद्यों पर क्रमिक रूप से लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं। दिसंबर, ६७ से जनवरी ६८ तक घन-वाद्यों का विवरण प्रकाशित हो चुका है। इस अंक से अवनद्ध वाद्यों का क्रम प्रारंभ किया जा रहा है। फरवरी, ६८ में अवनद्ध वाद्यों के विषय में एक समग्र विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया।

इन निबन्धों में केवल इसी बात का ध्यान रखा गया है कि राजस्थान में जो भी वाद्य प्रचलित हैं, उसका सांगीतिक एवं वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया जाय। 'राजस्थान के वाद्य' कहने से इस प्रदेश की ही विशेषता का संकेत नहीं लिया जाय। ये वाद्य न केवल भारत में अपितु सारे विश्व में कहीं इन्हीं नामों से, तो कहीं दूसरे नामों से प्रचलित हैं। तथ्य केवल यही है कि इन नामों के वाद्य-विशेष राजस्थान में प्रचलित हैं।]

चंग

होली के त्योहार के साथ राजस्थान में चंग का वादन ठीक उसी तरह जुड़ा हुआ है जैसे मनुष्य के साथ छाया। वसंत पंचमी से होली के वातावरण का आभास मिलने लगता है और वह लगभग एक डेढ़ माह तक निरंतर चलता रहता है। यों तो होली को जलाने का पर्व फाल्गुन की पूर्णिमा को संपन्न होता है किन्तु होली के आगमन की सूचना इस पवित्र दिन के एक महीने पूर्व ही चंग की ध्वनि देने लग जाता है। होली से संबंधी पौराणिक कथा प्रह्लाद एवं नरसिंह-अवतार के साथ जुड़ी हुई है। किन्तु इस कथा का जन-मानस में उतना प्रभाव नहीं है जितना ढूंढ नामक राक्षसी का भय है। बालकों की सुरक्षा की दृष्टि से होलिका-दहन के साथ ढूंढ से बचाने का उपक्रम अधिक किया जाता है। किन्तु होली का त्योहार वस्तुतः एक दिन तक ही सीमित नहीं है और उसे मात्र प्रह्लाद से संबंधी पौराणिक कथा के आधार पर पूर्णतया समझाया भी नहीं जा सकता।



होली के साथ एक कृषि कार्य-काल का पटाक्षेप होता है और नवीन फसल की कामना का उत्साह जागता है। इसी संधिकाल में होली का त्योहार आता है। विद्वानों का यह मानना है कि होली का पर्व एक ओर कृषि संबंधी विश्वासों को व्यक्त करता है तो दूसरी ओर वह मानव के आत्म-मुक्त प्रजनन-संबंधी यौन-व्यवहार की धारणा को प्रकट करता है। इन दोनों ही विश्वासों का सामंजस्य इस बात में निहित है कि कृषि की उर्वरता का सांगोपांग रूपक, प्रजनन की क्रिया के साथ, मानव के आदिम विश्वासों का गहरा आधार बना हुआ है।

होली के पर्व-काल में ऐसे अनेक छोटे-बड़े अनुष्टान भी संपन्न किये जाते हैं जिन्हें मात्र-दार्शनिक या धार्मिक स्वरूप प्रदान नहीं किया जा सकता। होली जैसा उर्वर-प्रजनन संबंधी त्योहार केवल राजस्थान या भारत में ही संपन्न होता हो, सो बात भी नहीं है। ठीक ऐसे ही त्याहौर विश्व की सभी जातियों में प्रचलित हैं और इसकी पृष्ठभूमि को मानव-शास्त्रीय अध्ययन के द्वारा विश्लेषित भी किया गया है।

चंग जैसे वाद्य को समझने के लिए होली की उपरोक्त स्थिति को सामने रखना अत्यंत आवश्यक होगा। क्योंकि चंग के वादन का काल केवल होली के पूर्व एवं कुछ दिनों पश्चात तक ही चलता है। वर्ष में लगभग महीने-डेढ़ महीने का जीवन जीकर चंग फिर सो जाता है और पुनः होली तक अपने वादन की प्रतीक्षा करता रहता है।

चंग पतली लकड़ी का एक गोल घेरा है जिस पर चमड़ा मंडा जाता है। घेरे की लकड़ी की चौड़ाई पांच-छः इंच होती है और मोटाई तीन-चार सूत से अधिक नहीं होती। इस सपाट लकड़ी के किनारों को मिलाकर उसे गोल बना लिया जाता है और घेरे के एक ओर चमड़े का मंडाव किया जाता है। होली के चंग पर लगभग प्रतिवर्ष ही नया चमड़ा मंडवाना पड़ता है।

चमड़े को मंडने में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि लकड़ी का घेरा कितना तनाव ग्रहण कर सकता है। चंग मंडने वालों का कहना है कि यदि इस वाद्य पर कुछ मोटा चमड़ा चिपका दिया जायेगा तो वह लकड़ी को तोड़ देगा या उसमें टेढ़ा-मेढ़ापन आ जायेगा। यही कारण है कि राजस्थान के लकड़ी के चंगों पर भेड़ की खालों का प्रयोग किया जाता है। यह खाल एक दम सफेद-सी होती है। अपने आप में कुछ पतली भी होती है और चिपकाने की क्रिया में तनाव लेते हुए भी लकड़ी को नुकसान नहीं पहुंचाती। चंगों को मंडने के लिए मेथी के आटे को काम में लिया जाता है। मेथी का चेप चमड़े व लकड़ी को एक सार कर देता है और फिर पानी का आसानी से उस पर असर नहीं होता। राजस्थान के अन्य वाद्यों पर भी मेथी का ही प्रयोग किया जाता है। यह बात विशेषकर ध्यान रखने की है कि वाद्यों पर प्रयुक्त होने वाला चमड़ा कच्चा ही उपयोग में लाया जाता है, तभी उनमें ध्वनि देने की क्षमता बनी रहती है। भेड़ की खाल अन्य किसी वाद्य पर काम में नहीं ली जाती।

चंग का वादन गीत एवं नृत्य दोनों के साथ किया जाता है। वादन के लिए चंग को बांये हाथ की हथेली पर थाम लिया जाता है। इस हाथ की अंगुलियां चंग की कोर पर रहती हैं। दांये हाथ से मुख्य वादन किया जाता है। वादन का मुख्य स्थान चंग का मध्य-भाग होता है। बांये हाथ की अंगुलियों में सटाकर एक चींप भी रखी जाती है जो लय की स्थापना में एक बोल का सृजन करती है। यह चींप बांस की पतली छड़ी अथवा किसी वृक्ष की पतली-सी गीली लकड़ी होती है। इसे हथेली व अंगुली के बीच में मोड़ लिया जाता है। लयकारी की दृष्टि से चंग पर विशेषकर कहरवे के रूपों का ही वादन किया जाता है। विभिन्न लयों के अनेकानेक रूप इसमें निकालना सहज नहीं होता। यही कारण है कि चंग-वादन समाज का लगभग प्रत्येक व्यक्ति सहज ही करने लगता है।

चंग-वादन का उपरोक्त विवरण केवल उसकी प्रारंभिक वादन अवस्था का ही द्योतक है। चंग को बजाने के लिए दांये हाथ में लकड़ी पर कपड़े को बांधकर भी आघातित किया जाता है। बांये हाथ का कार्य वही बना रहता है। लकड़ी द्वारा आघात नृत्य के साथ अथवा सामूहिक गीतों में अधिक व्यक्तियों के हो जाने पर किया जाता हैं।

चंग के वादन का तीसरा प्रकार यह है कि एक वादक तो उपरोक्त विवरण के अनुसार ही बजाता है और एक या दो दूसरे व्यक्ति बांस की लंबी व पतली दो खपच्चियों से और आघात करना प्रारंभ कर देते है। इन दो या चार खपच्चियों के आघात के द्वारा लय-पेटर्न्स का रूप निखर उठता है और लय की गति भी खूब द्रुत-तम हो जाती है।

चंग को बजाते समय खड़ा ही रहा जाता है। चंग को बजाने वाला स्वयं नाचता भी है और समूह के अन्य लोगों को लय का सहारा भी देता है। होली के दिनों में टोलियों की टोलियां चंग बजाते, नाचते, गाते हुए निकल जाती हैं। एक टोली में एक ही चंग रहता है। अच्छे वादक होने पर कभी दो-दो तीन-तीन चंग बजाने वाले साथ भी हो जाते हैं। चंग के साथ गाये जाने वाले गीतों को फाग कहा जाता है। फाग के अलावा दोहे देने व स्वतंत्र चंग बजाने का क्रम भी टोलियों में मिला करता है।

एक होली की टोली के विवरण से यह बात अधिक स्पष्ट हो सकेगी। दोहों के गायन के समय चंग वादक बैठ जाता है और पांव सामने फैला कर चंग उस पर रख लेता है। एक डंडे व हाथ से या दोनों हाथों से चंग का वादन करता है। ऐसी स्थिति में चौंप देने वाले अवश्य संगत करते हैं। टोली में एक मर्द व एक औरत के वस्त्र पहिने हुए दूसरा मर्द होता है। ये दोनों गोलाकार खड़े हुए समूह के बीच में नाचते रहते हैं। वादन के साथ नाचते नाचते, द्रुत लय के वादन के साथ चंग बंद कर दिया जाता है और टोली में खड़ा कोई भी व्यक्ति दूहे की एक पंक्ति बोलता है। इस पंक्ति का भाव मुख्यतया अश्लील अथवा अति-शृंगारिक होता है। आशा यह की जाती है कि अन्य व्यक्ति उस दूहे को गाकर पूरा करे अर्थात उसकी दूसरी पंक्ति बोले। अनेक बार पंक्तियां याद होती हैं और याद नहीं होने पर वहीं जोड़ कर बोल दी जाती हैं। दूहे के समाप्त होते ही पुनः द्रुत-गति से चंग का वादन व नृत्य प्रारंभ हो जाता है।

चंग के साथ जो नृत्य होता है—उसका कोई विशिष्ट रूप नहीं होता। पांवों पर बड़े घुंघरू [जिन्हें रमझोल कहते है] बंधे होते हैं। लयात्मक रूप से पद संचालन के अतिरिक्त कोई नियम नहीं होता। अश्लील संकेतों का खुलकर उपयोग कर लिया जाता है। शेष भंगिमाएं उल्लास व हर्ष की अभिव्यक्ति मात्र हैं। जो व्यक्ति जितने अधिक रूपों में अपने अंगों का संचालन कर पाता है, वह उतना ही श्रेष्ठ नृत्यकार मान लिया जाता है।

होली के चंग के अतिरिक्त भी राजस्थान में इसी वाद्य की एक विशिष्ट वादन परंपरा मिलती है। कर्ट साक्स ने अपने संगीत वाद्यों के अध्ययन में बराबर यह संकेत दिया है कि चंग जैसे वाद्य का प्रयोग मुख्यतया स्त्री वर्ग में है। लेकिन होली के अवसर पर बजाया जाने वाला चंग तो महिलाओं में लगभग वर्जित है। वस्तुत: चंग की जिस विश्वजनीन परंपरा का उल्लेख कर्ट साक्स ने किया है उसका प्रयोग हमें चंग के दूसरे रूप में मिलता है। मैंने अब तक केवल कालबेलिया जाति की स्त्रियों एवं शेखावाटी की ढोली जाति की स्त्रियों में चंग का वादन देखा व सुना। इन स्त्रियों के चंग को वस्तुत: राजस्थान में चंगड़ी कहा जाता है। चंगड़ी शब्द चंग का ही अल्पार्थ हैं। अर्थात बड़े रूप का छोटा आकार। ये चंगड़ियां छोटी व गोलाकार होती हैं। इनका घेरा भी मोटी लकड़ी का होता है और उस पर बकरे का चमड़ा प्रयोग में लाया जाता है। कालबेलिया जाति की स्त्रियां अपने नृत्यों एवं गीतों के साथ चंगड़ी को बजाया करती हैं। शहरों में घर घर मांगने जाते समय भी चंगड़ी उनके साथ रहती है। उधर शेखावाटी क्षेत्र की ओर ढोलणियों में चंगड़ी को बजाने का प्रचुर रिवाज है। उनका वादन लय की दृष्टि से अत्यंत उन्नत है। ये स्त्रियां परिवारों के मांगलिक पर्वों, प्रमुख रीति-रिवाजों पर गाने के लिए पहुंचा करती हैं। उनकी आवश्यकता केवल कहरवे के रूपों तक ही सीमित नहीं होती, अत: वादन का स्वरूप भी अधिक विकसित है। शेखावाटी के अलावा राजस्थान के अन्य क्षेत्रों में ढोली जाति की स्त्रियां ढोलक का ही वादन करती हैं।

डफ

ठीक चंग के समान ही डफ नामक वाद्य हमें राजस्थान में प्राप्त होता है। डफ के वादन का महत्वपूर्ण समय तो होली ही है किन्तु चंग की भांति यह वाद्य केवल होली के त्योहार तक ही सीमित नहीं है। इसका प्रयोग वर्ष भर विभिन्न सामूहिक गायन एवं नृत्यों के साथ चला करता है।

डफ का घेरा, चंग की भांति लकड़ी का न होकर, लोहे का होता है। चार इंच की लंबी पट्टी को गोल घेरे के रूप में रिवट कर दिया जाता है। डफ पर चमड़े को चिपकाया नहीं जाता अपितु उसे चमड़े की पतली बद्दी से बांधकर तनाव दिया जाता है। डफ के घेरे के ऊपरी आधे भाग तक चमड़े को लाया जाता है और उसे किनारे पर एक मंडलाकार शकल में कुछ मोटा बना लिया जाता है। इसी मोटाई के साथ बद्दी को सिलाई के रूप में

बांधा जाता है। इस बट्टी की जाली बनाई जाती है जो डफ के खुले भाग की ओर एक लोहे की छोटी गोल रिंग पर आकर अपना तनाव ले लेती है। चंग की बनावट एवं उसकी पतली खाल के कारण उसको तारता प्रदान करने की सुविधा नहीं रहती है किन्तु डफ में यह सुविधा चमड़े को गर्म करके प्राप्त की जा सकती है। चंग अपने आकार-प्रकार में काफी बड़ा होता है और उसके अनेक माप भी होते हैं। किन्तु डफ सामान्यतया न छोटा होता है और न बहुत बड़ा ही। एक बिचले माप का ही बना होता है।

डफ के वादन में बांये हाथ की अंगुली और दांये हाथ के डंडे का प्रयोग किया जाता है। इस वाद्य की ध्वनि चंग से कुछ ऊंची होती है। चंग में एक गभीर घोष रहता है और डफ में एक चंचल ध्वनि का आभास मिलता है। डफ पर आघात भी खूब जोर से किया जा सकता है क्योंकि न तो चिपके हुए चमड़े के उखड़ने का भय रहता है और न चमड़े की दुर्बलता ही बीच में आती है। डफ पर मुख्यतया बकरे का चमड़ा मंडा जाता है। यह चमड़ा ठीक मोटाई का होता है। लोहे की चद्दर का घेरा होने के कारण यह चमड़ा अपने तनाव के कारण उसके आकार-प्रकार को भी नुकसान नहीं पहुंचा सकता।

अन्य सभी विवरण के लिए चंग संबंधी निबन्ध ही पर्याप्त मानना चाहिये। यह वाद्य राजस्थान के पूर्वीय भाग में अधिक प्रचलित है।

महिलाओं के होली गीत : लूर

—कोमल कोठारी

होली का त्यौहार फाल्गुन माह की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस दिन होलिका-दहन का अनुष्ठान संपन्न होता है। किन्तु होली के वातावरण का प्रारंभ तो वसंत पंचमी के साथ जगह जगह चंग बजाते हुए पुरूषों की टोलियों के होली के गीतों से हो जाता है। होली के निकट आते आते इन टोलियों की संख्या बढ़ती जाती है। इसी प्रकार महिलाओं के समूह भी गीत गाना प्रारंभ कर देते हैं। गीत गाने के प्रथम दिनों में केवल रात का कुछ समय काम में आता है। धीरे धीरे यह समय काफी बढ़ जाता है। फिर अवसर के अनुसार दिन एवं रात, चंग एवं पुरुषों के गीत तथा महिलाओं के गीत एवं नृत्य सुनाई व दिखाई देने लगते हैं।

इन गीतों के गाने का होलिका-दहन के साथ विशिष्ट संबंध नहीं होता। होली के अनुष्ठान से लगभग एक माह पूर्व एवं एक माह बाद तक गीतों का सिलसिला चलता रहता है। जोधपुर क्षेत्र के गांवों में होली के बाद शीतला सप्तमी या अष्टमी के मेले हुआ करते हैं जिनमें गीतों की संख्या अधिक से अधिक हो जाती है। शीतला अष्टमी के बाद तक भी कुछ मेले और भी चलते रहते हैं और उन विशिष्ट क्षेत्रों में होली के गीतों का क्रम ज्यों का त्यों चलता रहता है।

जिस प्रकार होली के गीत होलिका-दहन से ही संबंधित नही हैं, उसी प्रकार यही गीत होली के अवसर पर रंग-खेलने के साथ भी सीमित नहीं हैं। अर्थात केवल रंग खेलने के एक दिन या अधिक दिनों में ही इनका प्रचलन हो, सो बात भी नहीं। यह सही है कि रंग खेलने के दिन गीत अपनी चरम स्थिति तक पहुंच जाते हैं। उसके पूर्व एवं उसके पश्चात के समय में क्रमानुसार गीतों के बढ़ते रहने एवं घटते रहने की स्थिति मिलती है।

होली संबंधी गीतों के अर्थ को आत्मसात करने के लिए यह आवश्यक है कि इनके एक लंबे काल के प्रयोग की बात को अपने सामने रखा जाय। सामान्यतया वसंत पंचमी से लेकर रंग पंचमी तक गीतों की श्रृंखला तो चलती ही है। इन दोनों विशिष्ट दिनों को 'तुरा पांचू' एवं 'कादा पांचू' अथवा 'धूड़ पांचू' कहा जाता है। चूंकि यह गीत विशिष्ट दिन अथवा केवल विशिष्ट त्यौहार के दिन की संपत्ति नहीं हैं इसलिए केवल इन्हीं दिनों की अनुष्ठानिक एवं

सामाजिक मान्यताओं के बीच में होली के गीतों का वैशिष्ट्य भी ज्ञात नहीं होगा।

हमारा गांव बोरुंदा जोधपुर जिले का भाग हैं और इसी गांव में प्रचलित होली के गीतों के विषय में कुछ प्रामाणिक रूप से कहने का प्रयास किया जा सकता है। किन्तु साथ ही इन्हीं संकेतों को लगभग मारवाड़ नाम से पहिचाने जाने वाले क्षेत्र के लिए भी लगभग सही माना जा सकता है। टिप्पणी में केवल एक रूप-रेखा ही देने का प्रयत्न किया जा रहा है और संपूर्ण राजस्थान से ऐसी ही सामग्री के संकलन हो जाने पर उसमें पूर्णता आना संभव होगा। ढांचे में सभी रंग तभी भरे भी जा सकेंगे।

होली के गीतों के दो विशिष्ट नाम हैं—फाग एवं लूर। पुरुषों द्वारा चंग पर गाये जाने वाले गीतों को फाग कहते हैं और महिलाओं द्वारा गाये जाने वाले गीत लूर कहलाते हैं। यह कभी नहीं सुना जाता कि फाग महिलाओं ने गाया अथवा लूर पुरुषों ने गाई। बोरुंदा एवं निकट के गांवों में पुरुषों एवं महिलाओं के सम्मिलित गीतों अथवा नृत्यों की परंपरा आज प्राप्त नहीं है। अर्थात इन दोनों ही गीत-रूप, फाग एवं लूर, को पृथक करके देखना ही उचित मालूम हुआ। पुरुषों के फाग के साथ चंग एवं मंजीरों का वादन किया जाता है। फाग के गीतों के साथ नृत्य भी किया जाता है। हाथ में रूमाल, लाठी या तलवार लेकर टोली के साथ पाच-सात आदमी नाचते हुए चलते हैं। किसी स्थान विशेष पर नृत्य नहीं होता। सहज चलते रहने के साथ-साथ नृत्य भी किया जाता है। नृत्य के कुछ अन्य रूप भी मिलते हैं। टोली की संख्या अधिकाधिक भी हो सकती है।

लूर केवल महिलाओं द्वारा गाई जाती है और इन गीतों के साथ किसी भी वाद्य का वादन नहीं होता। 'लूर लेने' का अर्थ नृत्य करने से होता है। अर्थात लूर को हम गीतानुगत नृत्य कह सकते हैं। लूर गाते समय दस बारह महिलाए एक पक्ति में खड़ी हो जाती हैं और उसी संख्या में उनके बिल्कुल सामने अन्य महिलाएं खड़ी रहती हैं। दोनों कतारों के मुंह आमने-सामने होते हैं। पहिले एक कतार लूर गाती है और लय के अनुसार ताली बजाती हुई—पांवों की ठुमक के साथ दूसरी कतार की ओर बढ़ती है। लूर समाप्त होने तक बढ़ती हैं और समाप्त होते ही दूसरी कतार ठीक उसी लूर को गाते, ताली बजाते एवं पांवों की ठुमक के साथ आगे बढ़ती है। इस समय पहली कतार लय के अनुसार पुन: कदम पीछे हटाती जाती है। इसी क्रम से लूरों का गायन और नृत्य चलता रहता है।

लोक गीतों के विवेचकों ने इस बात के लिए हमेशा जोर दिया है कि गीतों में छन्दगत व्यवस्था नही होती। किन्तु यह बात उतनी सहज नहीं है, जितनी कि सतही तौर पर दिखाई देती है। यह सही है कि शास्त्रीय छन्दोविधान के अनुरूप तो लोकगीतों के काव्य-

पदों में मात्रा अथवा वर्णों की गणना-प्रधान व्यवस्था नहीं होती। किन्तु इससे यह निर्णय नहीं लिया जा सकता कि लोकगीतों में छन्दोमय काव्य-व्यवस्था नहीं होती। स्थिति तो यह है कि प्रत्येक लोक गीत के प्रत्येक चरण एवं पद में एक आन्तरिक व्यवस्था, अनुपात एवं छन्दोमयता है। इस छन्दात्मकता का कारण यह है कि प्रत्येक गीत गाया जाता है और मुख्यतया एक पक्ति की धुन को ही निरंतर पुनरावृत्त किया जाता है। गीतों में लय का प्रामुख्य रहता है और संगीत की यही लय—काव्यात्मक पंक्ति के रूप को निर्धारित कर देती है। चूंकि सहज लोक गीत 'लोगोजिनिक' अर्थात एक स्वर-एक वर्ण के अनुरूप चलते हैं और उनमें स्वर-विस्तार नहीं होता, इसलिए छन्दोमयता का आना तो एक अनिवार्य स्थिति बन जाती है।

इस छन्दात्मकता का सहज दर्शन लूर में किया जा सकता है। प्रस्तुत लूर-संग्रह के प्रत्येक गीत को देखने से ज्ञात होगा कि उनके पदों में निश्चित समानता है अर्थात छन्दोमय पद की रचना में प्रत्येक पंक्ति या चरण विशिष्ट रूप से एव समान रूप से ही रचित हैं। यहां इस बात पर भी थोड़ा सोच लेना आवश्यक है कि लोक गीतों को लिपिबद्ध करते समय गीत की छान्दसिक व्यवस्था को किस प्रकार निर्णीत किया जाय। लोकगीतों का लिखित-रूप तो कविता जैसा ही होता है और उसके एक एक चरण एवं पद का रूप संग्राहक को बनाना ही पड़ता है। चरण का निर्णय लेते समय सतर्कता रखना आवश्यक है। गीत को गाते समय लय एवं स्वास को भली प्रकार समझ लिया जाय तो किसी भी लोकगीत का छन्दोमय रूप एकदम निखर कर सामने आजाता है। एक ही संगीतात्मक धुन के सभी गीतों में ठीक यही काव्य-रूप हमें प्राप्त होता चला जायेगा। लूर की संरचना में यह तथ्य विशेष रूप से महत्वपूर्ण बन कर हमारे सामने आता है।

प्रस्तुत संग्रह में सहज ही देखा जा सकता है कि सभी पहली दो पंक्तियों में एक भाव का कथन है; तीसरी पंक्तियां चौथी पंक्ति में जाकर 'टेर' की सर्जना करती हैं—जो गीत के ही भाव पर निर्भर रहती हैं। पांचवी पंक्तियों में भाव का समाहार किया गया है और छठी पंक्तियों में टेर का पुनरावर्तन है। चरणगत यही व्यवस्था सभी लूरों में प्राप्त होती है। इस व्यवस्था को प्राप्त करने के लिए छन्दात्मक रूप का आरोपण नहीं किया गया है अपितु स्वास एवं लय की यतियों को ही ध्यान में रखा गया है।

लूर के गीतों की धुन सामान्यतया एक ही होती है और एक संपूर्ण पद पर ही इसका अन्त हो जाता है। इन पदों की इस धुनात्मक एव काव्यात्मक समानता के सिद्धान्त को उन गीतों पर भी आरोपित किया जा सकता है जहां धुन-विशेष में विभिन्न पदों की क्रमिक रचना

होती है और उन्हीं के मिलाने पर एक पूर्ण गीत बनता है। बोरुंदा गांव में प्राप्य लूरों के गीतों में हमने पाया कि प्रथम दो पंक्तियों को दो बार उच्चारित किया जाता है जब कि शेष पंक्तियों को केवल एक ही बार गाया जाता है। गांव में ही प्राप्त अधिकांश गीतों की धुन एक है किन्तु इसी छन्दोमयता की कुछ लूरों में एक अन्य धुन भी मिलती है। दूसरी धुन में गाई जाने वाली लूरों को इस संग्रह के अन्त में काले टाइप में प्रकाशित किया जा रहा है। दूसरी धुन कहने से सिर्फ इतना ही मतलब है कि पहली से तीसरी पंक्ति के अन्तिम भागों में संगीतात्मक अन्तर आता है। अन्यथा स्वरानुसार ठीक प्रचलित धुन का ही प्रामुख्य रहता है। इस स्थिति को देखते हुए यह अन्दाज भी लगाया जा सकता है कि राजस्थान के विभिन्न सांस्कृतिक क्षेत्रों में अन्य धुनों का प्रचलन भी होगा। किन्तु धुन के वैविध्य को देखने के बाद भी यही तथ्यात्मक रूप से सत्य होगा कि एक धुन वाली सभी लूरों का काव्यात्मक रूप एक ही है।

लोकगीतों के सांगीतिक एवं काव्यात्मक अध्ययन के साथ अभी यह विचार नहीं हो पाया है कि इनका परस्पर एवं आंतरिक क्या संबंध है। कुछ गीत तो ऐसे हैं जो एक विशिष्ट धुन में गाये जाते हैं, उनका अपना काव्य रूप है और ठीक उसी धुन के आधार पर अन्य गीत नहीं मिलते। किन्तु साथ ही कुछ धुनें ऐसी हैं जिन पर एक नहीं सैंकड़ों गीत प्राप्त हैं। ऐसे गीतों के अध्ययन में धुनों का प्राधान्य सहज ही समझा जा सकता है। काव्यानुबंधन को धुन का ही सहचर बनना पड़ता है। तीसरे प्रकार की वह धुनें भी हैं जिनमें एक से अधिक गीत प्राप्त होते हैं, किन्तु जिनका आधिक्य नहीं है। लूर एक ऐसा गीत प्रकार है जिसमें एक ही धुन पर सैंकड़ों गीत प्राप्त हैं। ठीक यही स्थिति फाग की भी है।

लूरों में व्यक्त भावों के विषय में भी विचार किया जाना आवश्यक है। सबसे पहिले तो उन लूरों के विषय में कह देना उचित होगा जिनको प्रस्तुत संग्रह में प्रकाशित नहीं किया गया है और संभवतया पत्रिका के माध्यम से जिन्हें प्रकाशित किया भी नहीं जा सकेगा। सामान्यतया सभी भारतीय इस बात को जानते हैं कि होली के गीतों में अश्लील वर्णन बहुतायत से पाये जाते हैं। ये गीत चाहे स्त्रियों के हों, चाहे पुरुषों के हों। जिस स्वच्छंद एवं आत्ममुक्त भाव से होली के गीतों में यौन-स्वतंत्रता का अतिरंजित वर्णन रहता है और जिस शंकाहीन मन से उन्हें गाया जाता है, वह सामाजिक शिष्टता की प्रत्येक सीमा को लांघ जाता है। किन्तु यह अश्लील वर्णन एवं गीत, सामाजिक जीवन का एक बृहत् सत्य है और इन्हीं अश्लीलताओं के बीच से मनुष्य की कितनी ही वर्जनाओं के बंधन टूट जाते हैं, वे विशृंखलित हो उठते हैं। वर्ष भर में पुरुष एवं महिलाएं शिष्टाचार की जिस चादर को ओढ़े, मन में और जीवन में जिन यौन-तृष्णाओं व मान्यताओं को संजोय रखते हैं, वे सभी बांध तोड़ कर बह

निकलती हैं। यह सही है कि होली की इस वास्तविकता की गहराई में जाने की अपेक्षा हैं और सही मूल्यांकन करने के बाद ही उनके ऐतिहासिक एवं सामाजिक महत्व की स्थापना की जा सकेगी। होली के तात्विक अश्लील रूप में ही मनुष्य के आदिमतम विश्वासों के एक अंश की खोज भी संभव है।

लूरों में व्यक्त विषयों का संबंध मुख्यतया दो स्थितियों से है। एक है : कृषि संबंधी कार्य और दूसरा है : उसका प्रजनन विषयक विश्वासों के साथ उर्वरता का संबंध। इस तथ्य से सभी लोग परिचित हैं कि होली के त्यौहार के समय एक फसल तैयार होती है और उसकी उपज को प्राप्त करने का उत्साह मन में समाया रहता है। दूसरी ओर होली के दिनों से ही दूसरी फसल की सफलता की कामना का समय भी प्रारंभ हो जाता है। एक वर्ष का अंत एवं नये वर्ष का प्रारंभ है। होली का समय एक संधिकाल के पूर्वाभास का काल है। कृषि संबंधी विश्वासों के साथ यह तथ्य भी गुम्फित है कि प्रजनन की क्रिया जिस प्रकार नवीन सृजन की आधार भूमि है, ठीक उसी क्रिया का अभिचारिक प्रभाव खेती की सफलता के लिए भी प्राप्त किया जा सकता है। अतः कृषि एवं प्रजनन के दायरे में लूरों के विषय चलते हैं।

लेकिन ये दोनों विषय मुख्य भावधारा अथवा गीतों के मूल में सन्निहित हैं। जिस प्रकार वृक्ष की जड़ के स्वरूप और उसके तने, शाखा, पत्ते, फूल अथवा फल के स्वरूप में वैभिन्य है, उसी प्रकार लूरों के विषय भी अपने मूल से उतने ही भिन्न दिखाई देते हैं। ऐतिहासिक काल एवं मनुष्य की सहज अनुभूतियों ने भी उनके रूप पर अपना प्रभाव डाला है। अतः हर लूर से कृषि एवं प्रजनन संबंधी किसी तथ्य को खोजना अनुचित होगा। देखना यही होगा कि इन लूरों में अधिकांशतया किन आकांक्षाओं को व्यक्त किया गया है। प्रस्तुत संग्रह में बादल, बिजली की अभिलाषा के साथ इन्द्र की स्तुति की गई है। सूर्य को तप्तता से, हरी-भरी होकर विश्व को शांति देने वाली वनस्पति के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। यह भाव उसके कृषि-कर्म की धारणा को व्यक्त करने में समर्थ है।

यौन एवं प्रजनन के भावों को व्यक्त करने में मन की श्रृंगारिक भावना का उद्भव होता है। क्योंकि इन संबंधों को समाज ने अपने नियमों के अनुसार व्यवस्थित कर दिया है, सुचारू आधार प्रदान कर दिया है। श्रृंगारिक भावना में शरीर का सौन्दर्य, वस्त्रों का सौन्दर्य, आभूषणों का सौन्दर्य, गुणों का सौन्दर्य, व्यवहार का सौन्दर्य, क्षमता का सौन्दर्य आदि तत्व सन्निहित हैं इन्हीं भावनाओं पर आधारित कितनी ही बाह्य एवं आन्तरिक सौन्दर्यात्मक मनःस्थितियों का आविर्भाव हो जाता है। संचारी भावों का यह संसार विस्तृत और विशाल है। लूरें इन्हीं सौन्दर्य अथवा श्रृंगार संबंधी कल्पनाओं के आधार पर अपना रूप ग्रहण करती हैं।

अति-श्रृंगारिकता में सामाजिक प्रतिबंधों को तोड़ कर, नये स्नेह संबंधों को स्थापित करने की बात भी आ जाती है। लूरों में ऐसे ही सहज भावों का खूब वैविध्य के साथ चित्रण मिलता है। कहीं कहीं पुरुष एवं स्त्री के संसर्ग पर पूर्ण रूपक भी मिल जाता हैं। धरती द्वारा बीज की आकांक्षा संबंधी लूर लगभग ऐसे ही तथ्य को व्यक्त करती है।

कृषि के साथ ही समाज के आर्थिक संबंध भी मुखर बन कर सामने आ जाते हैं। इस दृष्टि से लूरों में खेतीहर किसान के शोषण एवं उसके आक्रोश का भी सहज वर्णन मिल जाता है। एक लूर में कहा गया है कि गांव का ठाकुर किसानों की उपज का अधिकांश भाग रख लेता है। अब किसान उसके गांव में नहीं रहेंगे। अन्यत्र चले जायेंगे। अन्य लूर में व्यक्त किया गया है कि अंग्रेज आ गया और अब वह हमारी उपज का मालिक बन गया है। 'ओ राजाजी ! तुम क्यों रजाई में मुह छिपाये सो रहे हो।' ऐसी व्यंगोक्तियों का भी अभाव नही है। लूर का काव्यात्मक गठन ऐसा है कि महिलाओं के जीवन की प्रत्येक अनुभूति उसमें सहज ही व्यक्त हो जाना चाहती है और इसीलिए काल की गति, ऐतिहासिक घटनाओं अथवा सामयिकता का वर्णन भी इनमें आ जाता है। यही कारण है कि रेल, मोटर, अंग्रेज, महात्मा गांधी, राजनैतिक उथल-पुथल के व्यंग अथवा उत्फुल्ल प्रशंसा के भाव इनमें सम्मिलित हो गये हैं।

लूरों का एक प्रिय विषय यह भी रहा है कि लोगों को खुलकर होली खेलने की छूट दी जाय। इस बारे में वे किसी भी इन्कार को सुनने को तैयार नहीं हैं। एक लूर में महिलाएं कहती हैं कि यदि कोई लूर गाने से रोके तो हम नहीं मानेंगी। 'इन्कार करने वाले के सिर पर जूते लगाओ।' इसी तथ्य को सामने रखकर देखें तो एक विशेष प्रकार की लूरों के दर्शन होना प्रारंभ हो जाता है। इन लूरों में गाने की स्वतंत्रता, नाचने की स्वतंत्रता, लूर में नहीं नाच पाने के दुःख एवं होली के आनन्द का वर्णन मिलता है।

लूरों के विषय का एक विशिष्ट भाग महिलाओं के अपने परिवार एवं समाज के प्रति अपने विद्रोह की बात कहता है। जेठ-जेठानी से अलग होने की बात, सास का क्रोध, होली पर पति के परदेस होने की बात, आत्म-मुक्त जीवन को जीने के अधिकार की बात भी लूरों में मिलती है।

लूरों के सृजन में हमने पाया कि एक जाति की महिलाओं के प्रति दूसरी जाति की महिलाएं क्या सोचती हैं—उनकी भावनाओं का चित्रण भी रहता है। सभवतया लूरों के बनने में यह व्यंग-प्रधान प्रेरणा भी काफी तीव्र रही है।

प्रस्तुत सारे संग्रह में एक लूर आध्यात्मिक तत्व लिए हुए भी है। सभव है ऐसी लूरें भी

खूब प्रचलन में हों। इस विषय की लूरों के द्वारा यह निर्णय भी सहज ही लिया जा सकता है कि लोक-काव्यों की अन्य प्रेरणाओं की व्यंजनाओं ने भी लूर-संसार में आतिथ्य ग्रहण कर लिया है। अब उन अतिथि-भावों ने लूर को ही अपना घर बना लिया है। इस संग्रह की एक लूर का भाव है : 'हे हंस [जीव] तू परदेस में आगया है। परदेस के मेले में तू सुधबुध भूल गया है। तूने माया के जंजाल में अपने को लिप्त कर लिया है और अपने जीवन-रूपी सहज हीरे को तूने खो दिया है।'

भावों की इस विपुल संपत्ति के साथ केवल बोरुन्दा गांव में यदि हजारों नहीं भी, तो सैंकड़ों लूरें तो प्राप्त हैं ही। अब तक हमारा संग्रह दो सौ लूरों से अधिक पहुंच गया है। अश्लील को छोड़ कर !

और यह तो केवल लूर की बात है जो महिलाओं के गीत हैं। पुरुषों के फाग तो बाकी ही हैं ! असंख्य अनुभव, असंख्य संवेग और असंख्य ही अभिव्यक्तियां !

महिलाओं के होली गीत : लूर

खाई में कूकरिया बोलै
मसांणां में भूत रे
लूर गातां बरजै जिणरा मरजौ पूत रे
फागण अेळौ जा, हां हां फागण अेळौ जा
फेर बरजै तौ लगावौ जूत रे
फागण अेळौ जा

चंग नै बजावण वाळौ
साजौ-ताजौ रैंजौ रे
घूघरिया घमकावण वाळौ मांदौ पड़जौ रे
मारै कीड़ियां, हां हां मारै कीड़ियां
रै कीड़ियां दुराई देवै रे
मारै कीड़ियां

आज म्हारौ माथौ दूखै
रखड़ी किणनै सोवै रे
चिरंगी चिराई वाळी होळी आई रै
लूर लागै नीं, हां हां लूर लागै नीं

शब्दार्थ : कूकरिया— पिल्ले । **मसांणां**—श्मसान । **बरजै**— मना करे । **जिणरा**— जिसके । **अेळौ**—व्यर्थ । **चंग**— होली पर राजस्थान में बजने वाला एक लोक वाद्य । **साजौ-ताजौ**— स्वस्थ । **मांदौ**—बीमार । **कीड़ियां**— चींटियां । **दुराई**— शाप । **म्हारौ**—मेरा । **रखड़ी**— सिर का एक आभूषण विशेष । **किणनै**—किसको । **चिरंगी चिरोई**—रंग बिरंगी ।

साथणियां भेळी धमचक देवा नै
लूर लागै नीं

फागण मीनौ आयौ छैला
लूर देखण आजै रे
आतौ जातौ सेलड़ी रै होळा लाजै रे
होळा गवां रा, हां हां होळा गवां रा
गुज्जी रा उछाळ देस्यूं रे
होळा गवां रा

च्यार छिणगा राखै छैलौ
गैरियां में नाचै रे
डाकणियां री भूलरौ देखण नै आवै रे
छैला धीमै नाच, हां हां छैला धीमै नाच
डाकणियां डकराय लैसी रे
छैला धीमै नाच

फागण मीनौ आयौ छैला
फागणियौ रंगाय दे
फागणिया री कोर बंधावौ रसिया
जद होळी रे, हां हां जद होळी रे
बागां में खेलण आवौ रसिया
जद होळी रे

शब्दार्थ : **भेळी**—शामिल। **सेलड़ी**—दुल्हिन। **होळा**—कच्चे गेहूं। **गुज्जी**—जौ। **उछाळ**—फेंकना। **छिणगा**—पल्ला। **गैरियां**—होली पर नाचने वालों का समूह। **भूलरौ**—समूह। **धीमै**—धीरे। **डकराय लेसी**—नजर लगाना या समाप्त करने के लिए टोना-टोटका करना। **फागणियौ**—एक ओढ़ना विशेष। **कोर**—किनार। **जद**—सब।

काजळिया री कांचळी
म्हारै लूर लेतां फाटी रे
रातौरात परणियौ, पीपाड़ न्हाटौ रे
लायौ सोजतियौ, हां हां लायौ सोजतियौ
मेरूड़ा रा भोळा भांगै रे
लायौ सोजतियौ

अेक तो सोनी रा बेटा
म्हारौ कह्यौ करजौ रे
भंवरजी री गेडी रै घूघरिया जड़जै रे
असल चांदी रा, हा हां असल चांदी रा
गैर में रिमझोळ बाजै रे
असल चांदी रा

कांनां में सांकळियां वाळी
सोळै चढ़ियौ नाचै रे
पीवर बैठी डावड़ी समचौ मेलै रे
होळै नाचणौ, हां हां होळै नाचणौ
लोहीड़ौ भर जासी रे
होळै नाचणौ

म्हैं तौ म्हारै पीवर जावूं
आटौ पड़्यौ कुंडी में

शब्दार्थ : **काजळिया री कांचळी** — काले कपड़े की कंचुकि। **परणियौ**— पति। **पीपाड़** — एक नगर का नाम। **न्हाटौ**—भगा। **सोजतियौ**—एक ओढ़ना विशेष। **मेरूड़ा**— एक ओढ़ना विशेष। **भोळा भांगै रे**—याद को कम करना, अर्थात तुलनात्मक दृष्टि से श्रेष्ट। **म्हारौ**—मेरा। **गेडी**—लाठी। **घूघरिया**— घुंघरू। **रिमझोळ**— बड़े घुंघरू। **सांकळियां**—कानों में पहिनने का एक आभूषण। **सोळै**— उत्साह, जोश। **पीवर**— पीहर। **डावड़ी**— लड़की। **समचौ**— समाचार। **होळै**—धीरे। **लोहीड़ौ**— लोहू। **म्हैं**—मैं। **म्हारै** — मेरे। **कुंडी**— मिट्टी का एक बर्तन।

भावै तो खाजै रे छैला, पड़जै तूंडो में
पीवर मैल दै, हां हां पीवर मैल दै
साथणियां भेळी लूर लेवूं रे
पीवर मैल दै

थारै गांव री गळियां सांकड़ी
लूर कठै लेवूं रे
थारै घर रा नेव नीचा, रंवूं कठै रे
पीवर मैल दै, हां हां पीवर मैल दै
साथणियां भेळी लूर लेवूं रे
पीवर मैल दै

चंग नै झींझां री जोड़ी
बड़ला हेटै बाजै रे
आगली टोळी में म्हारो वीरो नाचै रे
हालौ देखण नै, हां हां हालौ देखण नै
रिपियौ नै नाळेर लै लौ रे
हालौ देखण नै

बोरुन्दा रा अनवी ठाकर
गैरिया नचावै रे
गैरिया नचाय, वांनै दारू पावै रे
जूंनी भटियां रौ, हां हां जूंनी भटियां रौ

शब्दार्थ : भावे — इच्छा हो। **तूंडो** — गहरा गड्ढा। **भेळी** — शामिल। **लूर** — होली का एक गान-नृत्य विशेष; महिलाओं द्वारा प्रस्तुत। **थारै**—तेरे। **नेव**—कच्चे झोपड़े का छज्जा। **चंग**— होली पर बजने वाला एक लोक वाद्य। **झींझा** — मजीरा। **बड़ला** — वट वृक्ष। **टोळो** — टोली। **वीरो** — भाई। **हालौ** — चलो। **नाळेर** — नारियल। **बोरुंदा** — गांव का नाम। **अनवी** — न झुकने वाला। **गैरिया** — होली पर नाचने वालों का समूह। **वांनै** — उनको। **दारु**—शराब। **जूंनी** — पुरानी। **भटियां** — भट्टिए।

कळकळतौ दारू माडां ठेल रे

जूंनी भटियां रौ

छिनवा थारौ खोज जावै

माळवै क्यूं मैली रे

खोडां री जवार खाधी , गोडा दूखै रे

लूर लागै नीं , हां हां लूर लागै नीं

साथणियां म्हारी मेण्यां देवै रे

लूर लागै नीं

चांद आडी जळेरी ,

सूरज रै आडौ कूंडौ रे

म्हारा वीरा रै गेडी बावै , किणरौ मूंडौ रे

हाजर ऊभी रे , हां हां हाजर ऊभी रे

ढाल नै तरवार लेयनै

हाजर ऊभी रे

दोय दोय फुलड़ा पैर छैलौ ,

चोवटा में नाचै रे

अंगरखी उघाड़ छैलौ , डील निरखै रे

डीलां उतरियौ , हां हां डीलां उतरियौ

लोई रौ भराव व्हैगौ रे

डीलां उतरियौ

शब्दार्थ : कळकळतौ — गर्मागर्म । **माडां** —जबरदस्ती । **ठेलै** —पिलाना । **छिनवा**—संवत् १९९६ । **थारौ** — तेरा । **खोज जावै**— निर्वंश होना । **माळवै** --मालवा । **क्यूं** —क्यों । **खोडां**--धान भरने के गहरे गड्ढे । **खाधी**--खाई । **गोडा** — घुटने । **लूर**-- होली का एक नृत्य । **मेण्यां** — ताने । **आडी** -- चारों ओर । **जळेरी** --- प्रकाश का घेरा । **कूंडौ**— गोल घेरा । **वीरा** — भाई । **गेडी बावै** — लाठी चलाये । **किणरौ** --- किसका । **मूंडौ**-- मुंह । **ऊभी** — खड़ी । **फुलड़ा** — गले में पहिनने का एक गहना । **चोवटा** —चौक । **डील**— देह । **उतरियौ** --थक गया । **लोई** — लोहू । **भराव** — इकट्ठा होना ।

उरदौ थांरी अंगरखी
सूरज नैं चांद मांडू रे
नींतर म्हारी कांचळी रैं सूवौ मांडूं रे
लीली पांखां रौ, हां हा लीली पांखां रौ
पंर नैं पीवरियैं जावूं रे
लीली पांखां रौ

नींबड़ी निरोगी व्है तौ
हेटै अरटियौ ढाळूं रे
आया गिया बांमणां नैं आखा राळूं रे
काढ़ौ टीपणौ, हां हां काढ़ौ टीपणौ
परणियौ परदेसां माल्है रे
काढ़ौ टीपणौ

काठिया गवां री लोद
गावा घी में ओहणी रे
पतळा पोया फाफड़ा, सिनकारी देवूं रे
रोटी जीमलौ, हां हां रोटी जीमलौ
नणदी रा वीरा भूख लागी रे
रोटी जीमलौ

केरड़ा रैं केर लाग्या
खेजड़ी रे खोखा रे

शब्दार्थ : उरदौ — इधर दो। **थांरा**—तुम्हारी। **मांडूं** — कसीदा करूं। **नींतर**—नहीं तो। **कांचळी** — कंचुकि। **सूवौ** — तोता। **लीली** — हरी। **पीवरियैं** — पीहर। **हेटै** —नीचे। **अरटियौ** — चरखा। **ढाळूं** — रखूं। **बांमण** — ब्राह्मण। **काढ़ौ टीपणौ** —पत्रा निकालो। **परणियौ** — पति। **परदेसां** — विदेश। **माल्है** — घूमना। **काठिया गवां**— गेहूं की विशेष किस्म। **लोद**—लोथ। **गावा घी** —गाय का घी। **ओहणी**— गोंदना। **फाफड़ा** — चपाती। **सिनकारी** — संकेत। **नणदी रा वीरा** — ननद का भाई अर्थात पति। **केरड़ा** — केर का वृक्ष। **केर** — केर का फल। **खोखा** — खेजड़ी की फली।

भंवर जी परणीजण जावै साव बोखा रे
मती परणाजौ , हां हां मती परणाजौ
ऊमर रौ कागदियौ लिख देवूं रे
मती परणाजौ

केरड़ा रै केर लाग्या
खेजड़ी रै खोखा रे
भंवरजी परणीजण बैठा साव बोखा रे
बूढ़ौ परणायौ , हां हां बूढ़ौ परणायौ
बाबलियौ दमड़ां रौ लोभी रे
बूढ़ौ परणायौ

अेवड़ री उछेर म्हांनै
खारी आक लागै रे
गायां री उछेर म्हांनै वाल्ही लागै रे
अेवड़ बेच दौ , हां हां अेवड़ बेच दो
पगतळियां छाला पड़ग्या रे
अेवड़ बेच दो

अैड़ा कांई जेठजी , म्हांनै
ओखा डोढ़ा बोले रे
अैड़ी कांई जेठांणी , पड़ियां नै पाळै रे
न्यारा व्है जावौ , हां हां न्यारा व्है जावौ

शब्दार्थ : भंवरजी— दूल्हा । **परणीजण जावै**—विवाह के लिए जा रहा है । **साव**—निपट । **बोखा**—दंत-हीन । **परणाजौ**— शादी कराना । **बाबलियौ**—पिता । **दमड़ां रौ**—पैसों का । **अेवड़**—रेवड़ । **उछेर**—चराना । **खारी आक**—अत्यधिक कड़ुवी । **वाल्ही**—प्रिय । **पगतळियां**— पैर का तला । **अैड़ा कांई**— ऐसे क्या । **ओखा-डोढ़ा बोलै** — बुरा भला कहते हैं । **जेठांणी**—जिठानी । **पड़ियां नै पाळै**—मुफ्त का खिलाना । **न्यारा**—जुदा ।

पीवर री धांमोणी ले लौ रे
न्यारा व्है जावौ

पाली सूं लखारौ आयौ
लीली लाखां लायौ रे
सुसराजी रै आंगणियै दुकान मांडी रे
घर में सारौ नीं, हां हां घर में सारौ नीं
सासूजी आगै दोरौ जीवणौ
घर में सारौ नीं

ऊंचा पोढ्या ठाकरसा
अर नीचै सूती ठकरांण्यां
ठाकरसा खेंखारौ करयौ, जागौ ठकरांण्यां
पीसौ बाजरौ, हां हां पीसौ बाजरौ
जाटणियां जोरावर व्हैगी रे
पीसौ बाजरौ

बोरुंदा रा धणियां थें तौ
करड़ा लाटा लाटौ रे
औ लौ थांरौ बोरुंदौ, घोचा में घालौ रे
हालौ माळवै, हां हां हालौ माळवै
गाडी में गूदड़िया ले लौ रे
हालौ माळवै

शब्दार्थ : पीवर— पीहर। **धांमोणी**—दहेज में दी हुई गाय। **पालो**—एक नगर का नाम। **लीलो**— हरी। **सुसराजी**— श्वसुर। **मांडी**— लगाई। **सारौ**—अधिकार। **दोरौ**—कठिन। **पोढ़्या**— सोये हुए। **खेंखारौ** — खंखारना। **जोरावर**— शक्तिशाली। **बोरुन्दा**— गांव का नाम। **धणियां** — स्वामी। **करड़ा** — सख्त। **लाटा लाटौ** — लगान के रूप में लिया जाने वाला फसल का हिस्सा।

बजारां बैठौ बांणियौ
दूणा डोढ़ा मांडै रे
पांच रा पचास नांवै, कूड़ी साखां घालै ओ
कूड़ौ बांणियौ, हां हां कूड़ौ बांणियौ
सूरज री उगाळी मरचौ जांणियौ
कूड़ौ बांणियो

हाटां में बैठौ बांणियौ
जूंनौ जरदौ तोलै रे
होळै होळै तोलतां रौ भांडौ बोलै रे
बूढ़ौ बांणियौ, हां हां बूढ़ौ बांणियौ
संसार मांही मरियौ जांणियौ
बूढ़ौ बांणियौ

खेळी नै कोठा रौ नाळौ
अेक-मेख बेवै रे
हिन्दू नै तुरकां बिचै बैर बेवै रे
करलौ राजीपौ, हां हां करलौ राजीपौ
फागण रौ मीनौ अेळौ जासी रे
करलौ राजीपौ

मोडकी मगरी रो पांणी
ढाळौ ढाळ उतरियौ

शब्दार्थ : दूणा-डोढ़ा— दुगुना-ड्योढ़ा। **मांडै**— लिखता है। **कूड़ी**—झूठी। **साखां**— गवाही। **उगाळी**—उगने के समय। **मरचौ जांणियौ**—मरा हुआ जाना। **हाटां**— दूकानों। **जूंनौ** — पुराना। **जरदौ**—तम्बाखू। **होळै**—धीरे। **भांडौ बोलै**—पेट बोल रहा है। **खेळी**—मवेशियों के पानी पीने का कुंड। **कोठा** — हौज। **नाळौ** — नाली। **अेक-मेख**— एकाकार। **बेवै** — बह रहा है। **तुरकां**—मुसलमान। **राजीपौ**—समझौता। **अेळौ**—व्यर्थ। **मोडकी**—मुंडी हुई सी। **मगरी**—जमीन से ऊंचाई वाला पथरीला मैदान। **ढाळौढाळ**—ढलाई दर ढलाई।

बाबू थारा बाड़ा में इंगरेज उतरियौ
लीली टोपी रौ, हां हां लीली टोपी रौ
रिपियौ नै नाळेर ले लौ रे
लीली टोपी रौ

माल सूं भरचोड़ी गाडी
टेसण माथै छूटी रे
काळी-बोळी बाजरी, अंगरेज लूटी रे
सुणजौ सिरदारां, हां हां सुणजौ सिरदारां
राजाजी राली किण विध ओढ़ी रे
सुणजौ सिरदारां

धोतिया री धार माथै
भरचौ इंदर गाजै रे
दांत रा चूड़लिया माथै नौपत बाजै रे
इंदर ओलरियौ, हां हां इंदर ओलरियौ
बीजळियां सळीका पाड़ै रे
इंदर ओलरियौ

बाड़लियौ पैरूं तौ रे
धुर में चिमकै बीजळियां
बीजळियां सळीका पाड़ै, नाचै तीजणियां

शब्दार्थ : **थारा** — तेरे। **बाड़ा** — अहाता। **इंगरेज** — अंग्रेज। **लीली** — हरी। **नाळेर** — नारियल। **सूं** — से। **भरचोड़ी** — भरी हुई। **टेसण** — स्टेशन। **माथै** — पर। **काळी-बोळी** — काली सी। **राली किण विध ओढ़ी रे** — लंबी तान कर निर्लज्ज की तरह क्यों सो रहे हैं। **धोतिया** — धोती। **धार** — किनार। **माथै** — पर। **भरचौ इंदर गाजै रे** — भरे हुए बादल गर्जन कर रहे हैं। **दांत** — हाथी दांत। **इंदर ओलरियौ** — बादल बरसे। **सळीका पाड़ै** — चमक रही हैं। **बाड़लियौ** — गले में पहिनने का आभूषण। **धुर** — उत्तर दिशा। **तीजणियां** — सावन की तृतीया का व्रत रखने वाली महिलाएं।

इंदर ओलरियौ, हां हां इंदर ओलरियौ
बीजळियां हिबोळा मारै रे
इंदर ओलरियौ

उगूणी धरती में धणियां
औ कांई नखतर ऊगौ रे
रातौ-पीळौ सोसनी सूरज ऊगौ रे
लीली लैरां रौ, हां हां लीली लैरां रौ
दुनियां रौ रुखाळौ ऊगौ रे
लीली लैरां रौ

अळियां गळियां डरचौ व्है तो
मादळियौ मंतरावूं रे
ढोलिये चिमक्यौ व्है तौ वेद लावूं रे
जूंनो पाली रौ, हां हां जूंनो पाली रौ
जेपर रौ झाड़ागर लावूं रे
जूंनो पाली रौ

खेत तो खड़्योड़ौ पड़्यौ
धरती धान मांगै रे
भंवर थारी बायोड़ी में डूलां रैगी रे

शब्दार्थ : इंदर ओलरियौ — बादल बरसे। **बीजळियां हिबोळां मारै** — बिजलियां चमक रही हैं। **उगूणी**—पूर्व दिशा। **धणियां**— स्वामी। **औ कांई**—यह क्या। **नखतर**—नक्षत्र। **रातौ**—लाल। **सोसनी**—आसमानी। **लीली**—हरी। **रुखाळौ**—रक्षक। **अळियां-गळियां**—गली कूंचों में। **डरचौ व्है तौ** — डरा हो तो। **मादळियौ** — तावीज। **ढोलियै** — पलंग। **वेद**—वैद्य। **जूंनी—**पुरानी। **पालौ**—एक नगर का नाम। **झाड़ागर**— ओझा। **खड़्योड़ौ पड़्यौ**—जुता हुआ तैयार पड़ा है। **भंवर**—पति के लिए संबोधन। **थारी**—तेरी। **बायोड़ी**—बोई हुई। **डूलां रैगी रे**—जमीन बोते समय धान का नीचे नहीं गिरना।

पाछी बाय दौ
लाखीणी पोळच खाली रेंगी रे
पाछी बाय दौ

हंसलौ परदेसां आयौ
चार दिन रा मेळा में
सुध-बुध पांतरियौ रे जग रा खेला में
माया जोड़ी रे, हां हां माया जोड़ी रे
हीरौ अवयारथ खोयौ रे
माया जोड़ी रे

दांत रा चूड़लिया माथै
छांट लागी पालर री
बिलखतड़ी मर जाऊं रे छैला, मन में लालर री
लालर लै दै रे, हां हां लालर लै दै रे
नणदी रा वीरा, हरिया डाबां रा
लालर लैदै रे

लालर लालर गोरी
थूं कांई बिलखै
मेवड़ला बिना धरती बिळखै
मर जाऊं रे, हां हां मर जाऊं रे
हठीला थारै हेत बिना
मर जाऊं रे

शब्दार्थ : **पाछी** — वापस । **बाय दौ**—बो दो । **लाखीणी**— लाखों के मोल की । **पोळच**— बढ़िया तैयार किया हुआ खेत । **हंसलौ** — हंस, जीव । **परदेसां**— विदेश । **मेळा** — मेला । **सुध-बुध**— चेतना । **पांतरियौ**— भूल गया । **खेला**— खेल-तमाशा । **अवयारथ**— अकारथ, व्यर्थ । **दांत**—हाथी दांत । **छांट**— बूंद । **पालर**—बादलों का पानी । **लालर**—लाल ओढ़नी । **नणदी रा वीरा**—ननद का भाई अर्थात पति । **डाबां**— धब्बे । **मेवड़ला**—मेह । **थारै**—तेरे । **हेत**— प्यार ।

गांव गांव रा खातीड़ा बुलाय दो
गेरियां रे डंडिया घड़ावो राजाजी
होळी आई रे, हां हां होळी आई रे
राजाजी थांरी मारवाड़ में
होळी आई रे

सोना रा मादळिया सिवजी
पारवतां नें सोहे रे
सिवजी नें सोहे, डोरो रेसम रो
कीकर गोवूं रे, हां हां कीकर गोवूं रे
हळीला डोरो लुळ लुळ जाय
कीकर गोवूं रे

शब्दार्थ : खातीड़ा — सुथार। गेरिया — होली का नाच करने वाले। थांरी — तुम्हारी। मादळिया— गहना विशेष। पारवतां — पार्वती। डोरो— गले में पहिनने का एक गहना-विशेष। कीकर— कैसे। गोवूं — पिरोऊं। लुळ लुळ जाय— नम नम जाना।

राजस्थान स्टेट लोटरीज प्रथम ड्रा

एक लाख रुपये के इनाम के विजेता

श्री श्योचन्द्रराम यादव, पेशा : काश्तकारी

निवासी : नाथी का वास, मलिकपुर पंचायत, तहसील : सांभर, जिला जयपुर

आप भी

इतने ही भाग्यशाली हो सकते हैं !

राजस्थान स्टेट लोटरी का

दूसरा ड्रा ६-४-१९६९

दूसरे ड्रा का टिकिट खरीदिये

कुल इनाम १५३

पहला इनाम— १ लाख रुपये और एक एम्बेसेडर कार अथवा २५,००० रुपये।

दूसरा इनाम— ५०,००० रुपये।

तीसरा इनाम— २५,००० रुपये।

चौथा इनाम— २,००० रुपये [पचास]

पांचवा इनाम— १,००० रुपये [एक सौ]

कुल ४ लाख रुपये के १५३ इनाम

एजेन्टों को भी कमीशन में इजाफा

पहले ५००० तक १५ प्रतिशत

५००० से २०,००० तक १६ प्रतिशत

२०,००० से ५०,००० तक १८ प्रतिशत

५०,००० से ऊपर २० प्रतिशत

१ लाख से ऊपर १ प्रतिशत विशेष बोनस

आज ही एजेन्ट बनिये !

जिले की ट्रेजरी व तहसील की सब-ट्रेजरी में टिकिट मिलते हैं।

निदेशक अल्प बचत एवं स्टेट लोटरीज विभाग, सी- ३०, भगवानदास रोड, जयपुर

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रन्थों का
राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

संस्कृत - प्राकृत

प्रकाशन का नाम	सम्पादक	मूल्य : रुपये
दशकण्ठवधम्	श्री गंगाधर द्विवेदी	४-००
श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्र	श्री गोपालनारायण बहुरा	३-७५
रत्नपरीक्षादि सप्त ग्रन्थ - संग्रह	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	९-२५
स्वयम्भूछंद	प्रो. एच_ डी. वेलणकर	७-७५
वृत्तजातिसमुच्चय	,, ,, ,,	५-२५
कविदर्पण	,, ,, ,,	६-००
वृत्तमुक्तावली	स्व. पं. श्री मथुरानाथ भट्ट	३-७५
कर्णामृतप्रपा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	२-२५
पदार्थरत्नमंजूषा	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य प्रस्तावना — श्रीदलसुख मालवणिया	३-७५
त्रिपुराभारती लघुस्तव	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	३-२५
प्राकृतानन्द	,, ,, ,, ,,	४-२५
इंद्रप्रस्थ प्रबन्ध	डॉ. दशरथ शर्मा	२-२५
एकाक्षर नाम कोश संग्रह	पन्यासप्रवर मुनि रमणीकविजय	९-००
वासवदत्ता कथा	जे. एम. शुक्ल	४-५०
वृत्तमौक्तिक	मु. विनयसागर	१८-२५
चांद्रव्याकरण	पं. बेचरदास दोशी	७-००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित वि. डी. । ५५१ । ६७ । ३१४३ । बी.

समाचार-पंजीयन (केन्द्रीय) नियम, १९५६ के आठवें नियम (संशोधित) के साथ पठित प्रेस तथा पुस्तक पंजीयन अधिनियम की धारा १९-'डी' की उपधारा 'बी' के अन्तर्गत अपेक्षित 'लोक संस्कृति' नामक समाचार पत्र के सम्बन्धित स्वामित्व और अन्य बातों का ब्योरा.

प्रपत्र ४

[नियम ८ देखें]

१. प्रकाशन का स्थान	रूपायन प्रेस, बोरुन्दा (जोधपुर)
२. प्रकाशन की आवर्तता	मासिक
३. मुद्रक का नाम	विजयदान देथा, सचिव, रूपायन संस्थान
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	बोरुन्दा (जोधपुर)
४. प्रकाशक का नाम	विजयदान देथा, सचिव, रूपायन संस्थान
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	बोरुन्दा (जोधपुर)
५. सम्पादक का नाम	विजयदान एवं कोमल कोठारी
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	बोरुन्दा (जोधपुर)
६. उन व्यक्तियों के नाम और पते जो समाचार पत्र के मालिक और कुल चुकता पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक हिस्सेदार या भागीदार हैं.	रूपायन संस्थान, बोरुन्दा, सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट के तहत रजिस्टर्ड/संख्या ३५/१९६५-६६

मैं, विजयदान, घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सही हैं ।

विजयदान देथा

प्रकाशक

दिनांक : १ मार्च, १९६६

लोक संस्कृति

के सजिल्द तेरह अंक

[दिसंबर, ६७ से दिसंबर, ६८ तक]

राजस्थान की विभिन्न लोक-साहित्यात्मक एवं लोक-कलात्मक विधाओं पर लोक संस्कृति का प्रकाशन किया जा रहा है।

यह मासिक पत्र रूपायन संस्थान द्वारा गत आठ वर्षों से प्रकाशित किया जा रहा है। नवम्बर, ६७ तक इस पत्र का नाम वाणी था और केवल लोक-कथाओं का प्रकाशन किया जा रहा था। दिसंबर, ६७ से इसका नाम एवं स्वरूप परिवर्तित कर दिया गया।

लोक वार्ता के विद्वानों, विषय पर कार्य करने वाली संस्थाओं एवं विशेषकर लोक-कथाओं के अध्येताओं के लिए लोक संस्कृति के पिछले अंक (दिसंबर, ६७ से दिसंबर, ६८ तक) सजिल्द तैयार कर दिये गये हैं।

कम ही प्रतियां शेष हैं। अपने पुस्तकालयों हेतु शीघ्र मंगवायें।

मूल्य : ३० रुपया

डाक पंजियिक संख्या जे. ५६४

रूपायन संस्थान के प्रकाशन

लोक कथा

१. बातां री फुलवाड़ी [नौ भाग प्रकाशित]
वीस भागों में संपूर्ण करने की योजना

प्रति भाग १५. ०० रुपया

२. तीडोराव [बड़ी लोक कथा पर आधारित लोक उपन्यास]

प्रति पुस्तक १. ५० रुपया

३. नाहर सिंह—बछराज सिंह [तीन कथाओं का छोटा संग्रह]

प्रति पुस्तक २. ०० रुपया

४. अनोखा पेड़ [हिन्दी में लिखित पशु-पक्षी संबंधी कथाएं]

प्रति पुस्तक ६. ७५ रुपये

राजस्थानी कविता

५. राधा [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपया

६. दीवा कांपै क्यूं [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

७. चेत मांनखा [रेवत दान द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक ४ रुपया

अनुवाद

८. बाम्बी [वाल्ट डिज़्ने का राजस्थानी अनुवाद]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

विवेचन

९. राजस्थान का लोक साहित्य [नानूराम संस्कर्ता द्वारा लिखित]

प्रति पुस्तक १५. ०० रुपये


अप्रेल ६१
लोकसंस्कृति

अनुक्रम

वर्ष ८ अप्रेल, १९६६ अंक १०

कथा, गीत, गाथा, कहावत, मुहावरा,
धर्म, देवी-देवता, त्यौहार, नाट्य, चित्र,
मूर्ति आदि लोकात्मक कलाओं का मासिक पत्र

लोक संस्कृति

संपादक

कोमल कोठारी, विजयदान देथा

रूपायन संस्थान बोरून्दा

संपादकीय

हंगरी में लोकसंगीत का अध्ययन

लोकगीतों के भाव-पक्ष, काव्य-पक्ष, भाषा-पक्ष एवं सामाजिक-पक्ष पर अनेक अध्ययन हमारे सामने आये हैं। किन्तु लोक गीतों के संगीत-पक्ष पर निश्चय ही बहुत कम कार्य हुआ है।

यह सही है कि भारतीय लोक साहित्य के विवेचनात्मक ग्रंथों में लोक संगीत पर एकाध अध्याय अवश्य होता है। कुछ उत्साही विद्वानों ने लोक वाद्यों का वर्णन भी किया है। किंतु ये विवरण न केवल अधूरे एवं अपूर्ण हैं अपितु साथ ही साथ, अनजाने ही गलत निर्णयों पर भी आधारित हैं। अर्थात अधिकांश लोक गीतों के अध्येताओं ने भारत के शास्त्रीय संगीत की शब्दावली का ज्यों का त्यों आरोपण लोक संगीत पर कर दिया है। कहीं राग को ढूंढ़ा है तो कहीं ताल को ढूंढ़ा है। उन्हीं सीमाओं में लोक संगीत को प्रतिबन्धित करने का भी प्रयास किया है। ऐसे अध्ययन प्रस्तुत करते समय कुछ ही विशिष्ट गीतों को अपनी सांगीतिक मान्यता का आधार भी बना लिया गया है। परिणाम-स्वरूप वे सीमित निर्णय असीमित लोक संगीत की व्याख्या देने में शिथिल एवं असमर्थ ही सिद्ध हो जाते हैं। यही हाल लोकवाद्यों के विवरणों में भी मिलता है।

इस बात से कोई इन्कार नहीं करेगा कि लोकगीतों का संगीतात्मक अध्ययन एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है और अब वह समय आ गया है जब इस विषय पर एक 'डायलोग' प्रारंभ किया जाय।

इस पृष्ठ भूमि में लोक संगीत के विश्व विख्यात अध्येता बेला बारतोक एवं उनकी शिष्य

परंपरा द्वारा किये गये विशिष्ट कार्यों को देखना संभवतया लाभदायी होगा। बेला बारतोक एक हंगेरियन नागरिक थे और दूसरे विश्व-युद्ध के पूर्व अमरीका में रहने लग गये थे। इन्हीं के एक साथी जोल्तान कोदाई हंगरी में ही कार्य करते रहे। इन दोनों ही लोक संगीत के विद्वानों ने लोकगीतों को अपनी पूर्णता में समझने का उपक्रम किया।

सबसे पहिले उन्हें जिस प्रश्न का सामना करना पड़ा, वह था उन विद्वानों का कार्य जो लोक गीतों को सुदूर भूतकाल के ध्वंस अवशेष के रूप में देखता था अथवा उन्हें किसी प्राग-ऐतिहासिक काल के निःशेष जन्तु के समान समझकर उसकी शव-परीक्षा में तल्लीन हो जाता था। वस्तुतः यह धारणा ही गलत थी। क्योंकि लोक गीत भूतकाल के अवशेष तथ्य नहीं है, वह जीवन की वर्तमान अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के ठीक उतने ही महत्वपूर्ण सत्व हैं जो आधुनिक जीवन-शैली को नियमित एवं प्रेरित किया करते हैं। हमारे देश में भी एक बड़ा समुदाय लोक गीतों को भूतकालिक प्रक्रिया ही मानकर संतोष कर लेता है। इस धारणा के विरुद्ध बारतोक एव कोदाई ने गांवों में जाकर संग्रह-कार्य प्रारंभ किया और गीतों का संगीतात्मक अध्ययन एवं उनके वर्गीकरण का क्रम हाथ में लिया। उनका प्रथम निर्णय था कि लोक गीतों की स्वरलिपि करते समय उन्हें एक ही विशिष्ट स्वर स्थान पर कायम करना चाहिए। दूसरा निर्णय था कि उपयोग में लिए गये स्वरों की संख्या एवं उनके क्रम के अनुसार उन्हें वर्गीकृत किया जाय। तीसरा निर्णय था कि गीत की छन्दोगत व्यवस्था को स्थिर किया जाय अर्थात् उसके चरण एवं पद का स्वरूप निर्धारित किया जाय। इन तीनों ही स्थितियों के आधार पर गीतों को तैयार कर लेने पर समान गीतों एवं समान धुनों का रूप निखर कर सामने आ सकता है। इसी विधि से प्रत्येक गीत को संगीतात्मक रूप से सहज ही पृथक पृथक वर्गीकृत श्रेणियों में विभक्त भी किया जा सकता है।

इस प्रारंभिक आधार को प्राप्त करने के पश्चात स्वयं बेला बारतोक एवं जोल्तान कोदाई ने अपने सांगीतिक अध्ययन को विकसित करने का प्रयत्न नहीं छोड़ा। ज्यों ज्यों नई समस्याएं उपस्थित होती गईं, उन्हें सांगीतिक वर्गीकरण की वैज्ञानिक धारणा में जोड़ते गये। सांगीतिक एवं भाषा-वैज्ञानिक नियमों के अनुसार तो प्रथम प्रयास किया था और उसके पश्चात छन्द एवं लय को भी उन्होंने आधार बनाया। कोदाई ने लय के आधार को छोड़ कर धुन को महत्वपूर्ण सिद्ध किया। लयात्मक आधार के विभाजन से स्वरोगत वैभिन्य स्पष्ट नहीं बन पाता था। किन्तु अपने सभी प्रयासों में लोकगीतों की छान्दिक प्रवृत्ति को उन्होंने कभी नजर-अन्दाज नहीं किया।

बारतोक एवं कोदाई की परम्परा में ही कार्य करने वाले हंगरी के निवासी रुदोल्फ वीग

मार्च १९६९ में हमारे गांव (बोरुन्दा) आये और उन्होंने लगभग १५ दिन तक यहां कार्य किया। टेप-रेकॉर्ड लाईब्रेरी की आवश्यकता के अनुसार लगभग ६० गीतों की अनुक्रमणिका तैयार की।

वीग का मुख्य कार्य क्षेत्र लोक संगीत है। गत वर्ष भी वे भारत आये थे और तब उनका विषय जिप्सी संगीत का भारतीय लोक संगीत के साथ तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन करना था। इस वर्ष उनका प्रयोजन एवं लक्ष्य भारतीय लोक संगीत का स्वतंत्र अध्ययन करना है। वीग रूदोल्फ के संपर्क ने उन तथ्यों को निश्चय ही हमारे सामने महत्वपूर्ण सिद्ध किया जो एक ओर शुद्ध संगीत की समस्याओं से संबंधित हैं दूसरी ओर वे हमें उस मार्ग की ओर भी अग्रसर कर सके जो उनके देश की राष्ट्रीय लोक संगीत अकादमी ने अपने अध्ययन के लिए तय किया है।

वीग की दोनों यात्राएं रूपायन संस्थान के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं और हमने तय किया है कि इसी वर्ष वीग एवं हम मिल कर एक लोक संगीत की पुस्तक प्रकाशित करें। इस तरह के विचारों के आदान-प्रदान एवं दोनों देशों के कार्य करने की शैलियों की जानकारी ने निश्चय ही नये आयाम स्थापित करने में एक हद तक सफलता प्राप्त की है।



सच्ची वार्ता

तो रामजी भले दिन दें — मोटा टीला, टीले तले ढानी। जहां रहती चींटी कानी। पीती समुद्र का पानी। जिसको मिला अंधा ओठी। बनी बात भाग से खोटी। चींटी ब्याई, ऊंट लाई। चींटी ब्याई खड़ी खड़ी। जी गई पड़ी पड़ी। ऊंट की टूटी कमर। इस कारण ऊंट से न चला जाय, न उठा जाय। उसने तो एक जगह बैठे बैठे ही चरने की युक्ति विचारी। चारों दिशाओं में गरदन घुमा घुमा कर चारे की खोज करनी चाही। गर्मी की बयार ने उसे अचिन्त्य सौरभ का समाचार दिया। बिल्ली के भाग्य का छींका टूटा। मण्डोवर के बेजोड़ बाग की सौरभ पवन के रेशों पर भूमती हुई ठेट बीकानेर के टीबों में अपनी महक छितरा रही थी। ऊंट ने सौरभ के चार गहरे सांस खींचे और मस्त हो गया। मस्ती मस्ती में मण्डोवर के बगीचे की टोह में सौरभ के आकाशी मार्ग में अपनी गरदन बढ़ाने लगा। सनसनाती गरदन बढ़ती ही गई। जैसे अम्बर से तारा टूटा। बगीचे के वनमाली को ढलती रात, सौरभ के नशे और ठंडी हवा से नींद आ जाया करती। उस समय वह ऊंट बीकानेर से अपनी गरदन को फटकारा देता और सैकड़ों मील दूर बैठा ही रोज मण्डोवर की सुरंगी बाड़ी चर जाता। वनमाली बहुत सावधानी से रखवाली रखता पर चोर का तो न खड़का हुआ, न खोज मिली। राजा की खोज की डर से उसका प्राण अपनी जगह छोड़ने लगा। अब करे तो क्या करे? यह चोर है कि कोई भूत-पलीत! कोई मनुष्य का जाया तो इन ऊंची दीवारों और दरवाजों को लांघ कर अन्दर आना तो दूर, बगीचे के भीतर भांक भी नहीं सकता। सूरज भी बहुत देर तपता है तब कहीं इस बाड़ी की भांकी ले सकता है। पर अब इस चोर को कैसे पकड़ा जाय? राजाजी को पता चल गया तो राम जाने तेली की घानी में पिलाएंगे या तेल के उबलते कड़ाहों में पटकेंगे या जमीन में आधा गाड़ कर कुत्तों से नुचवाएंगे या शेर के पिंजरे में छोड़ेंगे अथवा सांप-बिच्छुओं के तहखाने में गिराएंगे या मतवाले हाथी

के पैरों नीचे कुचलाएंगे या गले में फांसी डाल कर मारेंगे। पता चलते ही मरना तो निश्चित है, पर मौत का रूप क्या होगा—इस सोच में वनमाली तो आधा पागल होगया। मण्डोवर की यह सुरंगी बाड़ी तो दुनिया में प्रसिद्ध है। राजाजी इसे अपने प्राणों के समान मानते हैं। इस प्रकार के उजाड़ का उन्हें इशारा भी हो गया तो फिर मानो यमराज ही रूठा है।

बाड़ी में न होने जैसे फल, अनहोने फूल और अनुपम वृक्ष शोभा बढ़ाते थे। नवरंगी नारंगी, आम, अंगूर, जामुन, जामफल, सीताफल, केले, दाड़िम, सेव, इरंड ककड़ी, बादाम, पिस्ते, खिरनी, खजूर, गूंदी, पीलू, आंवला, अखरोट, बेर, कदम्ब, नींबू, सुपारी, इलायची, गूगल, चन्दन, चंपा, केवड़ा, केतकी, मोगरा, जूही, कमल, गुलाब, रातरानी, कणेर, गुलमोहर, मरवा, तुलसी, केसर, नागकेसर, चमेली इत्यादि सब प्रकार की सुरंगी वनस्पतियों के अनोखे ठाट थे। बाड़ी में जगह जगह कल-कल करते झरने और लहराते निर्मल सरोवर शोभायमान थे। तरह तरह के मनमोहक सुन्दर पंछी केलि करते थे—हंस, कलहंस, राजहंस, सारस, बगुले, तोते, मोर, कोयल, कबूतर, कमेड़ी, टींटोड़ी, तीतर, तिलोर, बाटबड़, मैना, मुर्गा, फूंदी, भंवरें, लक्कड़-फुड़वे, शकुन चिड़ियां, कावर, कोचर, घुग्घु, क्रौंच, जलकौवा, बटेर, सोनचिड़ी इत्यादि सारे पंछी मीठे बोल सुनाते थे। पर इस नीच चोर ने तो बाड़ी की शोभा का जैसे एकदम मठ ही मार दिया। वनमाली पागल हुआ आठों पहर बाड़ी के चक्कर लगाता रहता पर चोर का तो निशान भी नहीं मिलता। बाग भर में खोज कहीं नहीं और चोरी होने का नियम कभी टलता नहीं। चोर भी फल फूल और पत्ते, सब साथ में ही सूंत लेता। देखते देखते सुरंगी बाड़ी उजाड़ दिखने लगी। बाड़ी का यह रंग ढंग देख कर वनमाली का शरीर सूखने लगा। मौत के पहले ही उसे मौत आने लगी और जब उसे इस बात का पता चला कि कल कश्मीर के महाराजा के साथ खुद अन्नदाता बाड़ी देखने को आयेंगे तो उसका तो मानों अंश ही निकल गया।

और अन्नदाता तो निश्चित समय पर कश्मीर राजाजी के साथ बाग देखने के लिए पधारे। इधर बाग की फाटक में राजाजी का पैर रखना हुआ और उधर वनमाली तो चक्कर खाकर जमीन पर गिर पड़ा।

राजाजी ने इस उजड़े बाग का रूप देखा तो देखते ही रह गए। सुरंगी बाड़ी का यह क्या खाका बन गया? किस गर्व के साथ वे कश्मीर के महाराजा को साथ लाए थे और बाग में आते ही यह क्या गति हुई? वनमाली

नालायक ने घात की ? राजाजी की आंखें अंगारों की तरह जलने लगीं । क्रोध के कारण नाक में से धुंआ निकलने लगा । राजाजी दांत किटकिटाते, पैर पटकते बोले — हरामखोर वनमाली ने मेरे बाग की यह क्या गत बनाई है ? शाम तक इसके शरीर को भी ऐसे ही काटना-छूनना पड़ेगा । बहुत दिन हुए इसे नमकहरामी करते !

राजाजी की खीझ सुनते ही वनमाली जमीन पर पड़ा पड़ा ही रोया— अन्नदाता, इसमें मेरा कोई कसूर नहीं है । दिन रात जागते रह कर चक्कर काटता हूं तो भी चोर का पता नहीं लगता । राज की बाड़ी में अवश्य ही भूतों का फेरा हो गया है । मुझे आपकी जैसी इच्छा हो वैसे काटो, तराशो ; पर एक बार चोर का पता लगा लूं तो मरने पर मुक्ति मिलेगी ।

राजाजी ने भी सोचा कि इस प्रकार बाड़ी को सूंतना तो चोरों के वश की बात नहीं है । इसमें कुछ न कुछ रहस्य अवश्य है । इस वनमाली ने आज से पहले कभी गल्ती नहीं की । बिचारे के वश उपरान्त कोई रचना हो गई हो ! इसे मारने के बाद भी नुकसान होना नहीं रुका तो फिर क्या उपाय होगा ? एक बार असलियत की थाह तो लेनी चाहिए । उन्होंने आदेश दिया — यदि आज से तीसरी रात चोर का पता नहीं चला तो तू याद रखे जैसी होगी । सच्ची बात प्रगट करने का यही मौका है ।

वनमाली ने सुनते ही यह बात मंजूर करली । सौ मन धान की मुट्ठी बानगी । कश्मीर के महाराजा ने उजड़ी हुई बाड़ी को देख कर ही अन्दाज लगा लिया कि यह बाड़ी कैसी शानदार थी ।

राजाजी बाड़ी से वापिस लौटे तो वनमाली भी घुटनों पर हाथ टेक कर बड़ी मुश्किल से खड़ा हुआ । मन में सोचने लगा कि यदि तीन दिनों में चोर का पता लग गया तो अपने हाथों लगाए हुए सुरंगे बाग को जिन्दगी भर बड़े प्यार-चाव से निरख लूंगा और यदि चोर का पता नहीं लगा तो ये वृक्ष, ये फल, ये फूल और ये सारे पंछी मेरे लिए लोप हो जायेंगे । वनमाली को आज पहली बार इस बात का पता चला कि आंखों से बाग की सुन्दर छबि निरखना और कानों से पंछियों के मीठे बोल सुनना कितना अमूल्य होता है ।

वनमाली ने मन में निश्चय किया कि वह तीन दिन और तीन रात आंखों में नींद नहीं घुलने देगा । अपने बच्चों को घर भेज कर उसने सकोरे में थोड़ी महीन पीसी हुई मिर्चें मंगवाईं । दोनों वक्त का खाना उसने बाड़ी में ही लाने का आदेश दिया । समाचार मिलते ही मालिन खुद एक दीवट में पिसी

हुई मिर्चें लाई। साथ में नाश्ते के लिए एक बड़ी थैली में सिकी हुई तिल्ली और तिल के लड्डू भरे हुए थे।

थैली खोल कर वनमाली ने पूछा—नाश्ते के लिए आज सिर्फ तिल के लड्डू ही लाई, और कुछ नहीं ?

मालिन ने कहा—आपको बाड़ी के सिवाय इस दुनिया का और भी कुछ ध्यान है या नहीं ? आज मकर संक्रान्ति के कारण केवल तिल के लड्डू और सिके हुए तिल लाई हूं। खाकर तो देखो कैसे बढ़िया बने हैं लड्डू !

वनमाली ने कहा—तिल के लड्डुओं के बढ़िया स्वाद से पहले आंखों को पिसी हुई मिर्चों का स्वाद चखा दूं तब शायद तीन दिन बाद भी जीना संभव हो सकता है। तीसरे दिन बाड़ी का चोर नहीं पकड़ा गया तो राजाजी बुरी हालत कर के मौत से गलबांही करा देंगे। मुझे तो इसलिए तेरे लड्डुओं से भी अधिक स्वाद इन पिसी हुई मिर्चों में लगता है। एक एक घड़ी बाद आज दोनों आंखों में मिर्चों का काजल डालूंगा, जिससे नींद मेरे नजदीक न आकर बाड़ी के परकोटे के बाहर ही तड़फती रहे। मुझे सोलह आने उम्मीद है कि ये मिर्चें अवश्य चोर का पता लगवाएंगी। तू रोज दोनों वक्त मेरे लिए अपने हाथों नाश्ता लाया करना। नाश्ता लाने के बाद भी तू यहां बाड़ी में चोर की टोह में मेरे साथ रहना। बाड़ी में यह सारा काण्ड रात के पिछले पहर में होता है। उस समय पूरी सावधानी रखनी पड़ेगी। किसी दूसरे पर भरोसा नहीं किया जा सकता। चोर का पता चलने पर मैं अगर इधर उधर उसका पीछा करने चला जाऊं तो तू पीछे से राजाजी को सच्ची बात तो बता सकती है।

मालिन ने तो तुरन्त कहते ही सारी बात मानली। माली ने लड्डुओं का भोग लगाने से पहले अंगुली भर कर हिंगलू के रंग की लाल सुर्ख मिर्च अपनी आंखों में आंज ली। आंखों में बेहद जलन हुई परन्तु मौत के विचार के सामने तो यह जलन भी ठंडी लगी।

मालिन ने कहा—अभी तो रात बहुत दूर है, अभी से क्यों फालतू आंखें जलाते हो।

वनमाली ने आंखें बंद रखे ही उत्तर दिया—समय से पहले चार पांच बार मिर्चों का सुरमा आंज लूं तो आंखों को पहले से ही आदत पड़ जायेगी। एक बार तो यह जलन होनी ही है। इस उजड़ी हुई बाड़ी को देखकर राजाजी को जैसा क्रोध आया, तुझे उसका अन्दाज नहीं है। जगमगाती आंखों की वह खीज मैंने देखी है, इसलिए उस खीज का डर मैं ही जानता हूं।

दोनों लोग-लुगाई ठीक जाड़े का विचार करते, बाड़ी की रखवाली करने लगे। लड्डुओं की थैली वनमाली की कमर में बंधी थी। बाड़ी के चारों कोनों में चक्कर काटते काटते वे चोर को पकड़ने को युक्ति बिठाने लगे।

दिन ढलने के बाद वे एक दम चौकन्ने हो गए। दसवीं की चांदनी का हल्का प्रकाश था। वनमाली की जब भी इच्छा होती वह दीवट से अंगुली भर कर आंखों में पिसी हुई मिर्चें आज लेता। मौन से अधिक मौत का डर बहुत दुखदाई होता है।

रात आधी के करीब ढली थी कि मालिन को अचानक परकोटे की दीवार के ऊपर से कोई चीज अन्दर घुसती नजर आई। उसने अपने पति को धीरे से हाथ का इशारा करके कहा—देखो, दीवार के ऊपर होकर मुझे यह क्या कौतुक दिखाई दे रहा है?

मालिन के कहते ही उसने झिझक कर उस तरफ देखा—दीवार के ऊपर होकर उसे कोई काली-सी चीज आगे बढ़ती नजर आई। फिर वह तो रेंगती हुई आगे बढ़ती ही गई। हे राम! यह क्या अनहोनी रचना है? यह तो निश्चय कोई प्रेत लीला है। वनमाली थर थर कांपने लगा। पर कांपते हुए भी उसने अपनी नजर नहीं हटाई।

आखों की दृष्टि के बराबर वह चीज तो बाड़ी के पेड़ों को बगड़ बगड़ खाने लगी। थोड़े थोडे फूल, फल और पत्तों में मुंह डाल कर वह चीज तो आगे इधर उधर बढ़ती ही जा रही है।

मालिन ने कहा—यह तो ऊंट की गरदन जैसी कोई चीज दिखाई देती है।

वनमाली ने कहा—ऊंट की गरदन जैसी क्या, यह तो सचमुच ऊंट की गरदन ही है। ऊंट के दूसरे अंगों का तो पता नहीं, पर दीवार के ऊपर होकर बढ़ती हुई यह गरदन तो बाड़ी के चारों कोनों में ऊपर नीचे सब जगह फिर गई। खाया कम और उजाड़ ज्यादा कर गई।

मालिन निसांस फेंकती हुई बोली—यह कोई गरदन है कि बजराक! सौ ऊंटों की गरदनें जोड़ें तो भी इस तरह लम्बी नहीं हो सकती। जब इसकी गरदन का यह नाप है तो फिर उसके शरीर का क्या हाल होगा! यह तो अवश्य किसी भूत की माया है, शंकर भगवान का नाम लेओ जिससे यह हमारा नुकसान नहीं कर सके।

ऊंट तो अपने चरने में मस्त था। उसने उन दोनों की फुसफुसाहट को

सुना ही नहीं। तरह तरह के फलों में मुंह मार कर वह पकी हुई गूंदियां बगड़ बगड़ खाने लगा। वनमाली ने मन में सोचा—यदि चोर को ठीक तरह नहीं पकड़ूं तो राजाजी के फरमान से मौत है और यदि मायावी ऊंट को छेड़ूं तो साक्षात इस यमराज के हाथों मौत है। हर सूरत में मरने का सरंजाम पूरा है। पर डंड पाकर मरने से, करतब करके मरना ज्यादा ठीक है। वह धीरे धीरे चलता हुआ चुपचाप गूंदी की डाल पर चढ़ गया। मालिन ने रोकने की कोशिश की तो भी नहीं माना। ऊंट की गरदन पास आते ही उसने तुरन्त उसे भुजाओं में भर लिया। स्पर्श पाकर गरदन चमकी और चमकने के साथ ही वह सिमटने लगी। वनमाली ने मजबूत कंची-पकड़ मार रखी थी। वह खुद लटकता हुआ गरदन के साथ चलने लगा। मालिन ने चिल्लाना शुरू किया—भूत, भूत! अरे, मेरे आदमी को भूत ले जा रहा है........

शोर सुनते ही महल के रखवाले बाड़ी में भागे आए। उनको भी थोड़ी बहुत लटकते हुए वनमाली की झलक दिखाई दी। फिर मालिन ने तो रोना-पीटना मचाया सो रुकी ही नहीं।

महल के बगल में शोरगुल सुना तो राजाजी भी चिन्तासहित बाड़ी में आये। मालिन ने विलाप करते हुए हाथ जोड़ कर कहा—अन्नदाता, मेरा आदमी तो गरदन के साथ लटकता हुआ चला गया, अब भूत उसे मारे बिना नहीं छोड़ेगा। हाय, मेरे बच्चों का क्या हाल होगा।

राजाजी ने धीरज बधाकर उससे सारी बात पूछी। उसने विगतवार सारी बात बताई। बात राजाजी के मानने में नहीं आई। पर रखवालों ने लटकते हुए माली की झलक दिखने की बात कही तो राजाजी को भी मानना पड़ा। फिर उन्होंने कहा—ऊंट, बाड़ी के परकोटे से थोड़ा दूर होगा, उसके खोज देखो। माली यहीं कहीं पड़ा मिलेगा। ऊंट कोई सौ कोस दूर तो जाने से रहा।

मालिन ने रोते रोते कहा—अन्नदाता, सचमुच के ऊंट की गरदन तो दीवार के आधे तक भी नहीं पहुंचती, पर यह गरदन तो रेंगती हुई बाड़ी के इस कोने से उस कोने तक घूमती थी। यह तो अवश्य किसी भूत-पलीत की माया है।

राजाजी के भी यह बात पूरी तरह जंच गई थी पर उन्होंने प्रकट नहीं होने दी। कहा—बाड़ी के चारों कोनों में ठीक से ढूंढ़ो, माली कहीं नहीं जा सकता।

पर राजाजी के मुंह से ये बोल निकलने से पहले ही बाड़ी का वनमाली

तो ठेट बीकानेर की सीमा में, जहां कमर टूटा हुआ ऊंट बैठा था, वहां चांद-सूरज की किरणों के वेग से धड़ाम करके जा गिरा। रेत के टीबों में दो-एक गुलाचें खाकर धूल झाड़ता हुआ उठ खड़ा हुआ। पट्ठे ऊंट ने तो कमाल कर दिया। गरदन से लटकते हुए पागल की तरह उसने सोचा कि यह क्या हुआ? इतने में तो टूटते तारे के वेग से, वह देखते ही देखते, सूं सूं करता, मण्डोवर से बीकानेर आ पहुंचा! पर तीन दीनों में राजाजी को इस बात का समाचार कैसे दिया जाय! मालिन शायद बात करेगी, पर असम्भव बात पर कौन विश्वास करेगा? वह टीले पर बैठ कर निश्चिन्त मन से कोई युक्ति विचारने लगा।

और उधर वनमाली के स्पर्श से चमक कर ऊंट के बच्चे ने अपनी गरदन तो समेटली परन्तु उसका पेट पूरी तरह भरा नहीं। उसने तो टीबे पर बैठे वनमाली के देखते देखते फिर अपनी गरदन बढ़ानी शुरू कर दी। बाड़ी की रसालों का शौकीन वह सीधा उसी गूंदी में बगड़ बगड़ मुंह मारने लगा। रखवाले और राजाजी, सब ने प्रत्यक्ष अपनी आंखों से यह लीला देखी। मालिन फिर चिल्लाई: अन्नदाता, बिल्कुल यही गरदन थी। अपने आदमी की खोज आखिर मुझे ही करनी पड़ेगी!

यह कहकर वह वनमाली के ही समान उसी तरह गूंदी की डाली पर चढ़ी और झट गरदन में बांहें डाल कर लटक गई। स्पर्श होते ही गरदन चमकी और मालिन तो सबके देखते देखते दीवार लांघ कर सचमुच अदृश्य हो गई।

सब लोगों ने बाड़ी में खड़े खड़े ही शोर मचाया—पकड़ो, पकड़ो! तब तक तो मालिन उसी टीबे पर माली की बगल में आकर खड़ी हो गई जैसे विमान से नीचे उतरी हो। वनमाली बैठे बैठे विचार कर रहा था कि मेरे बिछुड़ने से मालिन की क्या गति हुई होगी कि मालिन तो साक्षात सामने ही आ खड़ी हुई। वनमाली ने अचरज के साथ पूछा—तू यहां?

मालिन ने थोड़ा डरते, थोड़ा मुस्कराते हुए जबाब दिया—जहां आप वहां मैं! आज तो जोरदार सैल हुई।

माली ने पूछा— तुझे पता है हम कहां आगए हैं? मालिन ने कहा—यहीं दस बीस खेत दूर—कोई हिमालय तो लांघने से रहे।

माली ने कहा—पागल हुई है क्या? अभी हम बीकानेर के टीलों पर बैठे हैं। मैं तो सारे देशों की धरती बिना देखे ही पहचानता हूं। माली का बेटा हूं, धूल और बूंटी देख कर धरती का पता लगालूं। तू भी जाति की मालिन है, दिन उगने पर तुझे भी पता चल जायेगा कि हम बीकानेर की सीमा पर खड़े हैं।

बात सुनते ही मालिन की तो आश्चर्य से आंखें फटी रह गईं। हे राम, यह क्या खिलका हुआ ! अब कैसे इस माया से फन्दा कटेगा ! यह जादूगर ऊंट और क्या खेल दिखायेगा ! यह कोई यमदूत है कि कोई भूत-पलीत ? मालिन इस प्रकार मन में कलप रही थी कि माली ने कहा—अब फिक्र करने से क्या बनता-बिगड़ता है ! बनी सो भाग की।

दोनों मरद लुगाई, उस कमर टूटे हुए ऊंट को वहीं बैठा छोड़ कर अपने मार्ग चलने लगे। मार्ग में चलते जाते और डरते जाते कि कहीं ऊंट कौतुक करके उनका पीछा तो नहीं कर रहा है। लेकिन ऊंट तो अपनी जगह से हिला ही नहीं; दसेक खेत दूर जाने के बाद कहीं जी में जी आया। प्राण बचने की खुशी में वे हर्ष मनाते जल्दी जल्दी अपनी राह चलने लगे।

सारी रात वे मार्ग चलते रहे। सवेरे उनको राह में एक बावड़ी दिखाई दी। ऊपर वट वृक्ष की घनी छाया। उन्होंने विश्राम करने की सोची। वनमाली की कमर में तिल के लड्डुओं की थैली बंधी थी। दोनों को जोर की भूख लगी। बावड़ी की पाज पर दोनों निश्चिन्त होकर बैठे और लड्डुओं की थैली खोल कर लड्डू खाने लगे। खाते खाते तिल्ली के थोड़े दाने बावड़ी में गिर गए। दानों का अन्दर गिरना हुआ कि बावड़ी के तले में से सरर सरर करते तिलों के पौधे ऊंचे उठने लगे और देखते देखते बावड़ी से दो बांस ऊपर निकल गए।

तिलों के कोमल कोमल पत्तों और नीली सांगरियों की तो जैसे गहगहाट मच गई। और देखते देखते नीले पत्ते पीले पड़ कर झड़ने लगे। सांगरियां पीली-पीली पड़कर तिड़कने लगीं। इसी बीच ऐसा संयोग हुआ कि एक प्यासा मतवाला हाथी बावड़ी पर आया। काले बादल की तरह वह दौड़ता चिंघाड़ता आया और सीढ़ी सीढ़ी उतर कर उसने भर पेट पानी पिया। पानी पीने के बाद उसे मस्ती सूझी। पाज पर खड़े होकर तिलों के झाड़ों से वह अपना शरीर रगड़ने लगा।

इधर पूरे जोर से हाथी का खसना हुआ और उधर भरनाटी खाता एक जबरदस्त वात्चक्र आया। वात्चक्र के बवण्डर ने तिलों के झाड़ों को अपनी झपेट में ले लिया। फिर क्या पूछना। हाथी के खसने और वात्चक्र की झपट से बावड़ी में सफेद तिलों की जैसे वर्षा ही उमड़ पड़ी। खिरती हुई तिल्ली की आवाज सुनी तो दोनों मरद लुगाई वहां से भागे और पचास कदम दूर वे खिरनी की छाया में जा खड़े हुए।

और मतवाला हाथी तो अपनी मस्ती में खसता ही गया। बावड़ी तो

तिल्ली से भर गई सो भर ही गई पर दो बांस ऊपर तक तिल्ली का ढेर लग गया। पाज पर खड़ा हाथी भी तिल्ली के नीचे दब गया।

सारी तिल्ली झड़ते ही जोर से हवा छूटी। तिल्ली के झाड़ गरणाटी चढ़ गए और बावड़ी के भीतर को तिल्ली पेरी जाने लगी।

यह क्या ! बावड़ी का तेल तो बाहर आने लगा। हाथी की रोक से एक तरफ तिल्ली का ढेर, था जैसा ही पड़ा रहा, पर तीनों ओर से तो तेल का जैसे नाला ही खुल गया।

पानी भरने का समय हुआ तो पनिहारिनों का झुण्ड, सिर पर घड़े उठाए पानी लेने के लिए आने लगा। पर आज पानी की जगह बाहर तक बहते हुए तेल को देखते ही वे खुशी में पागल हो गईं। सोने की अंगूठी के समान सफेद तिल्ली का तेल; और वह भी अखूट ! ले जाने वाला थक जाय पर तेल नहीं रीते ! फिर कौन खुश नहीं होता !

आस पास के लोग तेल के घड़े और कुंडियां भरने के लिए ऐसे उमड़े कि बात छोड़ो। बावड़ी बनने के बाद भी ऐसा जबरदस्त मेला तो कभी नहीं मचा होगा। घर घर में तेल के बड़े बड़े घड़े भर गये तब जाकर लोगों का मेला रुका। वनमाली और मालिन ने यह खेल देखा तो देखते ही रह गए। एक पाज पर हाथी तिल्ली से ढंका हुआ पड़ा था और बाकी चारों ओर तेल के परनाले बह रहे थे। लोगों का मन भर गया तो भी तेल का नाला बन्द नहीं हुआ।

थोड़ी देर बाद एक मल्ल झूमता हुआ उसी बावड़ी पर आया। प्यास के कारण उसके कण्ठ सूख रहे थे। बावड़ी के पास आते ही उसने पानी की जगह तेल बहता हुआ देखा। पर प्यास के कारण वह तो तेल और पानी का भेद ही भूल गया। मुंह टेक कर तेल की चुस्की इस प्रकार खींचनी शुरू की कि देखते देखते बावड़ी का तेल पेंदें में बैठ गया। तीन चार डकारें लेकर वह खड़ा हुआ। खड़े होते ही उसे पाज पर तिल्ली का ढेर दिखाई दिया। उसने अपने कन्धे से चद्दर उतार कर उसमें सारा ढेर बुहारना शुरू कर दिया। सौ मन तिल्ली की पोटली बांध कर उसने अपने माथे पर उठाली। अपनी अंगुलियों की चिमटी से हाथी को उठा कर उसने अपनी अंटी में ठीक तरह खोंस लिया।

फिर मस्ती से अपने मार्ग पर रवाना हुआ। बड़बड़ करता बोला—पानी की प्यास तो पानी से ही बुझती है। इतना तेल पिया तो भी अभी तक कंठ का सूखना बन्द नहीं हुआ।

वनमाली और मालिन ने भी अपनी नजरों से यह कौतुक देखकर अपना

रास्ता नापा।

मल्ल बड़बड़ाता हुआ कोई बीसेक खेत पार हुआ कि रास्ते में एक झोंपड़ी आई। गवाड़ी का फाटक खोल कर वह अन्दर घुसा तो उसे एक बुढ़िया नीम की छाया में बैठी चरखा कातती नजर आई। वह पास आकर जल्दी मचाता हुआ बोला—बूढ़ी अम्मा, जोर की प्यास लगी है, पानी पिला!

बुढ़िया ने कहा—मैं चरखा कात रही हूं; वह सामने तालाब है, तू खुद अपने हाथ से स्वच्छ कुमोदिनी जैसा ठंडा पानी पीले।

मल्ल ने कहा—मेरे पास बोझा है। थोड़ी तकलीफ तो होगी मां, इतनी महरबानी तू ही करदे।

बुढ़िया चरखा कातती हुई बोली—बोझा है तो मेरे चरखे की तकली में लटका दे। मेरे अभी न उठने की प्रतिज्ञा की हुई है।

मल्ल प्यास के मारे मर रहा था। विवश होकर उसने सिर की पोटली और अंटी में खोंसा हुआ हाथी चरखे की तकली में लटका दिया। फिर डोली होली पानी पीने लगा सो सारा तालाब एकदम खाली सपाट कर दिया।

तालाब खाली करके वह बुढ़िया के पास आकर बोला—पानी तो मैंने अपने हाथों पी लिया, अब बूढ़ी अम्मा चिलम लगालूंगा थोड़ा अंगारा तो दे।

बुढ़िया ने गहरी निश्वास लेकर कहा—बेटा चूल्हे में आग जलाए चार महीने हुए। मेरा बेटा नमक लेने सांभर गया है। बेटे के बिना खाना-पीना अच्छा नहीं लगता। चार महीने हुए कुछ भी खाए पिए और सोए। चार महीनों से इसी जगह बैठी चरखा कात रही हूं। बेटे के आने पर यह जगह छोड़ूंगी।

मल्ल ने कहा—मैं तेरे बेटे से मिलना चाहता हूं। मुझे उसका निशान-पता बता।

बुढ़िया ने कहा—नमक से भरी हुई साढ़े सात बीसी गाड़ियां उसकी कमर से बंधी होंगी। वह गाड़ियां कमर से बांध कर मार्ग में चलता है तब आकाश में धूल के बादल उठते हैं। खुद सूरज भगवान भी मेरे बेटे की शक्ति नहीं सहन कर सकते। उन्हें भी उड़ती धूल के बादलों से अपना मुंह ढांपना पड़ता है।

मल्ल बोला—बुढ़िया अम्मा! तू सच कहती है कि तेरे बेटे का प्रताप खुद सूरज भी नहीं देख सकते, पर मैं अवश्य उसका बल देखना चाहता हूं। मुझ से गोरा उसे पीलिया का रोग! इस धरती पर मुझ से अधिक किसी में शक्ति हो सकती है, यह बात तो मैं सपने में भी नहीं मान सकता।

बुढ़िया ने चरखा कातते हुए कहा—तो बेटा, फिर क्यों देर करता है?

गाल और थप्पड़ के बीच क्या दूरी ? तेरे मन में हौंस हो तो सामने जाकर अजमा ले ।

मल्ल ने कहा––यह बल तो अजमाना ही पड़ेगा । बात सुनते ही मेरे पैरों पर तो जैसे चींटियां चढ़ रही हैं । मेरी भुजाएं कसमसा रही हैं । मैं जाता हूं ।

बुढ़िया के जवाब देने से पहिले ही मल्ल तो वहां से रवाना हो गया । जल्दी जल्दी में फाटक भी बन्द नहीं की । दो दो खेतों के डग भरता वह हचां-हचां चलने लगा । मैदान पार करते ही उसे आकाश में धूल के बादल उठते नजर आये । मन में धीरज हुआ कि जवान आता तो है ! वह उसे अचानक ललकारना चाहता था । मार्ग से टल कर वह आखिरी गाड़ी के पीछे आ गया । साढ़े सात बीसी (१५०) गाड़ियां नमक से छिलाछिल भरी थीं । सारी गाड़ियां वास्तव में उसकी कमर के पीछे बंधी हुई थीं और वह भरणाटा दौड़ रहा था । मल्ल ने अपने बांए पैर का अंगूठा सबसे पिछली गाड़ी पर टिकाया । सारी गाड़ियां चरर करके उसी जगह रुक गईं । कमर के एक मामूली सा झटका लगा । बुढ़िया का बेटा जान गया कि कोई माई का लाल मुझे लल-कारने के लिए संकेत कर रहा है । वह जोर से धाक जमाता हुआ बोला–– ऐसा दो सिर वाला हो तो सामने आ । सियार की मौत आती है तो गांव की तरफ भागता है । कहीं घरवालों से लड़कर तो नहीं आया है ? मुझे इस बात की खुशी है कि इस धरती पर मेरी जोड़ का कोई मल्ल है तो सही ।

मल्ल मुस्कराता हुआ उसके सामने आया । बोला––मैं भी ढूंढ़ ढूंढ़ कर थक गया पर मुझे भी आज से पहले जोड़ी का जवान नहीं मिला । आज मन के अरमान निकालूंगा ।

दोनों जने भुजाएं फटकारते हुए एक दूसरे को ललकारने लगे । उस समय मल्ल ने कहा — हम दोनों कुश्ती तो लड़ते हैं पर हार जीत का साक्षी कौन होगा ? कोई बात ठन गई तो उसका निपटारा कौन करेगा ? पहले किसी को पंच बनालो ।

बुढ़िया के बेटे ने कहा — भाई , बात तो तूने बिल्कुल ठीक कही । पर पंच बनावें तो भी किसको बनावें ? आस पास तो कोई दिखाई तक नहीं देता ! कि इतने में एक राइकानी उन्हें आती दिखाई दी । उसके सिर पर छबड़ी थी । उन दोनों ने उसे पंच बनाना मंजूर किया । पास आते ही बोले— बूढ़ी मां ! हमारा एक झगड़ा तो निपटाती जा ।

राइकानी ने कहा––झगड़ा निपटाऊं उतना समय कहां ? मुझे तो पहले

ही देर हो गई है। मेरा बेटा कभी से मेरी राह देख रहा होगा। मैं उसके लिए छबड़ी में भाता लेकर जा रही हूं। बहू के बीमार होने से पहले ही काफी देरी हो गई!

चरखे वाली बुढ़िया के बेटे ने कहा—हम दोनों कुश्ती लड़ेंगे। हार जीत के लिए हम दोनों ने तुझे पंच बनाया है। समय पर मनुष्य ही मनुष्य के काम आता है।

राइकानी ने कहा — भले आदमियों, तुम्हें तो कुश्ती की पड़ी है और मेरा बेटा कभी का खेत में हल चला रहा है। वह मेरे लिए घड़ी घड़ी गांव की तरफ देख रहा होगा। वह भूख का एकदम कच्चा है। अब तुम कहो जैसा करूं!

मल्ल बोला—बूढ़ी मां, घड़ी दो घड़ी भूखा रहने से उसका शरीर नहीं सूख जायेगा। तुम्हें हमारा यह विवाद तो निपटाना ही पड़ेगा।

राइकानी ने कहा—इतनी बात पज गई है तो मुझे भी पंच बनना पड़ेगा। मुझे भी ठहरना नहीं पड़े और तुम्हारा भी वाद निपटा दूं तो तुम्हें कोई एतराज तो नहीं।

मल्ल ने कहा—तेरी जो मर्जी हो सो कर, पर हमारी हार जीत की साक्षी तू है।

बुढ़िया चलती चलती कहने लगी—मेरे ओडे में राब की हंडिया है। हंडिया पर रखे हुए ढक्कन के किनारे पर खड़े होकर तुम आराम से कुश्ती लड़ो। सूरज भगवान पीठ पीछे हैं जिससे किनारे पर लड़ते हुए तुम दोनों की छाया मैं चलती चलती स्पष्ट देख सकती हूं। छाया देख कर मैं पता चला लूंगी कि कौन गिरा और किसने गिराया!

दोनों पहलवान राइकानी की बात मान गए। बुढ़िया अपने सिर पर ओडी उठा कर चलती थी और मल्ल उछल कर ढक्कन की पाज पर चढ़ गए। चढ़ते ही भुजाएं ठोक कर भिड़ गए। राइकानी के चलने में किसी तरह का विघ्न नहीं पड़ा। ढक्कन के छज्जे पर लड़ते मल्लों की छाया पर दृष्टि गड़ाती वह बेहद तेज चलने लगी। दोनों मल्ल बराबरी के थे। एक दूसरे को पटकने के लिए बहुत दांव पेच लगाते पर किसी का दाव नहीं लगा।

इतने में बुढ़िया का खेत आ गया। खेत के किनारे मां को देखते ही बेटे ने हल चलाना बन्द कर दिया। पास आकर कहने लगा—मेरी तो भूखों मरते पसलियां टूट रही है, आंखों के सामने अंधेरा छा गया है। राह देखते देखते परे-

ध्यान हो गया। आज इतनी देर कैसे कर दी ?

बुढ़िया ने कहा— तेरी बहू की तबियत ठीक नहीं, इसलिए देर हो गई।

फिर वह आंखें ऊंची करती हुई बोली—बच्चों, अब नीचे उतरो। हंडिया से राब निकालनी है।

यह सुनते ही बुढ़िया के बेटे ने भी ऊपर देखा। हंसता हुआ बोला—यह फिर क्या नया कबाड़ा है ? तुझे भी कुछ न कुछ कौतुक किये बगैर चैन नहीं है।

फिर मां ने अपने बेटे को सारी बात विगतबार बताई कि कैसे वह उन मल्लों की हार-जीत देखने के लिए पंच बनी। सारी बात सुनकर उसके बेटे ने कहा —— अब मुझे फुरती से रोटी डाल। इन मल्लों का निपटारा तो मैं कर देता हूं।

यह कह कर उसने दोनों मल्लों को अपनी बांयी बगल के नीचे दबा लिया। मल्ल बिचारों ने तो चूं भी नहीं की। रोटी खाकर उठा तब तक उनको बगल में दबाए रखा। चुल्लू करने के बाद उनको बगल से नीचे पटका। दोनों को ही बेहोशी आ गई। नीचे गिरते ही आंखें खोली। फिर राइकानी का लड़का मसखरी करता बोला—तुम्हारी हार जीत का फैसला हुआ कि नहीं ?

दोनों मल्लों के मुंह में तो जैसे गुड़ दे दिया हो। न बोले न चले। वापिस आंखें बन्द करके चुपचाप सोते रहे। उनके बल का तो जैसे अंश ही निकल गया हो। थोड़ी देर बाद वे बड़ी मुश्किल से धरती पर हाथ टेक कर खड़े हुए। कहने लगे—बगल से छूटने के बाद तो हमको ऐसा लगा जैसे दो बरसों की बीमारी से उठे हों। बोझ उठाना तो दूर, अब तो अपने पैरों से चलना भी मुश्किल है।

बुढ़िया को थोड़ी दया आ गई। बोली—भगवान नाक की डांडी पर बैठा है। बल का अधिक घमण्ड करना ठीक नहीं। बोलो, तुम्हारा क्या बोझ है ? मैं पहुंचा दूंगी।

चर्खे वाली बुढ़िया के बेटे ने कहा—मेरा बोझ कोई नहीं उठा सकता। साढ़े सात बीसी गाड़ियां नमक से पूरी-सूरी भरी हैं।

दूसरे मल्ल ने कहा—मेरे पास तो सौ मन तिलों की गठरी और एक हाथी है।

राइकानी बोली—यह भी कोई बोझ में बोझ कहलाता है क्या ? तुम्हारी ये चीजें तो मेरी ओडो के कोने में पड़ी रहेंगी। तुम कहोगे वहां पहुंचा दूंगी।

बुढ़िया ने तो जैसा कहा वैसा ही किया। एक एक गाड़ी, सौ मन तिलों

और हाथी अपनी ओडी में इधर उधर पटक कर उसने इस प्रकार ओडी सिर पर रखली मानो कोई थेपड़ी सिर पर धरी हो।

ओडी सिर पर रख कर रवाना हुई तब उसने अपने बेटे से कहा—मैं ये खिलौने पहुचा कर दिन ढलने से पहले पहले घर लौट आऊंगी। अब तू खेत जोतना बन्द करके थोड़ी टोले की भी सभाल कर। सिर्फ हलवाहे के भरोसे निश्चिन्त रहना ठीक नहीं। आज कल सारे ही ऊंट दुबले दुबले दिखाई दे रहे हैं। पता तो लगा कि बात क्या है?

मां के कहते ही, जैसे सेठ कान में कलम खोंसते हैं; वैसे ही उसने हल कान में खोंस लिया और कानों के लौंग के नाके में दोनों बैलों को लटका कर वह मैदान के ढलान में ऊंटों के टोले की संभाल करने के लिए रवाना हुआ। उसके एक हजार ऊंटों का टोला था।

मैदान की उस तरफ की ढलान में जाकर उसने टोले के चरने की रंगत देखी तो देखता ही रह गया। हलवाहा तो पट्ठा, पेड़ की घनी छाया में घुटने पर पैर रख कर निश्चिन्त सो रहा था। हजार ही ऊंटों के टोले को उसने मेखली में डाल कर पास की खेजड़ी की डाली में लटका दिया था। ओठारू भूख के मारे अरड़ा रहे थे। एक ऊंट ने ज्यादा कशमकश की तो मेखली थोड़ी पिस गई। ऊंट मेखली से बाहर मुंह निकाल कर खूब अरड़ा रहा था और हलवाहा कानों में अंगुलियां डाल कर ऊंचे स्वरों में तेजा गा रहा था।

आकाश में उड़ती हुई एक चील ने ऊंट का अरड़ाना सुन लिया। मेखली में अरड़ाते ऊंट पर उसकी नजर पड़ी। नजर पड़ते ही उस चील ने मेखली पर झपट्टा मारा। मेखली में डाले हुए हजार ऊंटों के टोले को वह अपनी चोंच में लेकर उड़ गई। राइका ने बहुत शोर हंगामा किया पर चील तो आकाश छूने लगी। हलवाहे से खूब लड़ा पर अब लड़ने से क्या होने वाला था। चील पर न चोरी का अभियोग लगता है और न डाके का।

अब न तो ओठरू रहेंगे, न उनके दुबले होने की नौबत आयेगी और न उनको चराने के लिए किसी हलवाहे की जरूर पड़ेगी। हलवाहे किसी को कब क्षमा कर देते है! उसने हाली से बहुत लड़ाई की कि भूखे प्यासे ऊंटों को मेखली में बांध कर कैसे वह तेजा गाने लगा!

हलवाहे ने कहा—तेजा का क्या, आप कहो तो तीखी राग में फिर गाकर सुना दूं।

इस बार राइका को बेहद क्रोध आया। नालायक, टोले के खो जाने के

बाद भी तेजा गाना चाहता है। उसने हलवाहे के सिर पर छः सात जूते ठप-कार दिये।

वह चील तो मेखली उचका कर अदृश्य हो गई। अपने बच्चों की आंखें खोलने के लिए वह सोना ढूंढ़ने के लिए उड़ी थी, पर बीच में ही मेखली झपट में आ गई। अब उससे न तो मेखली खाई जाय और न पटकी जाय। वह तो दूर दिगन्त तक मेखली लटकाए उड़ती ही गई।

उड़ते उड़ते चील को छत पर एक सोने का बोर पड़ा नजर आया। वह वहीं से लपकी। मेखली फेंक कर वह बोर पर झपट पड़ी।

छत पर ठकुराइन ऊंचा मुंह किए नाइन से माथा गूंथवा रही थी कि अचानक उनकी बांईं आंख में कोई चीज गिरी। ठकुराइन ने आंख मसलते हुए कहा—आंख में कोई फूस फांटा गिर गया लगता है। नाइन आंख से कचरा निकालने लगी तब तक चील ठकुराइन का बोर उचका कर उड़ गई।

ठकुराइन की आंख से जो चीज मिली उसे नाइन ने अपनी चोली में खोंसली। माथा गूंथने के बाद बोर को छत पर बहुत ढूंढ़ा पर वह तो मिलता भी कैसे! दोनों अन्त में परेशान होकर समझ गईं कि चील बोर के लिए ही झपटी थी।

नाइन ने घर आकर अपनी चोली में से उस मेखली को खोला तो अरड़ाते और गर्जन करते ऊंट, लातें मारते बाहर निकले। छोटे मोटे पूरे हजार ओठारू थे। नाइन को बजरंगबली का इष्ट था। उसने मन में सोचा कि आज तो निश्चय ही बजरंगबली तुष्टमान हुए हैं। इस प्रपंच में उसे कोई अनहोनी बात नहीं लगी। मन में कहने लगी — बजरंगबली की अनसोची कृपा हुई लगती है। देवता प्रसन्न होते हैं तो इसी प्रकार होते हैं! ठकुराइन की आंख में फूस के बहाने हजार ओठारू बजरंगबली ने भेज दिये। फूस पड़ने से आंख तो ठकुराइन की खटकी और बोर भी खोया तो ठकुराइन का; पर मेरी तो सात पीढ़ी का दारिद्रय दूर हो गया।

सभी ओठारुओं को उसने पिछले बाड़े में बन्द कर दिया। शाम को नाई घर आया तो वह मुस्कराती हुई उसके सामने गई। बोली — मैं बजरंगबली का इष्ट रखती हूं वह यों ही रखती हूं क्या? आज आपको हाथोंहाथ चमत्कार बता दूंगी।

नाई ने कहा — अपने भाग्य में जूठे बर्तन मांजने लिखे हैं सो मांजते हैं और हनुमानजी का सुमिरन करते हैं। तेरा चमत्कार तेरे पास ही रहने दे।

पर नाइन हाथ पकड़ कर जब नाई को बाड़े में ले गई तो खवासजी हक्के-बक्के रह गए। मुंह फाड़े पूछा—यह कहां डाका डाला ? बड़भागन मुझे बता तो सही।

नाइन ने सारी बात बिगतवार बताई। खवासजी ने चकित होकर सारी बात सुनी। फिर नाइन ने एक बार और पूछा—अब बताओ, मैं बजरंगबली की माला फेरती हूं वह यों ही फेरती हूं क्या ?

नाई ने कहा—पर कौन सिर फिरा कहता है कि तू यों ही माला फेरती है ? तू खुद आधी-चौथाई देवी है।

नाई ऊंटों का पक्का पारखी था। उसने टोले को निश्चिन्त होकर देखा तो देखता ही रह गया। टोले में बढ़िया, छंटे हुए ऊंट थे — खास बागड़, जालौरी, जैसलमेरी और बीकानेरी। छोटे से बड़े सभी उम्र के ऊंट थे — किरिया, तोडिया, दुआना, वाणी और ढागा।

आंवलिया किस्म की रेशमी रोमावलि के कई सुरंगे ओठारू थे—मजीठिया, कागड़ी, लसनी, काला, भूरा, पीला, तेलिया, धवल, बुगली, सेली और वगूली। एक एक से अधिक स्वरूपवान ओठारू जिन्हें देखते ही नजर लगे जैसे — कोफरिया कानों के, फरफरे होठों के, लम्बी गरदन के, हिरण गट्टी आंखों के, गोल घुटनों के, सूनी हुई टांगों के, झबरी पूंछों के, तीखी थुई के, तिकोनी ईडर के और छोटी तलियों के। तरह तरह की ऊंटनियां — सुब्बर, सुवाड़ी, बाखड़ी और फिरड़ी। तरह तरह की बोलियों से बाड़ा गूंजने लगा। कहीं किरिया अर तोडिया घिरणाते, कहीं सांड रिगती, कही गांगती, कहीं कराती और कहीं घुरती। कहीं ऊंट अरड़ाते और कहीं ढागे गाजते। ओठारुओं का दरबार तो जुड़ा पर जुड़ा।

खवासजी के तो ऊंटों का टोला क्या हाथ लगा जैसे पांखें लग गई। वह जमीन से ऊपर अधर उड़ता हुआ चलने लगा। सम्पत्ति का मद ऐसा ही हुआ करता हैं। लोगों की हजामत बनाने की वह परवाह ही नहीं करता। खुद ऊंटों के टोले को चराने में लगा रहता। दिन उगने से पहले कांकड़ में चराने के लिए जाता और दिन ढलने पर वापिस लौटता। कभी कहीं खास हजामत करनी होती तब वह अपने छोटे लड़के को बहुत बहुत संभाल देकर मैदान में टोले के साथ भेजता। फिर भी उसका मन नहीं मानता।

परेशान हुए लोग उसे कई बार कहते — खवासजी, आजकल पंख बहुत बढ़ गए लगते हैं। आज हजामत करते इतनी तकलीफ होती है, पर बाद में

आयत का धान मांगने के लिए मन मत ललचाना !

खवासजी जवाब देते— मैं अब बजरंगबली की कृपा से आयत के भरोसे नहीं हूं। धान नहीं मिलता है तो भी पुरानी मोहमाया के कारण मुझे हजामत तो बनानी पड़ेगी।

लोग पीठ पीछे बातें करते—साले नाई का तो सिर कमाल फिरा ! अब इसका घमंड कैसे चूर हो ?

आखिर लोगों के मनसूबे पूरे हुए। भादों का महीना था। एक दिन जरूरी हजामत के कारण खवासजी तो गांव में ही रहे और छोटे बेटे को टोला चराने के लिए कांकड़ में भेजा। यों तो बाप ने खूब समझा-बुझा रखा था और बेटा भी छक्के-पंजे पूरा सावधान था पर ध्यान रखते रखते भी बाजरी के खेत में टोला जो घुसा सो संध्या होने तक वापिस नहीं निकला। खेत तो कोई बात नहीं, खुद का ही था, पर बेटे के मन में चिन्ता शुरू हो गई। पता चलते ही पिताजी शान बिगाड़ देंगे।

बाजरी अप्रत्याशित रूप से बढ़ी हुई थी। सवार सहित ऊंट अन्दर घुस जावे तो भी पता नहीं चले। सिट्टियों में दानों के बदले जैसे मोती ही पैदा हो गये हों। ऊंटनी की पूंछ सरीखी हाथ हाथ लम्बी सिट्टियों के झोले खाती बाजरी में हाथियों के टोले का भी पता नहीं लगता, फिर ऊटों की तो गिनती ही क्या।

बेटे ने टोले को ढूंढ़ने के लिए बहुत कोशिश की पर टोले का तो वापिस निशान ही नहीं मिला। खेत के चारों कोनों में बीसों बार चक्कर देकर आखिर मुंह उतार कर वह अकेला ही अपने घर आया।

टोले की हलचल न सुन कर खवासजी के खलबली मच गई। पूछा—तू अकेला ही कैसे आया, टोला कहां है ?

बेटा मुंह लटकाए खड़ा रहा। खवासजी जल्दी मचाते हुए फिर पूछने लगे—बेटी के बाप, कुछ बोल तो सही। क्या बात हुई ! कोई डाका पड़ा कि कोई छीन ले गया ! बोले तो कुछ पता भी चले।

तब जाकर बेटा धीमे से बोला—न तो कोई डाका पड़ा और न किसी ने छीना। अपने खेत में ही टोला घुसा जो घड़ी रात गये तक वापिस नहीं निकला।

खवासजी उसे लाड़ से झिड़कते हुए बोले—वाह रे गूंगे ढोर ! बाजरी के खेत में घुसा हुआ टोला भी कहीं जा सकता है ?

नाइन बीच ही में टोकती हुई बोली—आप इस भरोसे मत रहना। ठकुरा-

इन की आंख में हजार ओठारुओं का टोला रह सकता है तो फिर बाजरी का खेत तो बहुत बड़ी बात है । इसी वक्त जाओ और दोनों बाप बेटे सारी रात खेत के चारों ओर फेरी दो । सवेरे दिन उगने पर बूंटा बूंटा छान कर टोले का पता लगाओ । नहीं गफलत गफलत में सारी पूंजी के बताशे मत कर बैठना !

घरवाली की बात सुनकर खवासजी का कलेजा ऊंचा चढ़ गया । दोनों बाप बेटे हाथों में लाठियां लेकर खेत की ओर भागे । सारी रात खेत के चारों ओर पहरा देते रहे पर टोले का कहीं नामोनिशान भी नहीं मिला । नाई बार बार केवल यही फिक्र करने लगा कि अगर टोला नहीं मिला तो जीना हराम हो जायेगा । फेरे देने के साथ साथ वह हनुमानजी की माला भी फेरता रहा । उसके मन में एक अनहोनी बात घुमड़ने लगी कि यदि यह रात आज अगले पल ही ढल जाय और समय से पहले ही दिन उग जाय तो कैसा अच्छा रहे । नाई बहुत ही कलपा पर रात तो अपने समय पर ही ढली । उसे ऐसा लगा जैसे आज सौ रातें एक साथ इकट्ठी हो गई हों । आज उसे सूरज के उजाले की कीमत मालूम हुई । मन में सोचने लगा—इन काली रातों का वरदान किसने मांगा ! यह सूरज नहीं ढलता तो दुनिया का कितना भला हो जाता !

दुनिया का भला हो या न हो, पर सूरज के उगने से भी खवासजी का कोई भला नहीं हुआ । बाजरी का बूंटा बूंटा पैरों से कुचल डाला पर टोले की छाया भी नहीं दिखाई दी । यह क्या बात हुई ? खेत में घुसते पैरों के निशान तो स्पष्ट मिलते हैं पर वापिस निकलने के खोज कहीं नहीं दिखते ! क्या टोले को जमीन निगल गई ? क्या ऊंट आकाश में उड़ गये ? क्या वे पाताल में लोप हो गये ! कुछ पता नहीं चलता । बुरी जग-हंसाई हुई । लोगों ने आयत से भी हाथ खींच लिया तो बच्चों को पालना मुश्किल हो जायगा ।

घड़ी दिन चढ़ने पर भी कोई समाचार नहीं मिला तो नाइन खुद खेत में पहुंची । उस के बहुत हठ करने पर एक बार फिर टोला ढूंढने के लिए बाजरी का बूंटा बूंटा खोजा गया । पर टोले की तो वापिस झपकी भी नहीं पड़ी । पति-पत्नी दोनों के मूंह कलई की तरह सफेद पड़ गये । इतने पर भी नाइन ने हिम्मत नहीं हारी । वह अपने पति पर चिड़ती हुई कहने लगी—तुम इतना गर्व नहीं करते तो यह आफत क्यों आती ? मुझे मेरी भक्ति पर भरोसा है । यह टोला अवश्य मिलेगा । एक ऊंट के मोल में बाजरी कहीं आती जाती है । मेरा कहना मानो— इन सिट्टों को कच्चे ही तुड़वालो । बचे हुए डंठलों को काटने के बाद

ओठारू कहां जायेंगे ? तुम दोनों बाप बेटे रोज खेत की रखवाली रखना। लोगों को अपना सुख देखे नहीं सुहाता। कोई दुश्मन ही टोले को घेर ले जायगा।

खवासजी ने कहा—तू तो बिल्कुल पागल हो गई है। टोले के पीछे रोना छोड़। एक सपना था जो टूट गया। उस सपने के भरोसे एकदम बढ़िया बाजरी को सत्यानाश करूं, मैं ऐसा पागल नहीं। यह तो तेरे हनुमानजी ने एक लीला दिखाई थी। अब शान्ति धारण कर और चुपचाप घर चल!

दोनों ही अपनी अपनी जिद्द पर अड़े रहे। खवासजी ने किसी शर्त पर कच्ची सिट्टियां नहीं तोड़ने दी और नाइन ने दोनों बाप बेटों को रखवाली के लिए वहीं पहरे पर तैनात कर दिया। वह रोज दोनों वक्त वहीं उनके लिए नाश्ता पानी ले आती।

समय पर सिट्टियां पक्की और खूंटने योग्य हुई। सारे घरवालों ने अपने हाथों से एक एक सिट्टी को खूंटा, पर टोले का पता नहीं चला। फिर नाइन ने कहा—खारिया काटने के बाद तो मिलेगा ही।

खारिया भी काट लिया गया पर टोले की तो छाया भी नहीं दिखाई दी। तब नाइन ने कहा — पूला बांधते समय कहां जायेंगे ? मेरा मन कहता है कि हिम्मत मत हारो। टोला मिल कर रहेगा।

एक एक पूले का गट्ठर अपने हाथ से बांधा तो भी टोला नहीं मिला सो नहीं मिला। नाइन ने खुद अपने हाथों से पूले इकट्ठे किये, खुद अपने हाथों से गांठें बांधीं पर टोले के दर्शन नहीं हुए। नाइन तब भी अपनी बात पर अड़ी रही।

खवासजी ने कहा—अब टोले के पीछे क्यों कमर तोड़ती है ? अपने हनुमानजी का सत अब अलग धर और घर के कामों में मन लगा।

नाइन ने जवाब दिया — तुम नहीं मानते उसका तो मैं क्या करूं, पर मेरी आत्मा कहती है कि एकबार फिर टोला अपने बाड़े में गरजेगा। तुम मुझे रोको-टोको मत, मेरी जो मर्जी हो वह करने दो। तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं, पैरों पड़ती हूं। टोला खारिया में नहीं मिला तो कोई बात नहीं। सिट्टियों के गाहिटे में अवश्य मिलेगा।

सिट्टियों का गाहिटा गाह लिया गया तो भी टोले का तो न खुड़ हुआ न खुड़का। नाइन ने अपने हाथों से सारी माद उफनी पर ओठारुओं की झलक भी नहीं दिखाई दी। एक एक तूतड़ा और एक एक डंठल को दस दस बार संभाल लिया तो भी टोले का पता नहीं लगा। पर उसका मन कहता था कि टोला मिलेगा और अवश्य मिलेगा। उसने अपने हाथों से गाड़ियां भरी और खुब

तहखाने में गाड़ियां खाली कीं; तो भी टोले की तो सरसराहट भी नहीं सुनाई दी।

आखिर दुखी होकर वह तहखाने की बाजरी को बिना साफ किये ही घम्मड़ धम्मड़ पीसने बैठ गई। अब कहां जायेंगे? पीसने के आगे तो टोले को अरड़ाना ही पड़ेगा।

आंगन में आटे का इतना बड़ा ढेर देखा तो नाई ने कहा — भली आदमन, तुझे यह क्या उल्टी सूझी है? बाजरी का आटा तो तीन चार दिनों में ही खट्टा पड़ जाता है, और यहां तूने बारह महीनों की बाजरी पीस डाली। ये ओठारू क्या भाव पड़ेंगे?

नाइन ने कहा — एक ऊंट के मोल में यह आटा कहीं आता जाता है। मेरी जो मर्जी हो वह करने दो।

खवासजी ने ताने के स्वर में कहा— ऊंट का मोल तो राम जाने होगा या नहीं, पर यह आटा तो बेकार होता दिखाई देता है। तू खुद घर की मालकिन है, तुझे क्या कहूं। तेरी जो मर्जी हो सो कर।

और नाइन अपनी मर्जी के अनुसार करती रही। सारे आटे को दो तीन बार चलनी से बाहर निकाला पर टोले का रोम भी हाथ नहीं आया। अब उसके मन में भी वहम जगने लगा कि वास्तव में यदि टोला हाथ नहीं आया तो कैसी बुरी बीतेगी! फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी। परात में आटा भिगो कर हाथ से मलने लगी। शायद हाथ के नीचे कहीं टोला खटक जाय। उसने बाजरी की रोटियां पका पका कर उनके ढेर लगा दिये।

खवासजी ने यह काण्ड देखा तो कहा— अभागन, यह क्या कबाड़ा कर लिया? रोटियों के पहाड़ चुन दिये! अब इनका चूरमा बना कर तेरे हनुमानजी को खिला।

पर नाइन ने अपने पति के कहने की कोई परवाह नही की। उसने तो भिगोये हुए आटे की आखरी रोटी तक बना डाली। तवे से उतार कर खीरों पर रखी तो वह रोटी बेहद फूली। अचानक फड़िद की आवाज करके रोटी की पपड़ी फूटी। पपड़ी का फूटना हुआ और ध ध करते, जीभ का गोला निकालते, गरजते अरड़ाते ओठारू रोटी से बाहर निकलने लगे।

अब नाइन के हर्ष का क्या अन्त! नाई ने झोंपड़ी में बैठे हुए ऊंटों का गरजना सुना तो वह दौड़ा दौड़ा वहां आया।

देखते देखते सारा बाड़ा ओठारुओं से भर गया। मस्ती में आए हुए ऊंट

खीझने लगे तो आकाश सिर पर उठा लिया। खवासजी बार बार आंखें मल कर ठंडे पानी से आंखें छांटते हुए टोले के सामने देखते—कहीं यह सपना तो नहीं है!

नाइन गर्व से मटकती हुई बोली—देखा मेरे बजरंगबली का चमत्कार! मैं उनका रात दिन सुमिरन करती हूं सो क्या यों ही! मेरा इक्कीस आना मन जग रहा था कि यह बात होकर रहेगी। कोई मुझे चिढ़ाने के लिए तो बालाजी ने टोला भेजा नहीं था!

फिर तो खवासजी ने एक पल के लिए भी टोले को सूना नहीं छोड़ा। थोड़े दिन बीतने पर एक दिन नाइन पंखा झलती हुई बोली—ओठारुओं का धन तो देवासियों से ही संभाला जा सकता है। हम लोग इसकी ठीक तरह देख-भाल नहीं कर सकते। बिके उन्हीं भावों इन ओठारुओं को महंगा सस्ता बेच दो। इस बार अगर खो गये और वापिस हाथ नहीं आये तो उम्र भर पछताना पड़ेगा। यह तो मैंने ही पीछा नही छोड़ा वर्ना आज हम क्या कमा लेते!

खवासजी ने खुश होकर कहा—तूने तो मेरे मन की बात पढ़ ली। मेरी भी यही राय है।

मिया बीवी के जंचने के बाद उनको रोकने वाला कौन? सारे ओठारू एक देवासी को बेच दिये। एक लाख रुपये बटे।

रुपयों की बटत होते ही नाइन ने फिर कहा—हम, नाई की जात, इतनी बड़ी जोखिम की रखवाली कैसे कर सकेंगे! मेरा कहना मानो तो इससे सोने का सारा गहना घड़वा लें—मोती और नग जड़वालें, तुम्हारी हजामत की पेटी और हजामत के औजार भी सोने के बनवा लें। सारा धन अपनी नजरों के सामने तो रहेगा। ठाकुर साहब की कृपा है तब तक कोई अपने सामने भी नही देख सकता।

खवासजी के भी यह बात सोलह आने जंच गई। उसने सराफों में जाकर सारे रुपयों की झाड़शाही मोहरें खरीद ली। फिर दोनों ने सुनार को अपने घर में छिपा कर बिठाया और तरह तरह के गहने घड़वा लिये।

नाई ने बड़े मोद से अपने लिए सिरपेच, मुकुट, कानों के तुंगल, मुरकियां, गुड़दा, भंवरिया, गले में कठा, डोरा, जनेऊ और हनुमानजी का फूल, सोने के बटन, हाथों में माठियां, और अंगुलियों में अंगूठियां घड़ाई; सोने का हुक्का और सोने की चिलम भी बनवाई। हजामत की पेटी और पट्टी तक सोने की। उस्तरा कतरनी, नेउणी, नखचुट्टा, कली, कटोरी और गुठली तक सोने की। सोने में मढ़ी आरसी। काम में न आने वाली चीजें भी उसने उमंग से सोने की

बनवा ली—सोने की सिल्ली, सोने का चकमा और सोने का ही चीमौटा।

सुनार ने कहा—खवासजी, आप इतना गहना तो घड़ाते हैं पर ठाकुर साहब ने पहनने की आज्ञा नहीं दी तो सब बेकार हो जायगा।

खवासजी ने जवाब दिया—इस धरती पर सबसे पराक्रमी ठाकुर यह सोना है। इसकी आज्ञा होने पर हर जगह जीत है। तू अपना काम निश्चिन्त होकर किये जा।

नाइन ने भी बड़े चाव से अपने लिए गहने घड़वाये। सिर पर जड़ाऊ रखड़ी, पात, टीडी-पलका, सांकलियां, झेला, सकरपारा, टोटी-डोरा, कानों में टोटियां, ओगनियां, कुड़कें, झूमरा, कनफूल; दांतों में चूंपें; गले में तिमनिया, तेवटा, आड, पटिया, हांस, हांसली, कंठी, दुस्सी, कांठला, मादलिया और कठपुतलियों का हार, हनुमानजी का फूल; कमर में सतलड़ा कंदोरा—कूपला और सुरमादानी सहित; बांहों में बाजूबन्द, टड्डा, मादलिया, सोने के पातों का चूड़ा और ब्रिलिया, कांकणिया, कातरिया, गोखरू, बंगड़ियां, गूजरियां, पुणचियां, आंवला, गजरा, हथफूल, बींटी-दावणा, पैरों में बोकना भांत कड़ला, टणका, आंवला, नेवरियां, पायल, छड़ा, तोड़ा, सांटा, रिमझोल, चूड़ियां, हीरानमी जोड़, पगपान, बिछिया, बिछूड़ियां, अंगूठियां और गोलिया।

तीब की तीब सारा गहना घड़ने के बाद नाई एक हजार झाड़शाही मोहरें लेकर ठाकुर साहब के पास गया। मोहरें नजर करके हाथ जोड़ कर बोला—अन्नदाता, पीढ़ियों से आपका चाकर हूं। ये नाकुछ मोहरें कबूल कीजिए और मेरे पर एक कृपा कीजिए।

हजार मोहरों की चमक से ठाकुर साहब की भी आंखें चौंधिया गईं। ताना मारते हुए कहा—नापत, कहां डाला यह डाका? बता तू किस बात की कृपा चाहता है?

नाई ने कहा—घरवाली को बजरंगबली का इष्ट है। आखिर उसके इष्ट के आगे उनको तुष्ठमान होना ही पड़ा। मैं तो सिर्फ आपसे गहना पहनने की आज्ञा चाहता हूं। पहनने के बाद दंड भरूं इससे पहले एक हजार मोहरें आपके नजर करता हूं।

ठाकुर साहब ने मन में सोचा कि हजार मोहरें तो बड़ी बात, कोई सिर्फ दस मोहरें भी नजर करदे तो मैं गधे को भी सोना पहनने की आज्ञा दे सकता हूं। अपनी मर्जी से जब खवास एक हजार मोहरें ले आया है तो मैं क्यों

कम ज्यादा की चर्चा करूं ! अब तो बात अटकाने से कुछ और नफा हो सकता है। बोले--- तू तो हमारे ठिकाने का और खास घर का आदमी है। तुझे बिना नजराना दिये ही सोना बक्शीस कर सकता था पर राज्य का कायदा नहीं बिगड़े इसलिए थोड़ा बहुत विचार करना पड़ता है। न तो लोगों के पास इतनी माया होगी और न कोई सोना पहनने के लिए इतनी नजर कर सकेगा। आज से ही ठिकाने में यह परम्परा पड़ जायगी कि हजार मोहरें नजर करने के बाद सोना बक्शीस करने पर विचार किया जा सकता है। तू कौन सी कमाई करके लाया है ? बजरंगबली के इष्ट से तो तुझे सोने का पहाड़ फिर मिल जायगा। मेरा कहना माने तो तू एक हजार मोहरें और ले आ , मैं तुझे पैर में सोना पहनने की छूट दे दूंगा। प्रजा इससे नाराज तो होगी, पर मैं यह झंझट निपटा लूंगा। तू आगे की बातों की परवाह मत कर।

नाई के इतनी देर कहां ! वह दौड़ता हुआ जाकर हजार मोहरें और ले आया। ठाकुर साहब ने मन में बहुत पश्चाताप किया कि सिर्फ हजार मोहरों की बात ही मुंह से क्यों निकाली। दो हजार की बात करता तो यह दो हजार भी ले आता। बैठे-बिठाए नुकसान कर दिया। पर ठाकुर साहब ने जल्दी करना वाजिब नहीं समझा। ठंडा कर के खाना ठीक रहता है।

खवास ने हाथ जोड़ कर कहा—हुक्का चिलम , हजामत की पेटी , साज सामान और हम दोनों के गहने घड़ाने के बाद सिर्फ ये हजार मोहरें ही बची थीं। आपका हुक्म मिलते ही तुरन्त ले आया। अब मुझे आज्ञा देने की कृपा कीजिए।

ठाकुर साहब खुश होकर बोले—तुझे मैं कैसे मना कर सकता हूं। पांव में सोने के कड़े की तो बात ही क्या , तू सोने की जूतियां तक पहन सकता है। देखता हूं कौन तुझे बुरा बोल सकता है ? तुझे सोना पहन कर मेरी खास कचहरी में आने की छूट है। बोल , और क्या चाहता है ?

खवास , ठाकुर साहब के पैर पकड़ कर बोला—अन्नदाता की मेहरबानी चाहिए। आपकी कृपा दृष्टि हो तो मिट्टी भी सोने जैसी है और आपका कोप हो तो सोना भी धूल बराबर हैं , मैं तो केवल यह बात जानता हूं।

और ठाकुर साहब की इतनी छूट मिलने के बाद खवासजी का क्या पूछना ! उसने नये सोहते कपड़े पहन कर उस पर तमाम गहने ठसा लिए। पीछे रहनेवाली नाइन भी नहीं थी। उसने भी सवेरे उठकर बनाव सिंगार करना शुरू किया , जो दोपहर होने तक बड़ी मुश्किल से पूरा हुआ। सोने के गहनों से पीली जरद हो गई – जैसे साक्षात लक्ष्मी का अवतार हो। दोनों ने एक दूसरे

की बलैंया लीं – थुथका डाला । फिर खवासजी तो खट खट कचहरी के लिए रवाना हो गये और नाइन झमाझम करती ठाकुर साहब के रनिवास में पहुंची। ठकुराइन के पास जाकर खड़ी हुई तो वे भी उसके सामने दासी जैसी लगने लगी। नाइन के शरीर पर जगमगाहट करता सोना देख कर उनके कलेजे में आग आग लग गई। उनको एकाएक विश्वास ही नहीं हुआ। पहले तो समझा कि कोई रानी साहिबा पधारी हैं। पर जब नाइन ने झुक कर बन्दगी की तो उनको पता चला कि यह तो नाइन है। ठकुराइन ने बड़ी मुश्किल से उससे हंस हंस कर बातें कीं।

रात को ठाकुर साहब महल में पधारे तो ठकुराइन रूठ कर मान किये सो रही। ठाकुर ने बहुत चापलूसी की, मनाया, उठाया तो ठकुराइन सिसकियां लेती कहने लगी — मेरे ही ठिकाने में मेरी ही नाइन ओडी भर सोने का गहना पहन कर आवे और मेरे पास उसकी बराबरी की एक तीब भी नहीं ? अब आप ही बताइए कि ऐसे जीने में क्या सार ! आत्महत्या नहीं करना चाहती पर आप खुद अपने हाथ से मुझे संखिया दे दें तो पिण्ड छूटे।

ठाकुर साहब धीरज बंधाते हुए बोले — इतनी समझदार होकर कैसी पागल बातें करती हो। आंखों से दिखाये बिना पता कैसे चलता कि इतना गहना है ! बिचारा कल दो हजार मोहरों का नजराना चढ़ा गया तब सोना पहनने की इजाजत मिली है।

ठकुराइन ने कहा—आपका क्या, आपको दो हजार मोहरें और मिल जांय तो आप उसे अपनी ठकुराइन बनने की इजाजत दे देंगे। मेरे पास उसके बराबर गहना नहीं है मुझे इस बात का दुख नहीं है, पर उसके पास इतना गहना क्यों है, मेरे कलेजे में इस बात की आग लगी हुई है। मैं हजार मोहरों का गहना और घड़ा लूं तो इससे उसका गहना तो कम नहीं होगा। लोगों को बेहद दुखी देखूं तब मेरे मन में सुख पैदा हो। दूसरों का सुख ही मेरे दुख का कारण है। चौबीस गांवों के मालिक होकर आप रैयत को दुखी नहीं कर सकते तो फिर ठाकुर क्यों बने !

ठाकुर साहब ने नरमाई से कहा—मेरे काम का मुझे पूरा ध्यान है। तुम्हें याद दिलाने की जरूरत नहीं। अपने पट्टे के गांवों में किसी के पास कोई अच्छी चीज होगी उसे अपने खजाने में आना पड़ेगा। तुम धीरज रखो। औरतों की जल्दी और समझ से राज्य का काम नहीं चलता। मेरी समझ पर भरोसा करके अब रूठना बन्द करो !

समझाने से ठाकुराइन को ठाकुर साहब की समझ पर पूरा भरोसा हो गया।

सोना और गहना पहनने से लोगों की नजरों में उनकी जात ही बदल गई। गांव में ठाकुर साहब से दूसरे दर्जे पर खवासजी का आदर सम्मान होने लगा। आदर पाने की उमंग में खवास ने भी यश बटोरने के लिए हाथ एकदम खुला कर दिया। हाथ पोला तो जगत गोला। नाइन ने भी गांव की औरतों में बेहद यश कमाया। किसी के भी अटकाव और दुख में वह तुरन्त मदद करने से नहीं चूकती।

पीठ पीछे तो लोग खवासजी को ठाकुर से भी सवाया मानने लगे। ठाकुर साहब बेहद चतुर थे। गांव में सारी बातों का पता रखते। अनहोने यश और आव-आदर के कारण––खवास का बदलता स्वभाव भी उनसे छिपा नहीं रहा। वे खुद ताने के लहजे में उसे खवास ठाकुर कह कर पुकारने लगे।

एक दिन उन्होंने खवासजी से कहा––खवास ठाकुर, मैं तुझे रोज तक-लीफ तो देता हूं, पर तू बुरा मत मानना। तेरा काम तुझे सौंपना ही पड़ता है। कल सवेरे तू अपनी हजामत की पेटी लेकर मेरी हजामत बनाने आना। लोग तेरे सोने के हुक्के और चिलम की बेहद तारीफ करते हैं, भले आदमी मुझे भी ओंखों से तो दिखा।

खवासजी को मन के विपरीत जबरदस्ती कहना पड़ा––आप यह क्या फरमाते हैं! आप तो मेरे मालिक हैं। आपकी सेवा करने से मैं छोटा थोड़े ही बन जाता हूं। आपको कई बार हुक्का और चिलम दिखाई पर आपको उनका कोई विशेष ध्यान नहीं रहा। आप राजा हैं, हम गरीबों की चीजें आप लोगों की नजरों में नहीं आती। आप हुकुम करें तो कल फिर लेकर हाजिर हो जाऊंगा।

सोना और गहना तो दोनों पति-पत्नि पूरा पूरा हरदम ठसाये रखते थे। सोने की हजामत की पेटी खवासजी के कन्धे पर लटकी रहती। ठाकुर साहब के सिवाय उसने दूसरे लोगों की हजामत बनाना धीरे धीरे बन्द कर दिया था। जूठे बर्तन न मांजने का तो उन्होंने मन में प्रण ही कर लिया था। और लोग भी उन्हें यह काम कहते अब संकोच करने लग गये थे।

दिन उगते ही खवासजी सोने की हजामत की पेटी, सोने का हुक्का, सोने की चिलम और शरीर पर सोना-गहना ठसा कर ठाकुर के दरबार में हाजिर हुआ। ठाकुर साहब पाट पर बैठे उसी का इन्तजार कर रहे थे। पास आते ही उन्होंने उसे आदर के साथ खवास-ठाकुर कह कर बातचीत की।

ठाकुर साहब ने खवास की सारी चीजों को ठीक तरह देखा। एक एक चीज ठोस सोने की बनी हुई। ठाकुर साहब ने पेटी से निकाल कर सारी चीजें ध्यान से परखी। चीमटा, सिल्ली और चकमा हाथ में लेकर ठाकुर साहब ने कहा—वाह शेर, जी का दलाल तो तू भी खूब है। ये चीजें काम नहीं आती तो भी तूने शोभा के लिए सोने की बनवाली ! बता, यह चीमोटा, चकमा और सिल्ली पहले भी कभी सोने की बनी है ? पर तुझे तो कोई बहाना चाहिए था। या तो बड़े ठाकुर साहब का मन तेरे जैसा था या उनके बाद मैंने तेरा दिल ऐसा दरियाव देखा।

खवासजी तो घमण्ड के मारे फूल कर कुप्पा हो गया। इसी तरह की बातें चलती रही। खवासजी ठाकुर साहब की हजामत बना कर नखचुट्टे से नाखून काट रहा था कि ठाकुर साहब ने धीरे से एक उसांस खींची, और उसांस के खींचते ही खवास के हाथ से नखचुट्टा छूट कर नासापुट के मार्ग से सीधा ऊंचा चढ़ कर ठाकुर साहब के पेट में चला गया। फिर तो ठाकुर साहब जोर जोर से सांसें खींचते ही रहे और हर दरड़ाटे के साथ बारी बारी से खवासजी का हुक्का, चिलम, पेटी, सिल्ली, चीमोटा और चकमा, सारे ही नाक की फुरनियों के द्वारा ठाकुर साहब के पेट में चले गए।

खवास देखता ही रह गया। यह लीला देखकर उसका मुंह तुम्बीं की गिर के समान एकदम सफेद चट्ट हो गया। उसकी आंखें जलजली हो गई। ठाकुर साहब मजाक करते हुए कहने लगे— जी का इतना दलाल होकर यों क्या मुंह उतार लिया रे !

खवास ने हाथ जोड़ कर कहा— अन्नदाता, यह क्या करते हैं, मैं तो आपका सेवक हूं। खुशी खुशी दो हजार मोहरें आपको नजर की थी। आपकी परवानगी लेने के बाद ही मैंने यह गहना और साज सामान घड़वाया। मेरे पर थोड़ी बहुत तो दया विचारिये।

यह कहकर खवासजी ने कोहनी तक हाथ जोड़ दिए।

ठाकुर साहब ने फिर ताना मारते हुए कहा—आज तो बहुत दिनों बाद हाथ जोड़े रे ! इतने दिनों बिल्कुल ही भूल गया था।

खवासजी ने गद्‌गद् कंठ से रिरियाते हुए कहा— अन्नदाता, मेरा कुछ कसूर तो बताया जाय। आपका मेरे पर इतना कोप क्यों ?

ठाकुर साहब ने मुस्कराते हुए कहा — इस में कसूर और कोप की क्या बात ? मैं तो तेरी परीक्षा ले रहा था। सम्पत्ति बढ़ गई तो क्या, स्वभाव तो

अभी तक तेरा वैसा ही रहा। फालतू कलप मत, तू खुद पेट में जाकर अपनी सारी चीजें वापिस ले आ। तेरी हजामत की पेटी और साज समान का मैं क्या करूं। एक चिलम थोड़ी पसन्द आई थी, तेरी इच्छा हो तो नजर कर देना, नहीं तो तेरी मर्जी।

खवास बोला—मैं तो चिलम और हुक्का दोनों आपको भेंट कर दूंगा। बाकी चीजें आपकी महरबानी हो तो वापिस लौटा दी जाय।

ठाकुर साहब ने कहा—तेरे गले की सौगन्ध इसमें एक झंझट है। पेट में चीजें जाने का मार्ग तो है पर वापिस आने का रास्ता नहीं है। तू राजी खुशी अन्दर जा कर अपनी चीजों की साज-संभाल करले और जाब्ते से वापिस बाहर ले आ। मैं तुझे रोकता थोड़े ही हूं। ज्यादा देर अन्दर रहने से ये चीजें मेरे पेट में अजीर्ण पैदा कर देंगी।

खवास को ठाकुर साहब की बातों से पूरा धीरज बंध गया। अन्दर जाने के लिए राजी हुआ ही था कि संयोग की बात, भोजन करने में देर होती देख कर खुद नाइन अपने पति को बुलाने के लिए वहां आ पहुंची। वह निश्शंक झम्मर झम्मर चलती ठाकुर साहब के पास आई ही थी कि ठाकुर ने जोर से एक सांस खींचा। नाइन के देखते देखते खवास-ठाकुर तो अन्दर गोलख में घुसता ही नजर आया। नाइन ने यह लीला देखी तो बुरी तरह रोने चिल्लाने लगी। ठाकुर साहब ने कहा—बाला, रो मत। खवास अपनी चीजें लेने के लिए इन्द्रलोक में गया है। अभी वापिस आता ही होगा। तुझे तब तक खटाव नहीं हो तो तू खुद अन्दर जा और अपने आदमी का हाथ पकड़ कर बाहर ले आ। हुक्का, चिलम और हजामत का साज सामान भी बाहर लेती आना।

नाइन को भी भरोसा हो गया। अन्दर जाने की उसकी इच्छा होते ही ठाकुर साहब ने फिर जोर से सांस खींचा। और सांस खींचते ही सोने से पीली जरद हुई नाइन भी फुरनियों के रास्ते, ठाकुर साहब के पेट में समा गई।

नाइन ठेट पहुंची तब तक उसके और उसके पति के बीच में आधे कोस का फासला रह गया था। वह रोती पीटती यों ही इधर उधर भटकती फिरी, पर खवासजी का तो कहीं पता नहीं चला। उसने पेट में से ही हल्ला मचाया—ठाकुर साहब मुझे बाहर निकालिए, मेरा जी घबरा रहा है।

जवाब में उसे केवल ठाकुर साहब के डग डग हंसने की आवाज सुनाई दी।

दोनों जन नौ दिन तक इधर उधर भटकते रहे। भटकते भटकते खवासजी को एक माली सामने मिला। दोनों में सलाम दुआ हुई। माली ने पूछा—आप

कौन जात और गांव कौन सा ? नाई ने अपना नाम धाम बताया । फिर मुंह लटका कर कहने लगा—मेरा सोने का नखचुट्टा, सोने का हुक्का, सोने की चिलम और सोने की हजामत की पेटी ठाकुर साहब के पेट में चली गई है, उनको ढूंढने आया हूं ।

उत्तर में माली जोर से हंसा । बोला — पगले, तू नौ दिनों में ही तेरी खोई हुई चीजें ढूंढ़ना चाहता है ! और वह भी ठाकुर साहब के पेट में ? यहां हुक्का, चिलम और हजामत के सामान की क्या थाह लगती है । मैं पिछले सत्रह वर्षों से रात दिन मेरे खोये हुए कुए ढूंढ़ रहा हूं । जिस पेट में इक्कीस कुंओं की तीन हजार बीघा जमीन का भी पता नहीं चलता वहां तेरे साज सामान का क्या पता लगेगा ! अब तो केवल सब्र करना सीख और बाकी सारी बातें भूल जा ।

पर खवासजी को तो भी विश्वास नहीं हुआ । भटकते भटकते उनको एक राइका सामने मिला । उसके मुंह से सारी बात सुनकर मजाक करता हुआ कहने लगा — तेरी तरह थोड़े दिनों तक तो मैं भी जानता था कि मेरा एवड़ वापिस मिल जायेगा । सात वर्षों में ही मेरी दस हजार भेड़ों का ठाकुर साहब के पेट में जाने के बाद पता नहीं चला, भला उस जगह तेरी हजामत की पेटी, हुक्का, चिलम और नखचुट्टे का क्या खोज मिलेगा ।

खवासजी को तो भी धीरज नहीं बंधा । वह फिर आगे चला । चलते चलते उसे एक बूढ़ा चौधरी सामने मिला । खवासजी की बात सुनकर वह एक गहरी निश्वास डाल कर बोला—आखिर तू भी ठाकुर साहब की अंटी में फसा ! अब केवल गोते लगाने के सिवाय कुछ हाथ नहीं आने का । हर बरस पांच हजार मन गेहूं की तालियों के बोरे ठाकुर साहब डकार जाते हैं, जिसका एक दाना भी हाथ नहीं लगता । मैं भी वापिस हाथ आने के धोखे में यहां आ गया । ग्यारह वर्षों से इधर उधर भटकता फिर रहा हूं पर हाथों से लटाई हुई तालियों का एक दाना भी वापिस देखने में नहीं आया ।

इस प्रकार खवासजी को कई लोग मिले और सबने अपने अपने दुखों की बातें बताई । यह कोई ठाकुर का पेट है कि बिना पेंदे का पाताल ! नजर से देख कर जिस चीज की मंशा करते हैं वही इसमें लोप हो जाती है !

घूमते घूमते खवासजी को अेक कोठार में एक कामदार बैठे दिखाई दिये । वे नीची नजर किए हिसाब किताब कर रहे थे । खवासजी को देखते ही पहचान लिया । पूछा—तुम यहां कैसे ?

खवासजी ने बिगतवार सारी बात बताई। तब कामदार हंसते हुए कहने लगे—बेवकूफ, कहीं तेरा दिमाग तो खराब नहीं हो गया है ! ठाकुर साहब के पेट में गई हुई चीजों की आशा करता है ? ये बहियों की अगणित थप्पियां देखता है ! इनमें तेरे जैसी लाखों चीजें जमा हुई पड़ी हैं। तेरा हुक्का, चिलम, हजामत की पेटी वगैरह सोने की ठोस चीजें मैंने अभी अभी इन बहियों में जमा की हैं। जमा होने के बाद अब तुझे उनकी परवाह करना बिल्कुल बन्द कर देना चाहिये।

कामदार और खवास में बातें हो रही थीं कि जोर जोर से रोती चीखती नाइन वहां आई। नाइन को देखकर खवासजी ने आश्चर्य से पूछा–तू यहां कैसे ? नाइन ने कहा—तुम्हें ढूंढ़ने आई हूं। घूमते घूमते पैरों में पानी पड़ गया। बड़े आदमी, यहां छिपे बैठे हो ! चिल्ला चिल्ला कर मेरा तो गला बैठ गया। बोलो अब क्या करें।

खवासजी ने कहा—अब करना कराना तो ठाकुर साहब के हाथ में है। यहां आने के बाद किसी का वश नहीं चलता।

राजस्थान के अवनद्ध वाद्य : घेरा एवं खंजरी

कोमल कोठारी

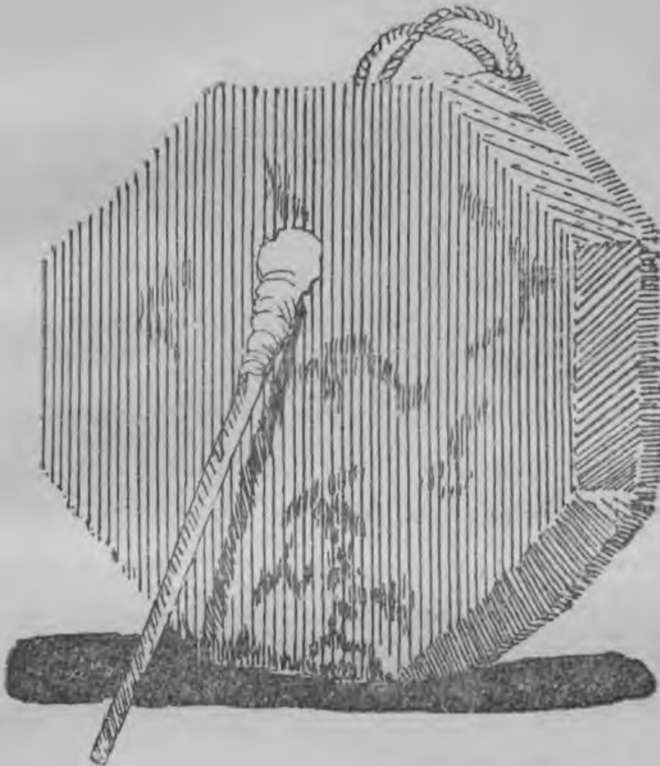
[राजस्थान के लोक संगीत वाद्यों पर क्रमिक रूप से लेख प्रकाशित किये जा रहे हैं। दिसंबर, ६७ से जनवरी ६९ तक घन-वाद्यों का विवरण प्रकाशित हो चुका है। फरवरी, ६९ में अवनद्ध वाद्यों के विषय में एक समग्र विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया। मार्च, ६९ में चंग एवं डफ पर लिखा गया है।

इन निबन्धों में केवल इसी बात का ध्यान रखा गया है कि राजस्थान में जो भी वाद्य प्रचलित हैं, उसका सांगीतिक एवं वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया जाय। 'राजस्थान के वाद्य' कहने से इस प्रदेश की ही विशेषता का संकेत नहीं लिया जाय। ये वाद्य न केवल भारत में अपितु सारे विश्व में कहीं इन्हीं नामों से, तो कहीं दूसरे नामों से प्रचलित हैं। तथ्य केवल यही है कि इन नामों के वाद्य-विशेष राजस्थान में प्रचलित हैं।]

घेरा

राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र में एक विशिष्ट आकार-प्रकार का खंजरी-रूप वाद्य प्रचलित है। यह वाद्य ठीक चंग अथवा डफ के अनुरूप ही बना होता है किन्तु गोलाकार नहीं होता। इस वाद्य को लकड़ी की आठ पट्टियों से बनाया जाता है और बनावट में आठ कोण होते हैं। इस वाद्य को मेवाड़ में 'घेरा' कहा जाता है।

घेरे का वादन मुख्यरूप से मुसलमान जाति के लोगों में प्रचलित है। यह स्वतंत्र एवं एकाकी रूप से भी नहीं बजाया जाता। इसे एक अन्य अवनद्ध वाद्य तासा एवं झांझ नामक-घन वाद्य की संगत में प्रयुक्त किया जाता है। बड़े ढोल, तासे और झांझ का संयोग भी मेवाड़ के गांवों में प्राप्त हो जाता है। इन सभी वाद्यों का प्रयोग सामाजिक उत्सवों, जुलूसों एवं विवाह के अवसर किया जाता है। मैंने घेरे का प्रयोग इन्हीं सीमाओं में देखा एवं पाया है। यह वाद्य भी मुख्यतया पुरुषों द्वारा ही बजाया जाता है।



घेरे का रूप अष्टकोणात्मक होता है और एक-मुख वादन की प्रक्रिया चलती है। इस वाद्य पर कम उम्र के भैंसे (पाडे) का चमड़ा मुख्य रूप से चढ़ाया जाता है। अनेक बार बकरे का मोटा चमड़ा भी मंड दिया जाता है। मंडाव के लिए मेथी अथवा कभी कभी सरेसं का प्रयोग भी होता है। चमड़े के मोटेपन के कारण काफी मात्रा में मेथी को लगाया जाता है। चिपकाने की इस प्रक्रिया पर ध्यान रखा जाता है अन्यथा चमड़ा आसानी से अपना स्थान छोड़ देता है। वादन का आघात भी चंग एवं डफ से अधिक भारवाही होता है। आठ लकड़ियों को कोणात्मक रूप में आकार देने के लिए लकड़ी की पतली कीलों अथवा जोइन्ट्स के जरिये बनाने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। लोहे की कीलें लगाने की बात को घेरा-वादक ठीक नहीं मानते।

घेरे का वादन चंग के वादन से एकदम भिन्न प्रकार का होता है। घेरे की एक लकड़ी के भाग पर रस्सी का हुक बना होता है जिसे वादक अपने बांये हाथ में ग्रहण कर लेता है। घेरा इस हाथ की पकड़ से झूल जाता है और तब दाहिने हाथ के डंडे से इस पर आघात किया जाता है। आघात चमड़े के मध्य भाग पर ही होता है। इस वाद्य का डंडा भी सामान्य नहीं होता है। आघात करने वाले भाग पर कपड़ा लिपटा रहता है। यह लपेट गोलाकृत होती है। वादन की इस प्रक्रिया के कारण गंभीर घोष की प्राप्ति होती है।

घेरे के स्वरूप एवं वादन की उपरोक्त विधा को सामने रखने पर स्पष्ट हो जाता है कि इस वाद्य में लयकारी उत्पन्न करने की सुविधा प्राप्त नहीं हो सकती। प्रथम तो यह एक-मुख वाद्य है और उस पर एक ही हाथ के डंडे से आघात किया जाता है। यह आघात काल-क्रम अथवा विशिष्ट अन्तराल पर ही संभव है और अन्य किसी भी प्रकार के पाठाक्षर निकालने की सुविधा प्रदान नहीं कर सकती। यही कारण है कि घेरा केवल एक संगत वाद्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

घेरे का वादन मुख्यतया तासे के साथ होता है। तासे को पतली वांस की खपच्चियों से बजाया जाता है और उसमें विभिन्न लयकारी के पाठाक्षरों को निकालने की क्षमता होती है। किन्तु तासे से निःसृत ध्वनि ऊंची होती है और इसलिए नर-रूप में गंभीर घोष की सहायता आवश्यक बन जाती है। सांगीतिक दृष्टि से घेरा इसी रिक्तता को पूर्ण करता है अर्थात तासे के चंचल एवं निश्चित काल-क्रम के लयात्मक पाठाक्षरों के अनुरूप घोष पूर्ण आघात के साथ घेरा मुख्य बांट को व्यक्त करता चलता है। घेरे से तासे का वादन सौन्दर्य बढ़ जाता है। साथ ही यह स्पष्ट है कि विपरीत घेरे का स्वतंत्र वादन संभव नहीं बनता। घेरा अपने आपमें केवल एक 'बीट' मात्र प्रदान कर सकता है।

इस वाद्य के अन्य प्रयोगों पर अभी सामग्री एकत्रित की जानी शेष है। संभव हो कि कुछ अन्य क्षेत्रों में इसके विभिन्न वादन रूप प्राप्त हों। सभावना यह भी दिखाई देती है कि इसके नामकरण में भी विभेद हो। केवल मेवाड़ क्षेत्र में ही 'घेरा' नाम प्राप्त होता है। इस प्रश्न पर भी सामग्री एकत्रित की जानी है कि यह वाद्य किस प्रकार मुसलमानों में ही प्रचलित रह गया है।

किन्तु इतनी बात स्पष्ट है कि यह आघात से बजने वाला एक-मुख अवनद्ध वाद्य है और जिसका प्रमुख प्रयोजन संगत-वाद्य की आवश्यकता को परिपूरित करना है।

खंजरी

संपूर्ण भारत में खंजरी के अनेकानेक छोटे बड़े रूप प्राप्त होते हैं और विभिन्न प्रदेशों में भिन्न भिन्न सामग्रियों से उसे बनाया जाता है। कहीं लकड़ी का घेरा रहता है तो कहीं मिट्टी से बना बर्तन होता है। इसी प्रकार कहीं सरीसृप-वर्ग की चंदन-गो का चमड़ा काम में लिया जाता है, तो कहीं सामान्य बकरे का और कहीं कहीं कछुवे के निचले भाग की खाल उपयोग में ली जाती है। सामान्यतया खंजरी संपूर्ण भारत में प्रचलित है। इसी वाद्य को महाराष्ट्र में दफड़ी या डिमडी एवं आसाम में डगर कहा जाता है। अन्य सभी क्षेत्रों में खंजरी नाम ही सर्वाधिक प्रचलित है।

राजस्थान में खंजरी के अनेक आकार-प्रकार प्राप्त होते हैं। तीन इंच से लेकर पांच-छ: इंच तक से लकड़ी के बने घेरे प्राप्त होते हैं। इन घेरों को खैराद की टेकनीक से निकाला जाता है। ये घेरे विभिन्न शक्लों के होते हैं। बड़े घेरे तो बेलनाकार होते है अथवा घेरे पर एक गोलाई-सी रहती है। किन्तु छोटी गोलाई के घेरों में खुला हुआ भाग अधिक बड़ा और चमड़े के मंडाव का भाग कुछ छोटा होता है। अर्थात इसमें टेपरिंग रूप मिलता है।

बड़ी खंजरी पर बकरे की पतली खाल का प्रयोग किया जाता है और छोटी खंजरी पर नियमित रूप से चंदन-गो के चमड़े को लगाया जाता है। चग की भांति ही इन चमड़ों को मेथी के आटे से चिपकाया जाता है। खंजरी में चमड़े के तनाव को कम ज्यादा करने अर्थात उसकी तारता को परिवर्तित करने की सुविधा नहीं रहती।

राजस्थान में प्राप्त अनेक खंजरियों पर पीतल या लोहे के झांझ भी लगे हुए मिलते हैं। मुख्यतया बड़ी खंजरियों के लकड़ी के घेरे में छेद किये जाते हैं और ठीक बीच में क्रमानुसार दो या तीन झांझों को कील के सहारे अनुरणन के लिए लगा देते हैं। बड़ी खंजरी पर इस प्रकार के झांझ पांच-सात जगहों पर रहते हैं। छोटी खंजरियों पर केवल एक या दो ही झांझों को लगाने की व्यवस्था रहती है। साथ ही साथ छोटी खंजरियों के एक भाग पर कभी कभी छोटे घुघरुओं का झूमका भी लगा दिया जाता है। खंजरी के साथ झांझों एवं घुघरुओं का विशिष्ट प्रयोग बराबर मिलता है। किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि प्रत्येक खंजरी पर झांझ या घुंघरु लगाये ही जाते हों। स्पष्ट है कि झांझ व घुंघरु के प्रयोग द्वारा खंजरी के वादन में एक अन्य ध्वनि का लयात्मक स्वरूप भी प्राप्त होने लगता है।

खंजरी को वादन की दृष्टि से बांये हाथ की मुट्ठी में पकड़ लिया जाता है और वादक अपने दाहिने हाथ से उसका वादन प्रारंभ करता है। वादन में प्रमुख आघात अगुलियों से

किया जाता है किन्तु उसी के साथ विभिन्न पाठाक्षरों या बोलों को प्राप्त करने के लिए हथेली के मध्य के उभरे भाग अथवा पूर्ण हथेली का आघात भी निरन्तर किया जाता है। कभी कभी अंगूठे की वजनदार घसीट के साथ मींड जैसा आभास भी प्रदान किया जाता है। झांझों के साथ बजने वाली खंजरी में यह मींड अत्यंत सुन्दर रूप में प्रयुक्त की जाती है।

राजस्थान में खंजरी का प्रयोग मुख्यतया लोक संगीत के साथ ही प्राप्त होता है किन्तु दक्षिण भारत में यह वाद्य अत्यंत विकसित लयात्मक एवं तालात्मक वाद्य के रूप में मिलता है। वहां खंजरी के वादन-रूप ने शास्त्रीयता की नियमित श्रेणी प्राप्त करली है। चंग-शृंखला के वाद्यों में यही एक ऐसा वाद्य है जिस पर अंगुलियों के आघात के कारण विभिन्न लय-ध्वनियों को निकाला जा सकता है और यही कारण है कि इस पर खूब पेटर्न्स भी बनाये जा सकते हैं।

इस प्रदेश में खंजरी का वादन मुख्य रूप से कालबेलियों अथवा जोगियों में प्राप्त होता है। वस्तुतः यह जाति घुम्मकड़ है और यह उन्हीं का अपना विशिष्टतम वाद्य है। अन्य जातियों या क्षेत्रों में खंजरियों का प्रयोग नगण्य-सा है। कालबेलिया जाति के लोग सांप को पालने वाले होते हैं। यों इनमें एक विभाग उस उप-जाति का भी है जो आटा पीसने की घट्टियों को टांचने का कार्य करती है। यह उप-जाति सर्प-दर्शन अथवा अन्य खेलों पर निर्भर नहीं रहती। इसी प्रकार बन्दर, भालू आदि पशुओं को पालने वाले मदारियों के पास भी खंजरी प्राप्त हो जाती है। इसी जाति के बृहत्तर रूप को सामने रखते हैं तो ये लोग स्वयं को जोगी ही कहते हुए मिलते हैं। भगवे रंग का वस्त्र और भगवा ही साफा इनके पहिनावे की विशिष्टता है।

लोक संगीत की दृष्टि से जोगी एवं इसी की समानान्तर अन्य घुम्मकड़ जातियां [यथा सांसी, कंजर, नट आदि] अत्यंत उन्नत हैं। इनकी अपनी विशिष्ट गायन शैली एवं गीतों के विशिष्ट रूप हैं। यही एक ऐसी जाति है जिसमें अनेकानेक प्रेमाख्यान प्रचलित हैं। इसका एक प्रमुख कारण भी है। जोगियों में एक नियम है कि यदि किसी अन्य जाति का व्यक्ति जोगी महिला से विवाह करने का प्रस्ताव रखता है तो उसे जोगी जाति का बनना पड़ता है। इस जाति-परिवर्तन की आवश्यकता तभी पड़ती है जब प्रेम और आस्था का बंधन, अन्य सामाजिक नियमों के बंधनों को तोड़ देता है। ऐसी प्रत्येक घटना को इस जाति के लोगों ने अपने गीतों में बांध दिया है। ये गीत बड़े उत्साह एवं गीतात्मक सौन्दर्य के साथ गाये जाते हैं।

इस जाति के गीतों का लयात्मक स्वरूप खंजरी के वादन के लिए खूब मौका प्रदान करता है। गीतों की प्रत्येक धुन पर नृत्य भी संभव रहता है क्योंकि उसका चलत-रूप नृत्या-नुगत ही होता है। इस स्थिति के कारण खंजरी के साथ नृत्य भी जुड़ जाता है। कभी तो

खंजरी-वादक केवल वादन ही करता है और अन्य साथी (पुरुष या स्त्री) नाचते हैं और कभी वह स्वय भी खंजरी वादन के साथ नृत्य भी करता है। यह नृत्य हर समय सामूहिक नहीं होते। एक व्यक्ति भी विभिन्न अंग भगिमाओं के साथ खंजरी के लयानुसार नृत्य करता है। कभी कभी दो तीन व्यक्ति एक साथ खजरी लेकर सामूहिक रूप से भी नाचने लगते हैं। ऐसे नृत्यों में विशेष कथात्मक या तारतम्यपूर्ण अंग-संचालन की क्रिया निहित नहीं रहती। सहज आनद और उमंग का ही प्रतिफलन होता है।

खंजरी का उपयोग गीतों के साथ भी निरन्तर प्राप्त होता है। सामान्यता गीत के साथ तो मुख्य वजन का वादन किया जाता है किन्तु गीत की कड़ी के रुकने पर खंजरी से सुन्दर बोलों को निकालने का क्रम प्रारंभ होता है। गीत की कड़ी पर पुनः खंजरी से मुख्य वजन को ही प्राप्त किया जाता है।

कालबेलियों का अन्य प्रमुख वाद्य है : पुंगी। पुंगी एक सुषिर वाद्य है और जोगियों की अपनी जातिगत दूसरी विशिष्टता है। अर्थात खंजरी का वादन पुगी के साथ भी प्रमुखतम रूप से देखा जा सकता है। इस सुषिर-वाद्य के विषय में अन्यत्र लिखा जायेगा। यहां केवल इतना हो संकेत देना पर्याप्त होगा कि खजरो एक ओर स्वतंत्र वाद्य की क्षमता रखता है तो दूसरी ओर वह सुषिर वाद्य की संगत भी करता है; तीसरी ओर नृत्यानुगत रूप में प्राप्त होता है तथा चौथी ओर वह गीतानुगत भी है। चंग श्रेणी के वाद्यों में सांगीतिक रूप से सबसे उन्नत लयात्मक वाद्य खजरी ही है। इस वाद्य में विकसित होने की अपार क्षमता है।

गाळियां : ब्याइयों के परिहासमूलक गीत

—कोमल कोठारी

गाली शब्द का सीधा अर्थ है किसी व्यक्ति के प्रति कलंकपूर्ण उक्ति का कथन किया जाना अथवा किसी अपशब्द का प्रयोग किया जाना। गाली वस्तुत: एक संबोधन है जो अशिष्ट व्यवहार अथवा भाषा का अंग है। किंतु ठीक यही गाली अपने प्रयोग के स्थान के साथ कभी कभी कलंक, अपशब्द एवं अशिष्ट अश्लीलता से परे भी उठ जाती है। सामान्य जन-जीवन में रोजमर्रा की बोल-चाल के साथ गालियों की बौछार जिस महज रूप में प्राप्त होती है, उससे कभी कभी यह भी महसूस होने लगता है कि कुछ गालीपूर्ण संबोधन तो हमारे व्यवहार या स्वभाव के अंग ही बन गये हैं और उनके उच्चारण से सामान्यतया बुरा महसूस नहीं होता। फिर भी गाली तो गाली ही रहती है। शिष्टता के आचार-विचार से गाली को हेय ही माना जाता है। परन्तु अनेक बार गाली आपके निकटतम व्यवहार अथवा आत्ममुक्त संबंधों की परिचायक भी बन जाती है।

शब्द एव उसमें व्यक्त भाव के अनुसार गाली के संबोधन-रूप को दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है। एक तो वे गालियां जो एकदम अश्लील होती हैं और कलंकपूर्ण सबंधों की स्थापना की सूचना देती हैं एव दूसरी प्रकार की वे गालियां हैं जो अशिष्ट तो हैं किन्तु उनमें अश्लीलता नहीं है। अशिष्ट संबोधनवाली गालियों का प्रयोग तो हर समय सुना जा सकता है। शब्द से आगे बढ़कर गालियां कभी कभी पूरे वाक्य का रूप भी ले लेती हैं।

किन्तु लोक गीतों में जिस विशिष्ट गीत प्रकार को 'गाली' की संज्ञा दी जाती है, वह एक भिन्न सत्ता है। इन गीतों को सामान्य गाली के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। गाली का केवल इतना ही अर्थ इन गीतों में लिया जा सकता है कि इनमें कुछ

व्यंगात्मक एवं संकेतात्मक उक्तियों के द्वारा हास्यात्मक स्थिति का चित्रण किया जाता है। इन गीतों में गाली का अंश इतना ही है कि विवाह के दौरान में बने नये सगे-संबधियों पर कुछ व्यंग कसे जांय।

राजस्थान के पारिवारिक संबंधों को व्यक्त करने वाले विशिष्ट नामों में 'ब्याई' शब्द का अपना एक अर्थ है। इसी रिश्ते को सगे-सगी अथवा गिनायतों के नाम से भी संबोधित किया जाता है। ब्याई शब्द पुल्लिग है और इसका स्त्रीलिंग ब्याण होता है। ब्याई के रिश्ते को समझने के लिए हमें अपने परिवार के ढांचे को देखना पड़ेगा। वर के परिवार के सभी सामान्य सदस्य वधू के परिवार वालों के लिए ब्याई या ब्याण होंगे। इसी प्रकार वधू के परिवार वाले वर-परिवार के लिए ब्याई-ब्याण होंगे। ये शब्द एक समूहवाची पारिवारिक संबध को व्यक्त करते हैं। यों स्वयं वर के लिए वधू के पक्ष के कुछ रिश्ते सास, स्वसुर, भूवा-सासू, काका स्वसुर आदि कहलाते हैं। उधर वधू के लिए भी इसी प्रकार के रिश्तों के नाम हैं। वर का बड़ा भाई जेठ, छोटा भाई देवर, बहिन नणद, बहिन का पति नणदोई आदि कहलाते हैं। किन्तु इन सभी रिश्तों को दोनों परिवारों के बीच ब्याई-ब्याण के नाम से संकेतित किया जाता है। सगा-सगी का भी यही अर्थ है। एक ही शब्द-रूप में इस रिश्ते को गिनायत भी कहा जाता है।

गाली के गायन और ब्याई-ब्याण के रिश्ते में अविच्छेद्य संबंध है। सभी गालियां इसी रिश्ते को संकेत करके गाई जाती हैं। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि गालियों को गाने का क्रम केवल वधू-पक्ष की महिलाओं में ही प्रचलित है। अर्थात वधू-पक्ष की स्त्रियां वर-पक्ष के रिश्तेदारों पर गाली के गीत गाया करती हैं—इसके विपरीत वर-पक्ष की महिलाएं वधू-पक्ष के संबधियों के लिए गालियां नहीं गाया करतीं। यह स्थिति परिवार के सामाजिक अध्ययन के लिए संभवतया एक महत्वपूर्ण संकेत प्रदान कर सकती है।

इन गालियों के गीतों को गाने के भी विशिष्ट अवसर हैं और इनका प्रयोजन विवाह की मान्यताओं के साथ गुथा हुआ है। सगाई का दस्तूर हो जाने के साथ ही ब्याई-ब्याण का संबध स्थापित हो जाता है और वर के रिश्तेदारों के वधू-परिवार में पहुंचने के साथ ही गालियां गाई जाने लगती हैं। किंतु उनका वास्तविक प्रारंभ होता है विवाह के अवसर पर। वधू-पक्ष की महिलाएं इसी अवसर पर आनन्द एवं उत्साह के साथ ये गीत गाया करती हैं। आमंत्रित महमानों को भोजन पर बिठाने या अन्य किसी अनुष्ठान के अवसर पर गालियों को गाने का क्रम प्रारंभ हो जाता है। विवाह हो जाने के वर्षों बाद तक जब जब जंवाई अपने ससुराल जाता है तब तब पुनः गालियां गाई जाती हैं। यदि जंवाई के साथ उसके कोई रिश्तेदार हों तब तो

गालियों को विशेषरूप से गाये जाने का प्रबन्ध किया जाता है।

गालियों की विषय-वस्तु पर भी कुछ परिचयात्मक विचार करना आवश्यक होगा। प्रधानतया ब्याई एवं ब्याणजी को संबोधित करते हुए उनके रागात्मक संबंधों पर व्यंग्यात्मक विवेचन रहता है। ब्याणजी की उस अकृपा का विशेष वर्णन रहता है जिसमें वे अपने 'पति' महोदय को मूर्ख बनाकर, अपने आनन्द के लिए कहीं और चल देती हैं। ब्याईजी का शरीर, उनकी चाल-ढाल, उनके तौर-तरीके, उनके खान-पान, उनके व्यवहार आदि की असंगतियों को गीत की कल्पना पर आरोपित करते हुए हास्यात्मक परिस्थितियों का निर्माण किया जाता है। लोक गीतों के इन विशेष गीतों में महिलाओं का जो तिक्त व्यंग देखने-सुनने को मिलता है, वह अन्य गीतों में इतना मुखरित होकर अभिव्यक्त नहीं होता। यह भी सही है कि जन-सामान्य में प्रचलित गालियों (गीतों) में सहज संकेत के साथ यौन-संबधों पर भी प्रतीकात्मक रूप से व्यंग किया गया है। किन्तु इस तथ्य को भी नजर-अन्दाज नहीं किया जा सकता कि पेशेवर गायक-जातियों द्वारा गाई जाने वाली गालियों में अधिक स्पष्ट संकेत और अश्लीलता का पुट रहता है।

इन पेशेवर गायक- गायिकाओं की गालियों में एक भाषात्मक तत्व निश्चित रूप से मिलता है। यह तत्व है: एक स्पष्ट अश्लील संकेत के साथ प्रसंग को बदल देने से उसका अश्लीलत्व समाप्त हो जाता है। ऐसी अनेक गालियां भी राजस्थान में प्रचलित मिल जाती हैं। इन विशिष्ट प्रकार की गालियों के अन्यय पर यह भी सहज ही ज्ञात होने लगता है कि गालियों एवं पहेलियों का अन्ततोगत्वा कोई न कोई संबंध है।

प्रस्तुत अंक में गालियों का संग्रह बोरुंदा गांव की भांभी महिलाओं से किया गया है किन्तु ये गालियां केवल इसी जाति में प्रचलित हों, सो बात भी नहीं है। गांव में सभी जातियों में थोड़े हेर फेर अथवा धुन के अन्तर के साथ ये गालियां ज्यों की त्यों मिल जाती हैं। हमारा यह संग्रह सौ से अधिक पहुंच गया है लेकिन प्रस्तुत अंक में कुछ ही उदाहरण प्रकाशित किए जा रहे हैं। चयन करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखने का प्रयत्न किया गया है कि केवल शिष्ट व्यंगात्मक सीमा में आने वाली गालियों को ही चुना जाय।

यों तो लोक साहित्य के अध्ययन में श्लील- अश्लील की मान्यता को लेकर वैज्ञानिक अध्ययन की ओर अग्रसर नहीं हुआ जा सकता किन्तु मासिक पत्र के रूप में संभवतया उस प्रकार की सामग्री प्रस्तुत करना उचित नहीं होगा। सभी गालियां हमारे संग्रह एवं अध्ययन की सामग्री अवश्य हैं और उसे एक समग्र अध्ययन के रूप में पृथक से प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जा सकता है। विवाह के अवसर पर गाई जाने वाली पहेलियों में भी ऐसे सांके-

तिक विषयों का जन-समाज में तो सहज समाहार हो जाता है किन्तु लिखित रूप में उन्हें व्यक्त करने में संकोच होता है।

इतना कहने के बाद भी, एक बात स्पष्टत: समझनी होगी कि गीतों में गाई जाने वाली गालियां चाहे कैसी भी क्यों न हों, वे निश्चित रूप से मनुष्य के अपने आत्ममुक्त जीवन, पूर्वाग्रहों से स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं संख्यातीत वर्जनाओं की शृंखलाओं को तोड़ देने वाली सामाजिक उक्तियां अवश्य हैं। और उक्तियां भी समाज के उस अंश की जो 'महिलाओं' के नाम से जाना जाता है जिनकी जीवन-प्रणाली पर कितने ही कृत्रिम बंधनों का पहरा लगा रहता है। गालियां वस्तुत: महिलाओं की अपनी सामूहिक भावना और चेतना को समझने में संभवतया सबसे शक्तिशाली माध्यम बन सकती हैं।

गालियों के गीतों को राजस्थान में 'सीठणों' के नाम से भी जाना जाता है। इन सीठणों के संगीतात्मक गठन के विषय में एक संकेत देना अत्यंत आवश्यक है। छोटे छोटे छंद-रूप एवं तुकों के वजन के कारण गीत का लय-रूप अत्यंत सुन्दर बन जाता है। साथ ही साथ धुनों का जितना वैविध्य विभिन्न गालियों में प्राप्त होता है, उतना वैविध्य अन्य विशिष्ट अवसरों के गीतों में प्राप्त नहीं होता। हमने गत माह होली संबंधी गीत-विशेष (लूरों) को प्रकाशित किया था। उनकी धुनों में केवल दो ही रूप प्राप्त थे किन्तु प्रस्तुत गालियों को धुनों की दृष्टि से देखने पर विविधता का अन्दाज सहज ही हो जाता है। गालियां अपने संगीतात्मक गठन के लिए अन्य अवसरों के गीतों की धुनों को भी सहज ही स्वीकार कर लेती है। पेशेवर गायक जातियों की गालियों का संगीतात्मक वैभव तो निश्चित रूप से अत्यंत विकसित अवस्था में प्राप्त होता है। सामान्य महिलाओं के सामूहिक गायन में किसी प्रकार का वाद्य उपयोग में नहीं आता।

बहुत संभव है कि गालियों अथवा सीठणों का अध्ययन हमें वर्तमान वैवाहिक अनुष्ठानों के बीच से अति-प्राचीन पारिवारिक संबंधों पर नवीन रूप से सोचने के लिए भी संकेत प्रदान कर पाये। इस दृष्टि से इनका विवेचन किया जाना भी आवश्यक महसूस होता है।

गाळियां : ब्याइयों के परिहासमूलक गीत

१ — किशांजी रै काढ़यौ रे
घी रौ मालपुवौ
किणांजी रै रांधी दाळ
घी रौ मालपूवौ
ब्याहीजी रै काढ़चौ रे
घी रौ मालपुवौ
ब्याहीजो रै रांधो दाळ
घी रौ मालपुवौ
ओ कैमें काढ़चौ रे
घी रौ मालपुवौ
आ कैमें रांधी दाळ
घी रौ मालपुवौ
कढ़ायां काढ़चौ रे
घी रौ मालपुवौ
तोलड़ियां रांधी दाळ
घी रौ मालपुवौ
औ मीठौ लागै रे
घी रौ मालपुवौ

शब्दार्थ : काढ़चौ—तला । कढ़ायां—कढ़ाइयों में । तोलड़ियां—पीतल का बर्तन ।

आ चरकी लागै दाळ
घी रौ मालपुवौ
घूंघट में खायगी रे
घी रौ मालपुवौ
घाबळियै में ढुळगी दाळ
घी रौ मालपुवौ

२— पोळी तौ म्हैं पोय'र आवा
जीमणिया री बेळा म्हैं तौ जाय जीमां
डरपौ मती रे
वावा डरपौ मती
जावतां ब्याहीजीवाळी नै ले जास्यां
डरपौ मती रे

म्हैं तौ म्हारा घर रा अेक अेक आया
थांरी छाती क्यूं धड़कै
डरपौ मती रे
वावा डरपौ मती
जावतां ब्याहीजीवाळी नै ले जास्यां
डरपौ मती रे

आलपाल री भाजी रे रांधी
आलण क्यूं मिसरी रौ
डरपौ मती रे
वावा डरपौ मती
जावतां ब्याहीजीवाळी नै ले जास्यां
डरपौ मती रे

शब्दार्थ : घाबळियौ — घाघरा। **पोळी**—चपाती। **पोय** — पका कर। **आलपाल** — हरी सब्जी। **आलण**—खीच के साथ मिलाई जाने वाली दाल।

हो़को तौ म्हें भर भर लाया
चिलमिया री बेळा म्हैं तौ जाय पीलां
डरपौ मती
वावा डरपौ मती
जावतां ब्याहीजीवाळी नै ले जास्यां
डरपौ मती रे
ढोलियो तौ म्हें ढाळर आया
पोढ़णिया री बेळा म्हें तौ जाय पौढ़्या
डरपौ मती रे
वावा डरपौ मती
जावतां ब्याहीजीवाळी नै ले जास्यां
डरपौ मती रे

३ — ब्याहीजीवाळी मैं लातां म्हानै घड़ी दोय लागी
रात अंधारी डेरा बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे
म्हारा गढ़पतिया राजन रा डेरा
बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै
ब्याहीजीवाली नै लातां म्हांनै घड़ो दोय लागो
रात अंधारी डेरा बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया

शब्दार्थ : ढोलियो—पलंग। पोढ़णिया की वेळा—सोते समय। अमराव वांणी—शिष्ट वाणी।

अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे
म्हारां लखपतिया राजन रा डेरा
बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे

अे तेवटियो घड़ातां म्हांनै घड़ी दोय लागी
रात अंधारी डेरा बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे
म्हारा लळत्रळिया राजन रा डेरा
बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे

बाड़लियो घड़ातां म्हानै घड़ी दोय लागी
रात अंधारी डेरा बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया
अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे
म्हारा लखपतिया राजन रा डेरा
बाग में रे मोरिया
बाग में रे मोरिया

शब्दार्थ : तेवटियो — गले का गहना । **बाड़लियो** — गले का गहना ।

अमराव वांणी बोलै
सिरदार वांणी बोलै रे

४— ओ ब्याहीजीवाळी नै न्हैंकौ रे मोटर मांय
जेळू नै न्हैंकौ मोटर मांय
मोटर राय रंगीली रे
मोटर छैल छत्रीली रे
जेळू रा आयला जी रोवै रे
जेळू रा भायला जी रोवै रे
जेळू रौ भंवर बिलखतौ जाय
जेळू रौ छैल बिलखतौ जाय
बाबौ भली विचारी रे
स्यांमी भली विचारी रे

५— ब्याहीजीवाळी नै भावै मसूरिया री दाळ
जेळू नै भावै मसूरिया री दाळ
थोड़ी खाई अे लाटालेणी मसूरिया री दाळ
थोड़ी खाई अे लाटालेणी मसूरिया री दाळ
थारै पेट मांही आंऊं बोलै, म्यांऊं बोलै
तीतर बोलै कबूतर बोलै
टप्पटपाड़ौ लेई अे लाटालेणी मसूरिया री दाळ
थोड़ी खाई अे लाटालेणी मसूरिया री दाळ

६— ब्याहीजीवाळी नै भंवळ पड़ी रे भंवळ पड़ी रे
गऊवां रौ ओ गुळलपटौ
थारी बिणजांणूं गुळलपटौ

शब्दार्थ : **न्हैंकौ**—पटकना। **जेळू**—समधिन का सम्बोधन। **भंवर**—पति। **छैलौ**—प्रेमी। **स्यांमी**—भगवान। **टप्पटपाड़ौ**—गर्भ का बालक। **भंवळ**—चक्कर खाकर गिरना।

भावै रे ओ गुळलपटौ

थारी बिणजांणूं रै गुळलपटौ

रे गुळलपटौ सदैई मीठौ

थारी बिणजांणूं रै गुळलपटौ

७— च्यारूं डाळ नींबड़ा रा जी भागा

रंगियोड़ी बूंटी रे

लाधोड़ी बूंटी रे

चूंचा ले गिया

चूंचा ले गिया

रंगियोड़ी बूंटी रे

लाधोड़ी बूंटी रे

चूंचा ले गिया

ब्याहीजीवाळी लाडली नींबड़ा पर बैठी

च्यारूं डाळा नींबड़ा रा जी भागा

लाधोड़ी बूंटी रे

रंगियोड़ी बूंटी रे

चूंचा ले गिया

ब्याहीजीवाळी लाडली ओरा पर बैठी

च्यारूं पाट ओरा रा जी भागा

लाधोड़ी बूंटी रे

रंगियोड़ी बूंटी रे

चूंचा ले गिया

शब्दार्थ : चूंचा—चोर, भंगी। लाधोड़ी—मिली हुई। ओरा—मकान के भीतर का कमरा।

८ — किरण्यारा रे ब्याण रे छतियां पर मंड़ रही मोरणी
किरण्यारा रे म्हारौ भंवर बादीलौ निरखै मोरणी
किरण्यारा रे ब्यांण रे गालां पर मंड रही मोरणी
किरण्यारा रे म्हारौ छैल बादीलौ निरखै मोरणी
किरण्यारा रे ब्यांण रै धाबळ पर मंड रही मोरणी
किरण्यारा रे म्हारौ छैल बादीलौ निरखै मोरणी
किरण्यारा रे ब्याई रै मूंछां पर मंड रही मोरणी
किरण्यारा रे म्हारौ छैल बादीलौ निरखै मोरणी
किरण्यारा रे ब्याई री धोती पर मंड रही मोरणी
किरण्यारा रे म्हारौ छैल बादीलौ निरखै मोरणी

९ — हाथ मांही आंनौ
उणनै लेग्यौ नांनौ
चली आजा म्हारी ब्यायण रेल में बैठाणूं
मोटर हक जासी

हाथ मांही किरण्यौ
लेग्यौ उणनै परण्यौ
चली आजा म्हारी ब्यायण रेल में बैठाणूं
मोटर हक जासी

हाथ मांही कादौ
लेग्यौ उणरौ दादौ
चली आजा म्हारी ब्यायण रेल में बैठाणूं
मोटर हक जासी

शब्दार्थ : किरण्यारा—छतरी वाला आदमी। भंवर बादीलौ, छैल बादीलौ—हठीला प्रेमी। हक जासी—रवाना हो जायगी। कादौ—कीचड़। किरण्यौ—छतरी।

हाथ मांही आकौ
लेग्यौ उणनै काकौ
चली आजा म्हारी ब्यायण रेल में बैठाणूं
मोटर हक जासी

१० — आळा में पड़ियौ सूत जी म्हैं घर चाल्या
ब्यायां नै लागौ भूत जी म्हैं घर चाल्या
आळा में पड़ियौ साबू जी म्हैं घर चाल्या
ब्यायां नै लागौ पाबू जी म्हैं घर चाल्या
आळा में पड़ियौ पाव जी म्हैं घर चाल्या
ब्यायां नै लागौ ताव जी म्हैं घर चाल्या
आळा में पड़ियौ गेरू जी म्हैं घर चाल्या
ब्यायां नै लागौ भेरूं जी म्हैं घर चाल्या
आळा में पड़ी सूई जी म्हैं घर चाल्या
ब्यायां ने लागी बूई जी म्हैं घर चाल्या

शब्दार्थ : आकौ—तकली। पाबूजी—राजस्थान के देव पुरुष। गेरू—लाल मिट्टी। भेरूं—देवता विशेष। बूई—एक झाड़ विशेष।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

शोध, सन्दर्भ एवं दुर्लभ्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का
राजस्थान पुरातन ग्रंथमाला के अंतर्गत प्रकाशन

प्रकाशित ग्रंथों की सूची

राजस्थानी - हिन्दी

प्रकाशन नाम	सम्पादक	मूल्य — रुपये.
कान्हड़दे प्रबंध	प्रो० के० बी व्यास	१२. २५
क्यामखां - रासा	डा० दशरथ शर्मा अगरचंद और भंवरलाल नाहटा	४. ७५
लावा - रासा	श्री महताब चन्द खारेड़	३. ७५
बांकीदास री ख्यात	श्री नरोत्तमदास स्वामी	५. ५०
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग १	श्री नरोत्तमदास स्वामी	२. २५
राजस्थानी साहित्यसंग्रह भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
कवीन्द्र - कल्पलता	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	२. ००
जुगल विलास	रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत	१. ७५
भगत - माळ	श्री उदयराज उज्जवल	१. ७५
राजस्थान पुरातत्त्व मंदिर के हस्तलिखित ग्रंथों की सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	७. ५०
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान हस्तलिखित ग्रंथों की सूची भाग २	श्री गोपालनारायण बहुरा	१२. ००
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग १	पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य	४. ५०
राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथ सूची भाग २	डा० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया	२. ७५
स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रंथ संग्रह सूची	श्री गोपालनारायण बहुरा	६. २५
मुहता नैणसी री ख्यात भाग १	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग २	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	६. ५०
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ३	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ००
मुहता नैणसी री ख्यात भाग ४	श्री बदरीप्रसाद साकरिया	८. ७५
राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग ३	श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी	५. ५०
सूरजप्रकाश भाग १	श्री सीताराम लाळस	८. ००
सूरजप्रकाश भाग २	श्री सीताराम लाळस	६. ५०
सूरजप्रकाश भाग ३	श्री सीताराम लाळस	६. ७५
नेहतरंग	श्री रामप्रसाद दाधीच	४. ००
मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन	डा० मोतीलाल गुप्त	७. ००

पुस्तक विक्रेताओं को २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है

[राजस्थान सरकार द्वारा प्रसारित]

सार्वजनिक संपर्क कार्यालय द्वारा प्रसारित—सं.। विज्ञा.। डी। ५५६। ६७। —बी.

चित्र सज्जा	सानि गोस्वामी
मुद्रक	रूपायन प्रेस
प्रकाशक	रूपायन संस्थान , बोरुन्दा
	बरास्ता — पीपाड़ [जोधपुर]
मूल्य	एक प्रति १ रुपया
	वार्षिक १२ रुपया

रूपायन संस्थान के प्रकाशन

लोक कथा

१. बातां री फुलवाड़ी [नौ भाग प्रकाशित]
बीस भागों में संपूर्ण करने की योजना

प्रति भाग १५. ०० रुपया

२. तीडोराव [बड़ी लोक कथा पर आधारित लोक उपन्यास]

प्रति पुस्तक १. ५० रुपया

३. नाहर सिंह—बच्छराज सिंह [तीन कथाओं का छोटा संग्रह]

प्रति पुस्तक २. ०० रुपया

४. अनोखा पेड़ [हिन्दी में लिखित पशु-पक्षी संबंधी कथाएं]

प्रति पुस्तक ६. ७५ रुपये

राजस्थानी कविता

५. राधा [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपया

६. दीवा कांपै क्यूं [सत्य प्रकाश जोशी द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

७. चेत मांनखा [रेवत दान द्वारा रचित]

प्रति पुस्तक ४ रुपया

अनुवाद

८. बाम्बी [वाल्ट डिजने का राजस्थानी अनुवाद]

प्रति पुस्तक २. ५० रुपये

विवेचन

९. राजस्थान का लोक साहित्य [नानूराम संस्कर्ता द्वारा लिखित]

प्रति पुस्तक १५. ०० रुपये